*1 जुलाई 2009 से 30 जून 2010 तक **

भाग एक : अर्थव्यवस्था : समीक्षा तथा संभावनाएं

II आर्थिक समीक्षा

वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में भारतीय अर्थव्यवस्था में जो मंदी शुरू हुई थी, उसमें 2009-10 की दूसरी छमाही में व्यापक आधार वाली रिकवरी (समुत्थान) दिखाई पड़ी। क्षीण मानसून और अस्थिर वैश्विक समुत्थान के बावजूद, भारत ने 2009-10 में सकल देशी उत्पाद में 7.4 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की, जो विश्व की उच्चतम वृद्धियों में से एक है। स्थूल आर्थिक नीतियों का ध्यान समुत्थान के प्रबंधन पर केंद्रित रहा। विस्तारकारी राजकोषीय रुख के कारण वृद्धि पर मंद निजी उपभोग तथा निवेश संबंधी मांग के प्रभाव को प्रतितुलित करने में सहायता मिली। रिज़र्व बैंक के निभावात्मक मौद्रिक नीतिगत रुख से, राजकोषीय योजनाओं के बाधारहित वित्तपोषण में तो सहायता मिली ही, इसके साथ ही समग्र चलनिधि तथा ब्याज दर की ऐसी परिस्थिति भी उत्पन्न हुई जो वृद्धि में सहायक थी। भारत की मजबूत वित्तीय प्रणाली का समग्र कारोबारी विश्वास पर अनुकूल प्रभाव पड़ना जारी रहा और इसके साथ ही एक और मजबूत समुत्थान के लिए वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु बैंकों, गैर-बैंकों और बाजारों से संसाधनों की उपलब्धता भी सुनिश्चित हुई। तथापि, वर्ष के दौरान स्फीतिकारक परिस्थितियों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ। वर्ष की पहली छमाही के दौरान कमज़ोर रहने के बाद, दूसरी छमाही में हेडलाइन मुद्रास्फीति में वृद्धि हुई जिसका कारण प्रारंभ में उच्च खाद्य मूल्य थे, परंतु बाद के महीनों में यह अधिक सामान्यीकृत हो गई। मुद्रास्फीति पर नियंत्रण रखते हुए वृद्धि को समर्थन देने संबंधी नीतिगत दुविधा के कारण नीतिगत लक्ष्यों की प्राथमिकता का पुनर्निर्धारण करना पड़ा। वृद्धि में मजबूत और व्यापक समुत्थान से मौद्रिक नीति संबंधी उत्प्रेरणा को क्रमिक रूप से अनवाइंड करने के लिए आवश्यक गुंजाइश पैदा हुई। दूसरी छमाही में, मध्यावधि वृद्धि, मुद्रास्फीति तथा वित्तीय बाजार परिस्थितियों के लिए उच्च राजकोषीय घाटे के संभाव्य प्रतिकूल प्रभाव को देखते हुए राजकोषीय समेकन के मार्ग पर शीघ्र ही लौटने की जरूरत सामान्यतः स्वीकार की गयी। तदनुसार, 2010-11 के लिए केंद्रीय बजट में क्रमिक राजकोषीय निकासी की प्रक्रिया प्रारंभ करने के लिए योजनाओं की घोषणा की गयी। वर्ष के अंत तक, ग्रीस में सरकारी ऋण संकट के कारण यूरो क्षेत्र में हुई गतिविधियों ने मध्यावधि में मजबूत वृद्धि को बनाये रखने के लिए, समायोजन की गुणवत्ता पर बल देते हुए, सामयिक राजकोषीय निकासी की आवश्यकता और महत्ता को रेखांकित किया।

II.1.1 वर्ष के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था में समुत्थान की गति में तेजी दिखायी पड़ी और 2009-10 में 7.4 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी। वैश्विक संकट की अनुक्रिया में अपनाए गए विस्तारकारी मौद्रिक और राजकोषीय रुख ने भी समुत्थान की प्रक्रिया में अंशदान किया। निजी निवेश मांग में वृद्धि होने से, विशेषकर 2009-10 की अंतिम तिमाही तक, समुत्थान क्रमिक रूप से स्वतःधारणीय बन गया। इससे नीतिगत निकासी का प्रारंभ करने के लिए उचित परिस्थितियां पैदा हो गईं। इसके अतिरिक्त, वर्ष की दूसरी छमाही में हेडलाइन मुद्रास्फीति की दिशा उल्लेखनीय रूप से बदल गयी और वह वर्ष की पहली छमाही के अधिकांश महीनों में लगभग शून्य अथवा ऋणात्मक से बढ़कर वर्ष के अंत तक 11 प्रतिशत हो गयी। इस प्रकार, परिवर्तित हो रहे उत्पादन मुद्रास्फीति मार्ग के कारण, मौद्रिक नीति संबंधी उत्प्रेरणा को वापस लेना आवश्यक हो गया। तदनुसार, नीतिगत ध्यान क्रमिक रूप से ''संकट के प्रति अनुक्रिया'' से बदलकर ''रिकवरी के प्रबंध'' की ओर चला गया।

II.1.2 देशी निजी उपभोग मांग तथा वैश्विक आर्थिक तथा वित्तीय परिस्थितियों की रिकवरी की दृढ़ता के बारे में अनिश्चितता बनी

रहने के कारण। वर्ष के दौरान मौद्रिक नीति संबंधी कार्रवाइयों के समय एवं रुख को सतर्कतापूर्वक सुविचारित किया जाना था हालांकि 2010-11 की पहली तिमाही तक, निजी निवेश मांग में मजबूत वृद्धि के स्पष्ट संकेत दिखने शुरू हुए, लेकिन यूरो क्षेत्र में सरकारी ऋण को लेकर चिंता से वैश्विक समुत्थान के स्थायित्व पर प्रश्नचिह्न लग गया। लेकिन वृद्धि में समुत्थान की अंतर्निहित गति जारी है। रिज़र्व बैंक ने यह सुनिश्चित किया कि मुद्रास्फीति पर नियंत्रण रखते हुए भी मौद्रिक और वित्तीय परिस्थितियां समुत्थान में सहायता करती रहें।

II. वास्तविक अर्थव्यवस्था

II.1.3 वास्तविक सकल देशी उत्पाद में 2008-09 में हुई 6.7 प्रतिशत की वृद्धि की तुलना में 2009-10 में 7.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वैश्विक संकट से पूर्व 2003-08 में 8.9 प्रतिशत औसत वार्षिक वृद्धि संबंधी उच्च वृद्धि के दौर को देखते हुए, इसमें और भी वृद्धि होने की संभावना है। आघात-सह सेवा क्षेत्र के साथ-साथ औद्योगिक क्षेत्र में मजबूत समुत्थान के कारण समग्र उत्पादन पर क्षीण दक्षिण-पश्चिमी मानसून का प्रभाव नहीं के बराबर रहा। समग्र वृद्धि में औद्योगिक क्षेत्र का योगदान 2008-09 के 9.5 प्रतिशत की तुलना में तीव्र गति से बढ़कर 2009-10 में 28 प्रतिशत हो गया (चार्ट II.1क, ख)।

II.1.4 राजकोषीय उत्प्रेरणा को आंशिक रूप से हटा लेने पर और 2008-09 में छठे वेतन आयोग के पंचाट के अधीन विशाल बकाया राशियों का भुगतान करने के आधार प्रभाव की वजह से अनिवार्यतः ''सामुदायिक, सामाजिक तथा वैयक्तिक सेवा क्षेत्र'' के कारण सेवा क्षेत्र में वृद्धि 2008-09 के 9.3 प्रतिशत की तुलना में कम होकर 2009-10 में 8.3 प्रतिशत रह गयी।

II.1.5 वर्ष की दूसरी छमाही में सामान्यीकृत मुद्रास्फीति बढ़ जाने के संदर्भ में, स्थूल स्तर पर क्षमता संबंधी बाधाओं के संबंध में मांग संबंधी दबावों का अर्थपूर्ण जायजा लेने हेतु, नीतिगत निकासी के संबंध में निर्णय लेने के लिए वैश्विक संकट के बाद संभावित उत्पादन एक महत्वपूर्ण परिवर्ती के रूप में उभरा। हालांकि, संकट से प्रभावित देशों का विगत अनुभव यह सुझाता है कि उनमें से कई देशों को संभावित उत्पादन में हानि उठानी पड़ी, लेकिन चूंकि भारत देश के भीतर वित्तीय संकट से बच गया था, इसलिए संभावित उत्पादन में आघात की जोखिम बहुत कम थी (बाक्स II.1)।

सकल आपूर्ति

कृषि

II.1.6 दक्षिण-पश्चिम मानसून में 22 प्रतिशत की कमी के बावजूद, 2009-10 में कृषि के सकल देशी उत्पाद में 0.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई। रिकवरी में कम वर्षा का समग्र प्रभाव मंद ही रहा, जो अंतर-क्षेत्रीय सहबद्धताओं की कमजोर होती हुई स्थिति, विशेषकर कृषि क्षेत्र के संबंध में, को दिखलाता है (बाक्स II.2)।

II.1.7 सकल देशी उत्पाद में कृषि तथा सम्बद्ध गतिविधियों का हिस्सा निरंतर कम होकर लगभग 14.6 प्रतिशत हो जाने के बावजूद, यह अभी भी जनसंख्या के अधिकांश वर्ग, कुल काम करनेवाले वर्ग के लगभग 52 प्रतिशत, के लिए महत्वपूर्ण है और खाद्य सुरक्षा तथा मूल्य स्थिरता के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अभी भी महत्वपूर्ण बना हुआ है।

चार्ट II.1 : वास्तविक सकल देशी उत्पाद वृद्धि

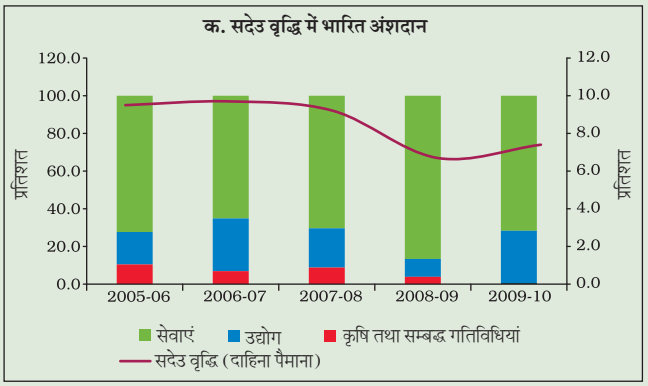

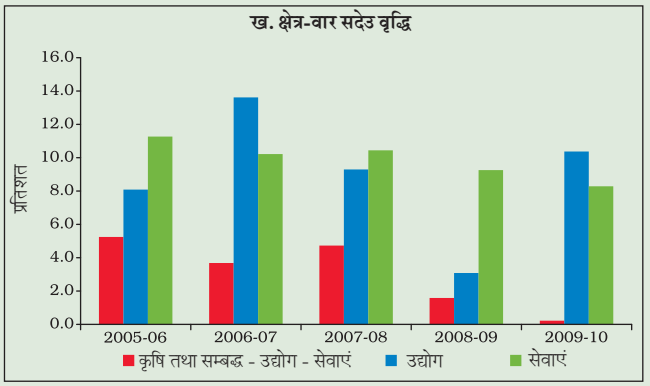

बाक्स II.1
वैश्विक संकट के बाद भारत के लिए संभावित उत्पादन मार्ग

संभावित उत्पादन को उत्पादन के उस उच्चतम स्तर के रूप में परिभाषित किया जाता है, जो कोई अर्थव्यवस्था समष्टि-आर्थिक असंतुलन पैदा किए बिना जारी रख सकती है। मौद्रिक नीति के संचालन में प्रयुक्त सूचना के सेट में संभावित स्तर से वास्तविक उत्पादन का विचलन अर्थात् ''उत्पादन अंतराल'' एक प्रमुख परिवर्ती है। समकालीन अनुभवमूलक साहित्य संभावित उत्पादन को पूर्वनिर्धारित नियम के माध्यम से परिभाषित करने में कठिनाई महसूस करता है और इसे समय के अनुसार परिवर्तनीय घटक मानता है। विगत 140 वर्ष के प्रमुख अंतरराष्ट्रीय संकटों के बाद प्रतिरूपी तौर पर संकट-पूर्व की प्रवृत्ति की तुलना में उत्पादन में हानियां हुईं (आइएमएफ 2009)।

संभावित उत्पादन पर संकट तथा उसकी दृढ़ता का असर सभी देशों में एकसमान नहीं होता क्योंकि संकट के स्वरूप तथा उसकी मात्रा एवं नीतिगत अनुक्रिया में बहुत असममिति हो सकती है तथा इनमें काफी अंतर हो सकता है। उदाहरण के लिए, जापान को 1990 के दशक में बैंकिंग संकट के कारण लगातार उत्पादन में हानियों का सामना करना पड़ा। दूसरी ओर, मैक्सिको तथा नार्वे ने संकट के बाद की अवधि में त्वरित समुत्थान तथा उच्चतर उत्पादन दर्ज किया (हौग और अन्य; 2009)। यह अनुमान है कि 1997-1999 की अवधि के दौरान एशियाई संकट में संचयी उत्पादन हानि फिलीपीन्स में मात्र 1.5 प्रतिशत थी, जबकि इंडोनेशिया में यह 22.3 प्रतिशत, कोरिया में 10.3 प्रतिशत तथा मलेशिया में 19.0 प्रतिशत थी। फुर्सेरी तथा मुरूगाने (2009) ने यह अनुमान लगाया है कि ओईसीडी अर्थव्यवस्थाओं में, वित्तीय संकटों ने संभावित उत्पादन में औसतन 1.5-2.4 प्रतिशत की कमी ला दी। यदि संभावित उत्पादन हानि स्थायी है, तो संरचनात्मक बाधाओं को दूर करना यथोचित नीतिगत अनुक्रिया है।

वैश्विक संकट के प्रभाव की जांच कर रहे हाल ही के एक अध्ययन में यह दिखलाया गया है कि चीन, इंडोनेशिया तथा भारत में संभावित वृद्धि में या तो कमी नहीं आई या यह नगण्य थी। भारत में ऐसा पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में निर्यात पर कम निर्भरता के कारण हुआ है। तथापि, सरल एचपी फिल्टर्ड अनुमान यह सुझाते हैं कि अधिकांश उभरती हुई पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं संभावित उत्पादन वृद्धि में कमी आई, हालांकि, भारत में यह बहुत ही कम (अर्थात् 0.4 प्रतिशत) थी (पार्क सी.वाइ.और अन्य : 2010)।

वर्ष 2003-04 से 2007-08 के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था में लगभग 9.0 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई, जो 2008-10 के दौरान कम होकर लगभग 7 प्रतिशत रह गई। हालांकि वृद्धि में अंतर का कुछ भाग निश्चित रूप से चक्रीय है, लेकिन विभिन्न अनुमान विधियां, जैसे कि प्रवृत्ति घटक की फिल्टरिंग तथा वर्तमान पूंजी स्टाक पर सहज किए गए वृद्धिशील पूंजी उत्पादन अनुपात (आईसीओआर), यह सुझाती हैं कि वैश्विक संकट के बाद की अवधि में संभावित उत्पादन वृद्धि अनुमान लगभग 8 प्रतिशत होगा। संकट से पहले का स्तर लगभग 8.5 प्रतिशत था जो वैश्विक संकट के बाद कुछ कमी दिखलाता है (चार्ट क)।

उत्पादन में संभावित कमी का कारण, निवेश के अधिक कुशल निजी क्षेत्र से सार्वजनिक क्षेत्र की ओर तथा अर्थव्यवस्था के व्यापार-योग्य क्षेत्रों से गैर व्यापार-योग्य क्षेत्रों की ओर पुनराबंटन के अलावा, निवेश वृद्धि में तीव्र अस्थायी कमी होना है। उत्पादन की इस कमी को अस्थायी रूप में भी देखा जा सकता है। भारत के विकास का मार्ग मुख्यतया देशी मांग द्वारा चालित है और यदि वैश्विक संकट न भी होता, तो भी भारत में चक्रीय कारणों से कुछ कमी जरूर होती। कालांतर में चक्रीय घटक फिर से अपनी पुरानी प्रवृत्ति दिखलाते हैं क्योंकि भारत में जीडीपी श्रृंखला अनिवार्यतः प्रवृत्ति स्थिर प्रक्रिया (ट्रेंड स्टेशनरी प्रोसेस) का अनुसरण करती है। वस्तुतः 2009-10 की चौथी तिमाही में, नियत पूंजी निर्माण वृद्धि में उल्लेखनीय तेजी दिखाई दी। राजकोषीय समेकन, अनुकूल जनसांख्यिकी तथा और अधिक संरचनात्मक सुधारों के कारण, संभावित वृद्धि मार्ग को बढ़ाकर दो अंकों के स्तर तक ले जाया जा सकता है।

संदर्भ:

1. सिन-यंग पार्क, रूपर्टो माजुका तथा जोसेफ़ याप (2010), ''दि 2008 फाइनेंशियल क्राइसिस एण्ड पोटेंशियल आउटपुट इन एशियाः इम्पैक्ट एण्ड पॉलिसी इम्प्लिकेशन्स'', एडीबी वर्किंग पेपर सीरीज़ ऑन रीजनल इकोनॉमिक इन्टिग्रेशन।
2. फुर्सेरी, डी तथा ए. मौरेगन (2009), ''दि इफैक्ट ऑफ फाइनेंशियल क्राइसिस ऑन पोटेंशियल आउटपुटः न्यू एम्पिरिकल एविडेंस फ्राम ओईसीडी कन्ट्रीज'', ओईसीडी इकनॉमिक्स डिपार्टमेंट वर्किंग पेपर्स नं.699।
3. अं.मु.को. (2009); वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक, अक्तूबर 2009।

चार्ट क : सकल देशी उत्पाद और स्थिर निवेश वृद्धि की प्रवृत्ति

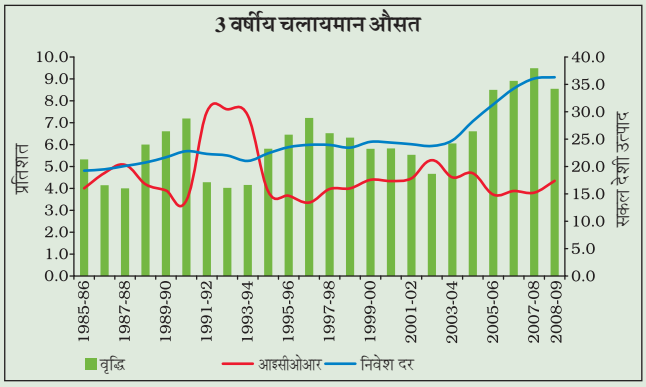

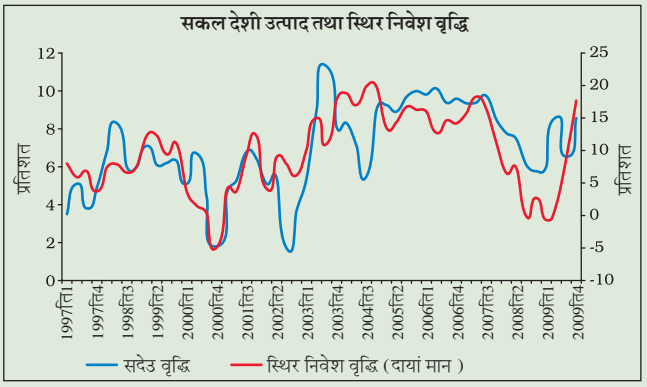

बाक्स II.2
आर्थिक वृद्धि और अंतर-क्षेत्रीय सहबद्धताएं

कृषि तथा अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों के बीच सहबद्धता की विकासात्मक साहित्य में व्यापक जांच की गई है। शुरुआती विश्लेषणों में, यह माना जाता था कि कृषि उद्योग तथा सेवाओं के विकास के लिए खाद्यान्न, रेशे, श्रम तथा कच्चे माल उपलब्ध कराने की भूमिका निभाएगी (रोजेन्स्टीन-रोडन, 1943)। यह भी माना जाता था कि कृषि क्षेत्र में उपलब्ध अतिरिक्त संसाधनों को तीव्र औद्योगिकीकरण तथा तृतीय क्षेत्र की वृद्धि के लिए अंतरित किया जा सकता है। बाद के विश्लेषणों में, अंतर-क्षेत्रीय सहबद्धता, मांग तथा आपूर्ति दोनों पक्षों से बहुत महत्वपूर्ण हो गई। भारत में पहले यह माना जाता था कि कृषि क्षेत्र की आपूर्ति वाली सहबद्धताएं कमजोर हो गयी हैं जबकि मांग वाली सहबद्धताएं मजबूत बनी रहीं (शास्त्री और अन्य, 2003)।

कृषि क्षेत्र तथा शेष अर्थव्यवस्था के निष्पादन के बीच के संबंधों के क्रमिक रूप से कमज़ोर होने के कई कारण हो सकते हैं:

- सेवाओं के निर्यात की सहायता से सेवा क्षेत्र ने अर्थव्यवस्था की वृद्धि में अधिकाधिक योगदान किया है;
- विनिर्माण क्षेत्र द्वारा सेवाओं के उपभोग में वृद्धि हो रही है; लेकिन कृषि क्षेत्र के लिए इसी प्रकार की सहबद्धता अभी देखी जानी है;
- विनिर्माण क्षेत्र पारंपरिक कृषि आधारित उद्योगों से हटकर मशीनरी, उपभोक्ता वस्तुओं तथा निर्माण पर आधारित गतिविधियों की ओर जा रहा है जो उच्च आय लोचवाले बाजार-खंडों की मांग पूरा करते हैं;
- आपूर्ति संबंधी सहबद्धता भी शेष विश्व के साथ उद्योग क्षेत्र की बढ़ती हुई सहबद्धता के कारण कमज़ोर हो रही है;
- कृषि क्षेत्र में अतिरिक्त श्रम और निम्न कृषि उत्पादकता के कारण मांग संबंधी सहबद्धता भी क्षीण हो रही है;
- इसके साथ ही, निजी उपभोग व्यय में 'खाद्य पदार्थ तथा पेय पदार्थ' का अंश कम होता जा रहा है।

कृषि की वृद्धि में चार से छह तिमाहियों से भी अधिक अवधि में लगातार गिरावट का प्रभाव औद्योगिक क्षेत्र के निष्पादन पर और समग्र निजी उपभोग की वृद्धि पर पड़ता है। कमज़ोर दक्षिण-पश्चिमी मानसून के कारण 2009-10 में खरीफ की फसलों के उत्पादन में कमी आई, हालांकि उद्योग ने वैश्विक वित्तीय संकट से उबरकर अच्छा सुधार दिखलाया। वर्ष के अंत तक इन दोनों के बीच वृद्धि के पैटर्न में काफी अधिक अंतर था। लेकिन, यदि मांग को देखें, तो ग्रामीण क्षेत्रों की आय में कमी आने के परिणामस्वरूप कृषि में हुई खराब वृद्धि ने निजी उपभोग मांग को कम किया (चार्ट क)।

अनुभवमूलक अनुमान यह दिखलाते हैं कि भारत में सुधारों के बाद की अवधि में अंतर-क्षेत्रीय सहबद्धताएं कमजोर हुई हैं (सारणी क)। संबंध की मजबूती में प्रमुख कमजोरी (क) उद्योग और सेवा क्षेत्र तथा (ख) उद्योग और कृषि क्षेत्र के बीच की सहबद्धता में हुई है। अद्यतन निविष्टि उत्पादन

चार्ट क: कृषि क्षेत्र की वृद्धि के मांग और आपूर्ति पक्ष के सहसंबंध

मैट्रिक्स के अनुसार, विनिर्माण में कृषि निविष्टियों का भाग 1993-94 के 20 प्रतिशत की तुलना में घटकर 2006-07 में 5 प्रतिशत रह गया है। इसी प्रकार, सेवा क्षेत्र की सहबद्धताएं देशी अर्थव्यवस्था की बजाय शेष विश्व के साथ अपेक्षाकृत अधिक बढ़ी हैं जैसा कि सेवा क्षेत्र के कुल उत्पादन के प्रति

सारणी क : अंतर-क्षेत्रीय सहबद्धताएं

	सहसंबंध मैट्रिक्स			निविष्टि-उत्पाद सारणी लिओंटिएफ इनवर्स**			अंतर-क्षेत्रीय लोच@		
	कृषि	उद्योग	सेवाएं	कृषि	उद्योग	सेवाएं	कृषि	उद्योग	सेवाएं
अवधि I									
कृषि	-	0.27	0.42	-	0.20	0.06	-	0.41	#
उद्योग	0.27	-	0.54	0.13	-	0.27	0.23	-	0.80
सेवाएं	0.42	0.54	-	0.15	0.52	-	0.25	0.88	-
अवधि II									
कृषि	-	0.07	0.05	-	0.05	0.02	-	0.29	#
उद्योग	0.07	-	0.38	0.07	-	0.15	0.23	-	0.23^
सेवाएं	0.05	0.38	-	0.08	0.16	-	0.21	0.56	-

अवधि I: सहसंबंध मैट्रिक्स (1966-90), आइ-ओ सारणी (1993-94) तथा लोच (1951-90); अवधि II: सहसंबंध मैट्रिक्स (1991-2008), आइ-ओ सारणी (2006-07) तथा लोच (1991-2008);

** : गुणांक स्तंभ परिवर्ती की एक इकाई हासिल करने के लिए पंक्ति परिवर्ती की अपेक्षा को दिखाता है।

@: एक पंक्ति परिवर्ती में एक प्रतिशत परिवर्तन के साथ स्तंभ परिवर्ती में प्रतिशत परिवर्तन दिखलाता है।

: सांख्यिकी रूप से महत्वपूर्ण नहीं; ^: विलंबित प्रभाव।

(जारी..)

(...समाप्त)

निर्यात की गई सेवाओं के अनुपात में वृद्धि से पता चलता है जो 1990-91 के 3.2 प्रतिशत की तुलना में 2009-10 में लगभग चार गुना बढ़कर 12.0 प्रतिशत हो गया।

संदर्भ:

1. रोजेनस्टीन-रोडन (1943), ''प्राब्लम्स ऑफ इंडस्ट्रिअलाइजेशन आफ ईस्टर्न एंड साउथ-ईस्टर्न यूरोप'', *इकानॉमिक जर्नल, 53, 202-211.*
2. शास्त्री डी.वी.एस., बलवंत सिंह, कौशिक भट्टाचार्य, एन.के.उन्नीकृष्णन (2003), ''सेक्टोरल लिंकेजेज एंड ग्रोथ प्रास्पेक्ट्सः रिफ्लेक्शन्स ऑन दि इंडियन इकॉनॉमी'', ईपीडब्ल्यू 38, 2390-2397.
3. सुब्रमणियम विजय तथा माइकल रीड (2009), ''एग्रिकल्चरल इंटर-सेक्टोरल लिंकेजेज एंड इट्स कॉन्ट्रिब्यूशन टु इकॉनॉमिक ग्रोथ इन दि ट्रांजिशन कन्ट्रीज''. *ageconsearch.umn.edu/bitstream/51586/2/438a.pdf.*

सूखे के प्रभाव को कम करना

II.1.8 वर्ष 2009 में दक्षिण-पश्चिम मानसून, वर्षा में 22 प्रतिशत की कमी के साथ, 1972 के बाद से सबसे कमजोर था। 36 मौसमी उप-खंडों में से, 14 उप-खंडों में संचयी वर्षा अत्यधिक/सामान्य थी और 22 उप-खंडों में यह कम/बहुत कम/बिल्कुल नहीं थी। कुल मिलाकर, 15 राज्य सरकारों द्वारा 352 जिलों में सूखे की घोषणा की गई। विगत में सूखे ने हमेशा कृषि क्षेत्र के निष्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। उत्पादन में कमी की मात्रा सूखे की तीव्रता के आधार पर बदलती रही है। 2009-10 में, 218.2 मिलियन टन के स्तर पर खाद्यान्न उत्पादन में केवल 6.9 प्रतिशत की कमी हुई, जबकि पिछले सूखा अर्थात 2002-03 में 18 प्रतिशत की गिरावट आयी थी । यही नहीं, कृषि उत्पादन में कमी के बावजूद कृषि क्षेत्र से सकल देशी उत्पाद में 2009-10 में 0.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई (चार्ट II.2)।

II.1.9 वर्ष 2009 के दौरान सूखे का प्रभाव कम करने के लिए, सरकार द्वारा कई उपाय प्रारंभ किये गये। इनमें शामिल हैं - (क) उच्चतर वर्षावाले क्षेत्रों में बेहतर निविष्टियों अर्थात् उर्वरक, ऋण तथा कीट नियंत्रक उपायों के प्रावधान के माध्यम से उच्चतर उत्पादन प्राप्त करने के लिए क्षेत्र-विशिष्ट रणनीति अपनाना, (ख) राज्य सरकारों को जिन क्षेत्रों में बुआई नहीं हुई/बीज विफल हो गये, उनमें कम अवधिवाली/वैकल्पिक फसलों के लिए वैकल्पिक योजनाएं तैयार करने की सलाह देना, (ग) क्षेत्रीय सम्मेलन आयोजित करना तथा राज्य सरकारों के साथ रबी का अभियान कार्यक्रम चलाना ताकि रबी के मौसम के लिए यथोचित कार्रवाई योजना बनाई जा सके, (घ) दूरदर्शन/रेडियो पर प्रसारण के माध्यम से किसानों के लाभार्थ उपयुक्त फसल कार्यक्रमों के लिए कृषि संबंधी सलाह देना, (ङ) बीजों पर लगे प्रतिबंधों को शिथिल करना और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (एनएफएसएम) तथा राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आरकेवीवाइ) के अधीन बीजों और बीजों के मिनी-किट्स का वितरण, (च) कृषि पुनर्गठन कार्यक्रम चलाने में मदद करने के लिए केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित कार्यक्रमों जैसे कि एनएफएसएम, आरकेवीवाइ, कृषि का सूक्ष्म प्रबंधन योजना (एमएमए) तथा तिलहन, दाल, आइल पाम और मक्का की समन्वित योजना (आइएसओपीओएम) के अधीन निधियां उपलब्ध कराना तथा (छ) खड़ी फसलों को बचाने के लिए अनुपूरक सुरक्षात्मक सिंचाई उपलब्ध कराने के लिए डीज़ल सब्सिडी योजना प्रारंभ करना (राज्य सरकारों द्वारा 7.50 रुपये/लीटर की अधिकतम राशि के अधीन केंद्र सरकार द्वारा सब्सिडी की लागत के 50 प्रतिशत का वहन किया गया)।

चार्ट II.2 सूखे के वर्षों में कृषि का निष्पादन

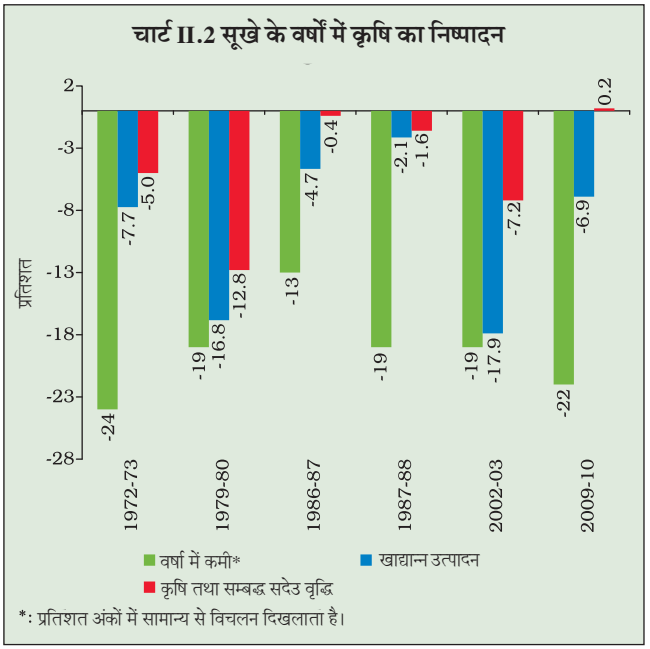

II.1.10 वर्ष 2009-10 के दौरान समग्र सकल देशी उत्पाद में कृषि क्षेत्र के धनात्मक अंशदान का आंशिक कारण था - संरचनात्मक परिवर्तन, अर्थात् कुल कृषि जीडीपी में खाद्यान्नों तथा वाणिज्यिक फसलों के कम होते अंश के साथ बागवानी, पशु धन, वानिकी व वृक्षों की कटाई तथा मत्स्यपालन का बढ़ता अंश। इसके अतिरिक्त, जुलाई 2009 महीने में वर्षा, जो फसलों की बुआई के लिए बहुत महत्वपूर्ण है, सामान्य से अधिक थी। उत्तर-पूर्वी मानसून के संतोषजनक निष्पादन (सामान्य से 8 प्रतिशत अधिक) के कारण भूमि की आर्द्रता में भी सुधार हुआ। यदि भविष्य की ओर देखें, तो भारतीय मौसम विज्ञान विभाग द्वारा दक्षिण-पश्चिमी मानसून मौसम के बारे में की गई दीर्घावधि भविष्यवाणी (जून से सितंबर 2010) में इस बात का संकेत है कि पूरे देश के लिए वर्षा सामान्य होने की संभावना है। मात्रात्मक रूप में देखा जाए तो मानसूनी वर्षा $\pm$ 4 प्रतिशत की मानक त्रुटि के साथ दीर्घावधि औसत का 102 प्रतिशत रहने की संभावना है। यद्यपि इस मौसम के दौरान अभी तक (11 अगस्त 2010 तक) समग्रतया जितनी वर्षा हुई है वह दीर्घावधिक औसत से 4 प्रतिशत कम रही है, तथापि, मानसून पिछले वर्ष (-29 प्रतिशत) से बेहतर रहा है। खरीफ़ 2010 के दौरान अब तक (13 अगस्त 2010 की यथास्थिति अनुसार) बुवाई का जो रकबा रहा है वह सभी फसल श्रेणियों के लिए विगत वर्ष की तदनुरूप अवधि की तुलना में अधिक है। इस प्रकार खरीफ़ की उच्चतर पैदावार होने से 2010-11 के दौरान कृषि-वृद्धि की संभावनाएं बढ़ गई हैं।

II.1.11 कम मानसून के बावजूद पिछले सूखे की तुलना में 2009-10 में कृषि क्षेत्र का निष्पादन बेहतर रहा है, लेकिन लगातार सूखे के प्रभाव को सह सकने की क्षमता को लेकर चिंता बनी हुई है। यह एक और हरित क्रांति, जो पर्यावरणीय रूप से भी व्यवहार्य हो, को लाने की आवश्यकता को रेखांकित करती है, जिसमें संसाधन संपन्न क्षेत्रों की बजाए प्रतिकूल कृषि-मौसम संबंधी परिस्थितियों वाले क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित किया जाना है ताकि और अधिक समावेशी वृद्धि प्राप्त की जा सके। इस संदर्भ में, 2010-11 के केंद्रीय बजट में हरित क्रांति को पूर्वी क्षेत्र में लाने के लिए एक रणनीति की घोषणा की गयी है।

II.1.12 इसके अतिरिक्त, मानसून पर अत्यधिक निर्भरता के कारण कृषि उत्पादन में बहुत उतार-चढ़ाव रहता है, जिसके कारण मांग और आपूर्ति में विसंगति के चलते पण्य मूल्यों, विशेषकर खाद्य मूल्यों, पर दबाव पड़ता है। वर्ष 2009-10 में खाद्य मूल्यों में बहुत अधिक वृद्धि हुई, विशेषकर दालों और चीनी में जहां मार्जिन पर मांग-आपूर्ति संबंधी असंतुलनों के कारण मूल्यों में वृद्धि हुई। लेकिन, बहुधा किसान मूल्यों में वृद्धि के लाभ नहीं प्राप्त कर पाते क्योंकि खलिहान तथा बाजार के मूल्यों में बहुत अधिक विसंगतियां रहती हैं। भारत, कई कृषि पण्यों का बहुत बड़ा उत्पादक होने के बावजूद, पैदावार में पीछे है। अंतर-राज्यीय तथा अंतर-फसल पैदावार में भी बहुत अंतर है (चार्ट II.3)। परिणामस्वरूप, मांग-आपूर्ति संबंधी असंतुलन बरकरार है, विशेषकर दालों तथा तिलहनों में। हालांकि, कुछ हद तक देशी उत्पादन में हुई कमी को आयात के द्वारा पूरा कर लिया गया है, लेकिन उच्च अंतरराष्ट्रीय मूल्यों के कारण इस विकल्प में भी कई बाधाएं हैं। परिणामस्वरूप, जब भी देशी उत्पादन में कमी होती है, खाद्य मूल्यों पर दबाव पड़ता है जिसके कारण सामान्य मुद्रास्फीति की स्थिति देखने में आती है।

खाद्य प्रबंधन

II.1.13 वर्ष 2008-09 तथा 2009-10 में सरकारी खरीद के उच्च स्तर को दिखलाते हुए, कुल खाद्य भंडार मार्च 2009 के अंत के 35.6 मिलियन टन की तुलना में बढ़कर मार्च 2010 के अंत में 43.4 मिलियन टन हो गया तथा वह और बढ़कर 1 अगस्त 2010 को 55.4 मिलियन टन, अर्थात् 1 जुलाई से प्रारंभ हुई तिमाही के लिए 31.9 मिलियन टन के सुरक्षित भंडार के मानक से काफी अधिक, हो गया (5 मिलियन टन का खाद्य सुरक्षा रिज़र्व भी सम्मिलित है)। सूखे के वर्ष में खाद्यान्न भंडार में वृद्धि पिछले सूखे के वर्ष अर्थात 2002-03 की स्थिति के बिल्कुल विपरीत है (चार्ट II.4) । खाद्यान्न के भंडार का उच्च स्तर तथा उत्पादन की आघात-सह परिस्थितियां यह बतलाती हैं कि बेहतर आपूर्ति प्रबंधन से खाद्य मुद्रास्फीति पर दबाव को कम किया जा सकता था। इसके अलावा, खाद्यान्न का अधिक स्टाक रखने की लागत काफी अधिक होती है।

II.1.14 1990-2010 के दौरान खाद्यान्न उत्पादन की औसत वृद्धि दर 1.6 प्रतिशत थी, जो 1.9 प्रतिशत औसत जनसंख्या की वृद्धि दर से कम रही। इसका पता प्रति व्यक्ति खाद्यान्न की दैनिक निवल उपलब्धता की घटी हुई दर से भी चलता है जो 1990 के 472.6 ग्राम की तुलना में 2008 में 436.0 ग्राम प्रति दिन रह गयी। स्पष्ट

चार्ट II.3: तुलनात्मक पैदावार - स्तर

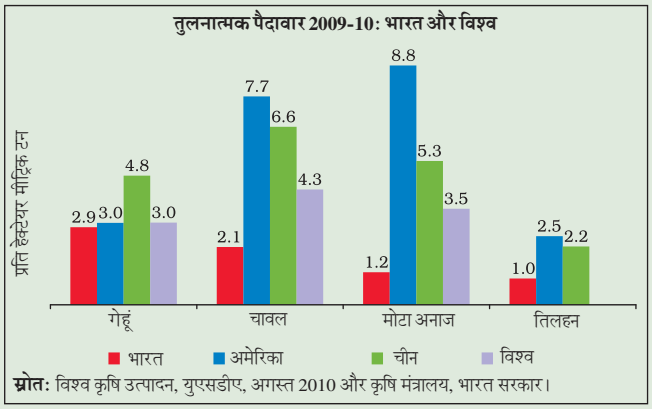

स्रोत: विश्व कृषि उत्पादन, युएसडीए, अगस्त 2010 और कृषि मंत्रालय, भारत सरकार।

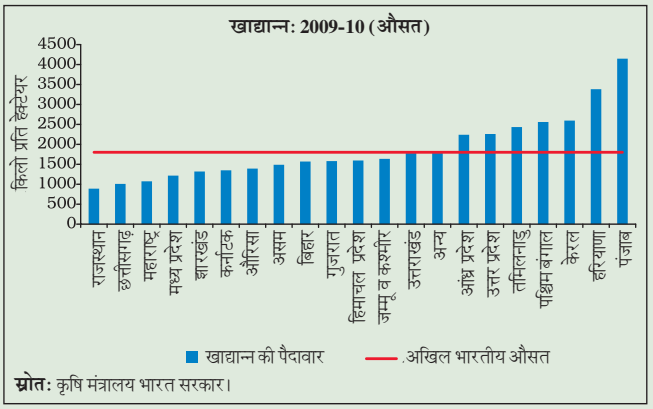

स्रोत: कृषि मंत्रालय भारत सरकार।

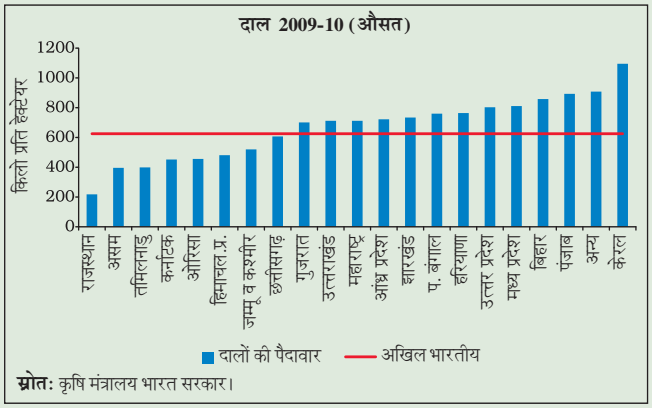

स्रोत: कृषि मंत्रालय भारत सरकार।

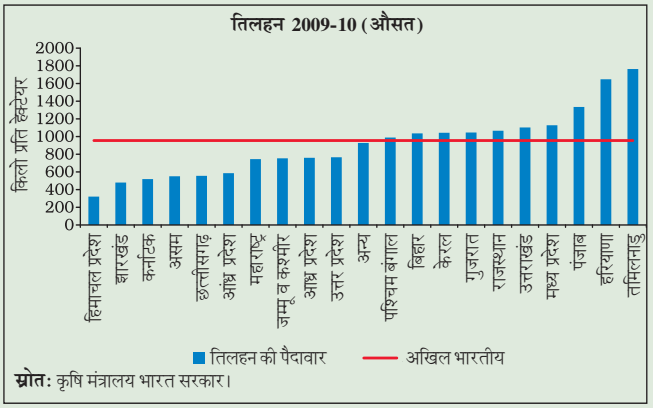

स्रोत: कृषि मंत्रालय भारत सरकार।

रूप से, कृषि उत्पादकता में सुधार लाने पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। लगातार अनुसंधान तथा विस्तारात्मक गतिविधियों के साथ-साथ उच्चतर निवेश हमें पैदावार बढ़ाने में मदद कर सकते हैं। आगामी वर्षों में हमें कृषि संबंधी अनुसंधान पर और अधिक ध्यान केंद्रित करना होगा क्योंकि अब तक सफलता कुछ चुनिंदा फसलों तक ही सीमित रही है। इसके अतिरिक्त, उपभोग बास्केट में विविधता आ रही है और दूध, सब्जियों, फलों, मांस, मुर्गी, मछली जैसी चीजों को वरीयता दी जा रही है क्योंकि पोषण की दृष्टि से ये अधिक महत्वपूर्ण हैं। अतः क्रमिक रूप से अनाज पर ध्यान केंद्रित करने वाली नीतियों से हटकर नीतिगत फ्रेमवर्क तथा बुनियादी सुविधाओं के माध्यम से इन वस्तुओं पर ध्यान देना भी उतना ही महत्वपूर्ण हो गया है। बाजार में मूलभूत सुविधाओं का होना विभिन्न विपणन कार्यों के निष्पादन के लिए तथा संसाधनों के कुशल आबंटन के लिए मूल्य संबंधी संकेतों के संचारण के लिए जरूरी है। नीतिगत प्रयास उत्पादों के व्यर्थ चले जाने में कमी करने पर केंद्रित होने चाहिए जो भंडारण तथा आपूर्ति शृंखला के प्रबंधन में होते हैं। सार्वजनिक नीतियां उत्पादकों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य तथा उपभोक्ताओं के लिए सार्वजनिक

चार्ट II.4 : कुल खाद्यान्न खरीद, प्राप्ति तथा खाद्य भंडार

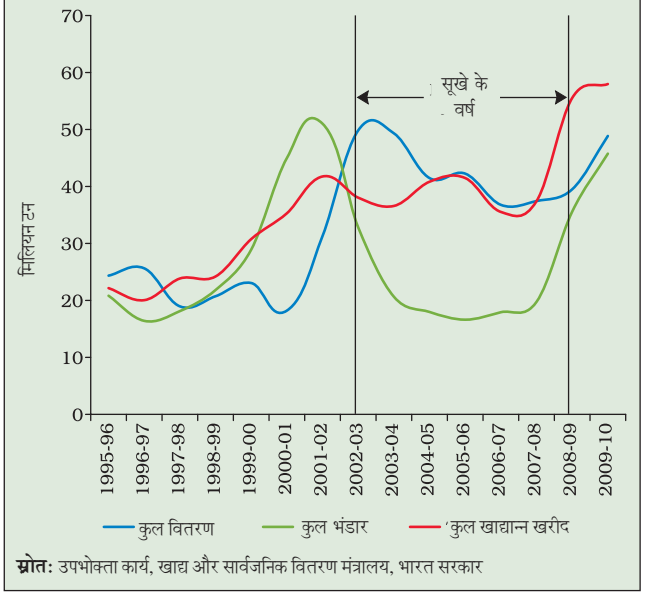

स्रोत: उपभोक्ता कार्य, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय, भारत सरकार

वितरण प्रणाली के माध्यम से मूल्य में हस्तक्षेप करने पर केंद्रित रही हैं। सार्वजनिक व्यय को कृषि के लिए पूंजीगत मूलभूत सुविधाएं प्रदान करने की ओर पुनरभिमुख करने की जरूरत है, जिससे बदले में निजी निवेश में भी वृद्धि होगी तथा कृषि में वृद्धि की पूर्ण संभावनाएं प्राप्त करने में मदद मिलेगी। वृद्धि की रणनीति को प्रभावी और समावेशी बनाने के लिए इसके द्वारा कृषि क्षेत्र में और अधिक कुशलता लाकर तथा उत्पादकता के स्तरों को सुधारकर कृषि उत्पादन में स्थिरता लाने पर फोकस किया जाना जरूरी होगा।

औद्योगिक निष्पादन

II.1.15 अक्तूबर 2009 के बाद से दुहरे अंकों की वृद्धि के परिणामस्वरूप 2009-10 में औद्योगिक उत्पादन सूचकांक में वृद्धि 10.5 प्रतिशत (2008-09 में 2.8 प्रतिशत) रही (चार्ट II.5) । रिकवरी का आधार व्यापक था तथा सर्वाधिक वृद्धि विनिर्माण उद्योग (10.9 प्रतिशत) में हुई, जिसके बाद खनन (9.9 प्रतिशत) तथा विद्युत (6.0 प्रतिशत) का स्थान था (चार्ट II.6)। विनिर्माण उत्पादन वृद्धि दर में उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं, पूंजीगत वस्तुओं तथा मध्यस्थ वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि से सहायता मिली। 2009-10 की दूसरी छमाही में विनिर्माण क्षेत्र के अच्छे प्रदर्शन का श्रेय आंशिक रूप से आधार प्रभाव को दिया जा सकता है। प्राकृतिक गैस, लौह अयस्क तथा अन्य खनिजों के उत्पादन में भारी वृद्धि के बावजूद, कच्चे तेल तथा कोयले के उत्पादन में लगातार कमी से खनन क्षेत्र में वृद्धि की दर 10 प्रतिशत से कम रही। विद्युत क्षेत्र भी, कमजोर

चार्ट II.5 : आइआइपी में वृद्धि (वर्ष-दर-वर्ष)

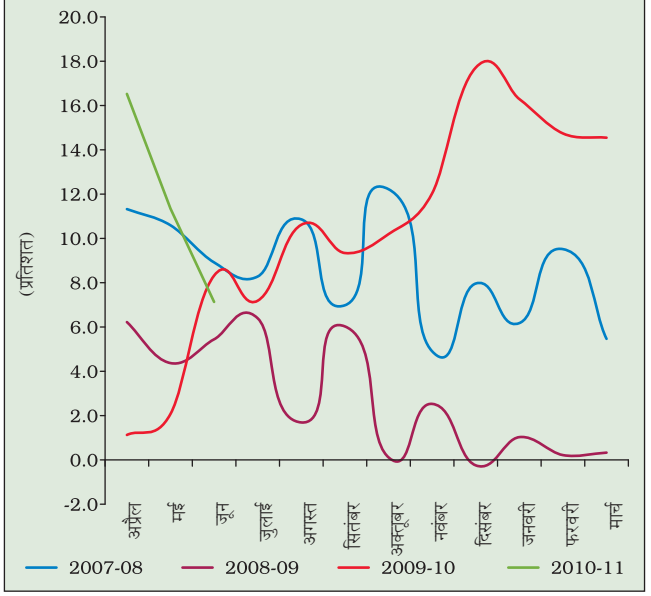

मानसून स्थितियों तथा जलाशयों की क्षमता के निम्न स्तर के कारण निम्नतर जल विद्युत उत्पादन के कारण, पीछे रहा। इसी प्रकार, अपर्याप्त कोयला उत्पादन तथा आयात में देरी से भी कोयले की उपलब्धता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, जिसके कारण ताप विद्युत के उत्पादन में कमी आयी।

II.1.16 वर्ष 2009-10 के दौरान औद्योगिक उत्पादन में सुधार की गति इस तथ्य से स्पष्ट है कि आइआइपी लगभग उस स्तर पर पहुंच गई थी, जहां वह 2005-07 के उच्च वृद्धि के दौर के, विश्वव्यापी संकट के कारण, अगले दो वर्षों के दौरान बाधित न होने पर पहुंची होती (चार्ट II.7)।

चार्ट II.6 : क्षेत्रगत वृद्धि

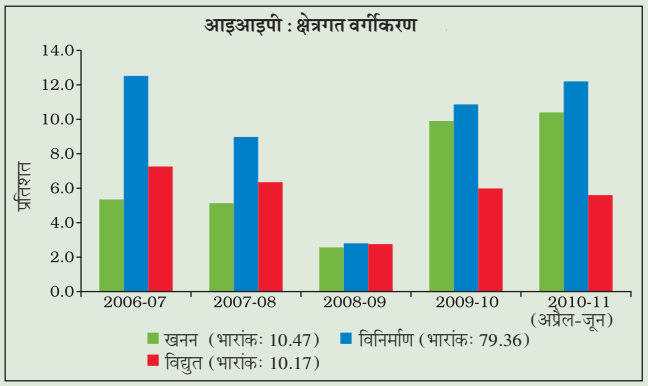

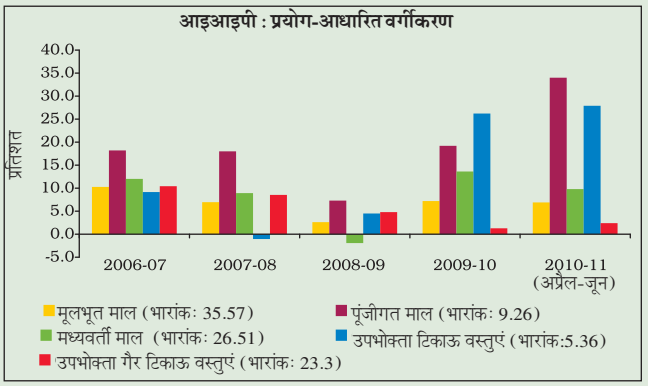

II.1.17 इस गति के साथ-साथ रिकवरी अपेक्षाकृत व्यापक थी। सर्वाधिक तेजी से बढ़ रहे पांच उद्योगों का, जिनका संयुक्त भारांक 24.6 प्रतिशत था, समग्र विनिर्माण वृद्धि में अंशदान 2008-09 के 134.6 (भारांक 35.9 प्रतिशत) की तुलना में 2009-10 में 63.5 प्रतिशत है। इसकी तुलना में इसी प्रकार, निचले पायदानों के 12 उद्योगों ने भी 2009-10 में विनिर्माण वृद्धि में 36.5 प्रतिशत (भारांक 54.7 प्रतिशत) की महत्वपूर्ण बढ़ोतरी दर्ज की, जबकि 2008-09 में यह (-) 34.6 प्रतिशत (भारांक 43.4 प्रतिशत) थी।

II.1.18 जहां उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं (26.2 प्रतिशत) और पूंजीगत माल (19.2 प्रतिशत) उद्योगों के उत्पादन में 2009-10 के दौरान मजबूती हासिल हुई, वहीं निजी उपभोग मांग में मंदी के कारण गैर-टिकाऊ वस्तुओं की वृद्धि में रिकवरी कमजोर (1.3 प्रतिशत) रही (चार्ट II.8)। मूलभूत माल उत्पादक उद्योगों की वृद्धि (7.2 प्रतिशत) ने रिकवरी की गति को बल दिया, हालांकि यह चिंता रही कि कुछ उद्योगों में क्षमतागत दबाव के कारण वृद्धि को कायम रख पाना कठिन रहेगा। मध्यवर्ती माल के क्षेत्र में प्रारंभिक रिकवरी (13.6 प्रतिशत) इन्वेंटरी चक्र में टर्न-अराउंड द्वारा, और उसके बाद निवेश मांग में सुदृढ़ रिकवरी द्वारा, संचालित हुई।

II.1.19 वर्ष 2010-11 (जून 2010 तक) के दौरान उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं में 27.9 प्रतिशत की सुदृढ़ वृद्धि जारी रही। मूलभूत वस्तुओं (6.9 प्रतिशत), मध्यवर्ती वस्तुओं (9.8 प्रतिशत) और पूंजीगत माल उद्योगों (34.0 प्रतिशत) ने औद्योगिक वृद्धि में उछाल को समर्थन दिया। बड़ी लाइन पर चलने वाले बंद वैगनों, वाणिज्यिक वाहनों, प्रिंटिंग मशीनों और एयर व गैस कम्प्रेसर जैसे विभिन्न उद्योगों के उत्पादन में तेज बढ़ोतरी से पूंजीगत माल खंड में वृद्धि को बल मिला। इसमें सरकार द्वारा बुनियादी ढांचा क्षेत्र को उच्चतर आबंटन का योगदान रहा, जिससे मशीनरी और निर्माण क्षेत्रों में निजी निवेश की बाढ़ ने अर्थव्यवस्था में उच्चतर सकल स्थिर पूंजी निर्माण में योगदान दिया (चार्ट II.9)।

II.1.20 वर्तमान वित्तीय वर्ष 2010-11 (जून 2010 तक) के दौरान औद्योगिक क्षेत्र ने 11.6 प्रतिशत की द्विअंकीय वृद्धि बनाये रखी। यद्यपि मई और जून 2010 के महीनों में औद्योगिक उत्पादन में मंदी रही, फिर भी वृद्धि की गति अभी भी सुदृढ़ है। आधारभूत प्रभाव और वैश्विक मांग में संभावित कमी के कारण औद्योगिक वृद्धि की गति में कुछ कमी आने के बावजूद, औद्योगिक गतिविधि में उछाल बनी रहने की आशा है।

II.1.21 अप्रैल-जून 2010 में वृद्धि की गति बरकरार रहना वृद्धि की सुदृढ़ संभावना को प्रकट करता है। तथापि, 2010-11 के दौरान उच्च औद्योगिक वृद्धि को इसी गति से बरकरार रखने के बारे में व्यक्त की गई चिंता पर भी ध्यान देने की जरूरत है। निर्यातों में

चार्ट II.7 : 2005-07 की विस्तारित प्रवृत्ति की तुलना में आइआइपी का वर्तमान स्तर

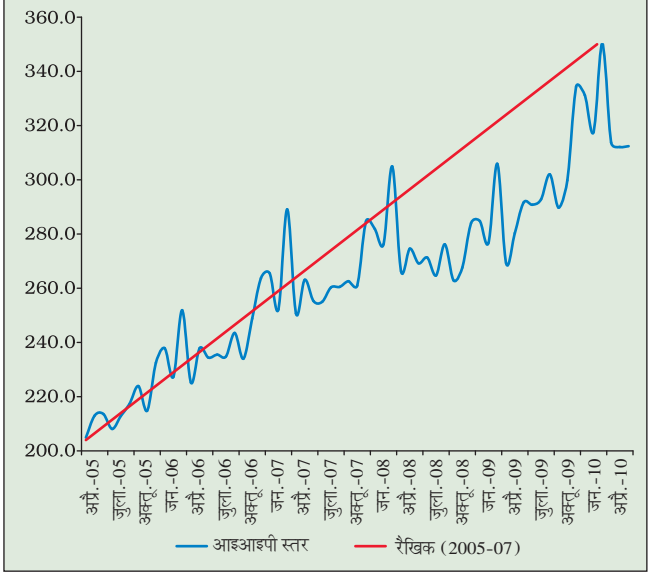

चार्ट II.8 : उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन और निजी अंतिम उपभोग व्यय की प्रवृत्तियां

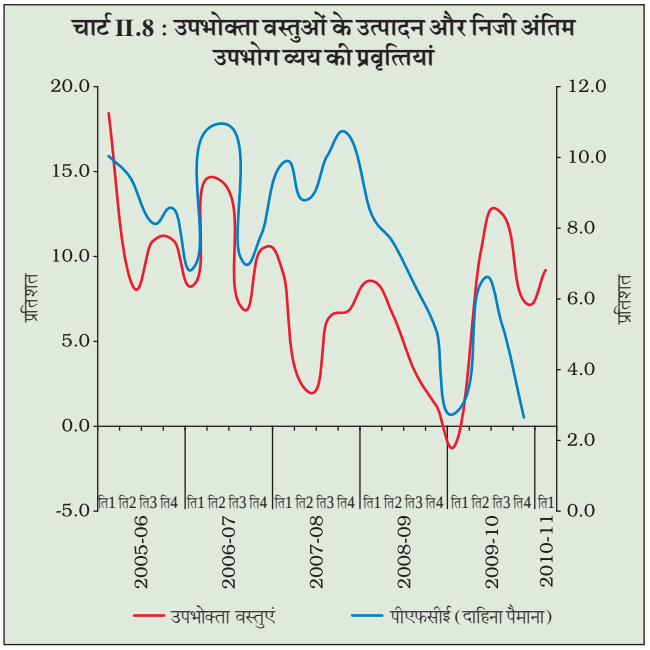

बढ़ोतरी के बावजूद कमजोर विदेशी मांग और राजकोषीय निकासी के कारण सरकारी व्यय में कमी होने से औद्योगिक वृद्धि में नरमी आ सकती है। इसलिए निजी उपभोग मांग का पुनर्जीवित होना औद्योगिक क्षेत्र में हाल के कार्यनिष्पादन को बरकरार रखने के लिए आवश्यक है। जून-जुलाई 2010 में दक्षिण-पश्चिम मानसून में सुधार, कृषि उत्पादन की बेहतर संभावना, 2010-11 में आयकर स्लैब में हुए परिवर्तन और छठे वेतन आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन से आमदनी पर हुए स्थायी प्रभाव उपभोग मांग के लिए सहायक होने चाहिए।

बुनियादी ढांचा

II.1.22 छह मूल बुनियादी ढांचा उद्योगों ने 2009-10 के दौरान विगत वर्ष की तुलना में कार्यनिष्पादन में सुधार दर्शाया। 2010-11 में (अप्रैल-जून 2010 तक), बुनियादी ढांचा उद्योगों ने 4.6 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की, जो पिछले साल की तदनुरूप अवधि (4.3 प्रतिशत) की तुलना में कुछ अधिक थी (चार्ट II.10)।

II.1.23 बुनियादी ढांचा भारत में वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण बाधा बना हुआ है। बुनियादी ढांचा संबंधी बहुत-सी परियोजनाओं में समय बढ़ने के फलस्वरूप लागत और बढ़ जाने से क्षमता में बढ़ोतरी से होने वाले लाभों को वास्तव में प्राप्त करने में देरी हुई। कच्चा तेल और पेट्रोलियम शोधन जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में क्षमता विस्तार में कमज़ोरी बनी रही और विद्युत की मांग और आपूर्ति में भी अंतराल विद्यमान रहा। विद्युत उत्पादन/पारेषण और वितरण दोनों कार्य चिंता के विषय रहे। विद्युत क्षमता में 2009-10 के दौरान 9585 मेगावाट की बढ़ोतरी हुई, जबकि वर्ष के लिए 14,507 मेगावाट का लक्ष्य रखा गया था। कोयला, पत्तन और रेलवे में क्षमता बढ़ाने की दिशा में काफी अवरोध हैं, जो कि उच्च वृद्धि में बाधक हो सकते हैं।

II.1.24 हालांकि विद्युत क्षेत्र में नए निवेश हो रहे हैं। सरकार नई शोध लाइसेन्स नीति संबंधी पहल के माध्यम से कच्चे तेल के क्षेत्र में क्षमता संबंधी बाधाओं से निपटने के प्रयास कर रही है। केजी-बेसिन के गैस उत्पादन से आशाजनक संकेत मिल रहे हैं। इस्पात, तेल, गैस और कोयला क्षेत्रों में कुछ विदेशी अधिग्रहणों से भी स्वदेशी क्षमता में विद्यमान को दूर करने में सहायता मिलेगी। बुनियादी ढांचा क्षेत्र में निवेश में संसाधनों की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए बहुपक्षीय संस्थाओं की मदद से सरकारी-निजी भागीदारी व्यवस्था पर नए सिरे से जोर दिया जा रहा है। इस चुनौती को

चार्ट II.9 पूंजी निर्माण में सहायक उद्योगों में वृद्धि की प्रवृत्तियां

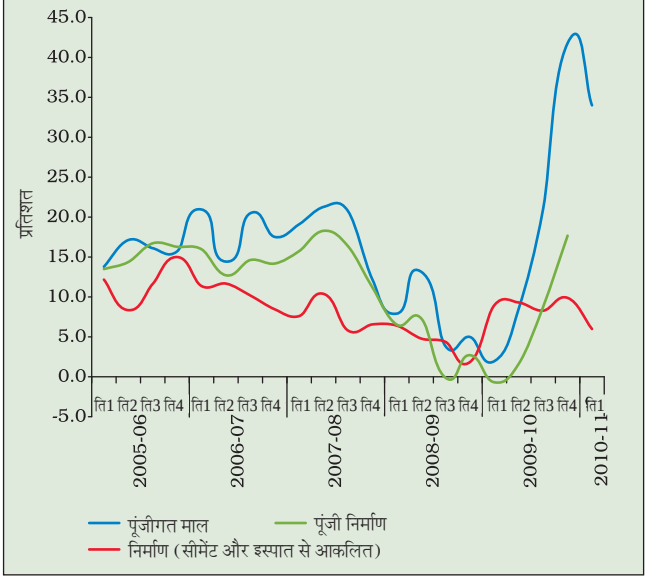

चार्ट II.10: मूलभूत संरचना उद्योगों में वृद्धि

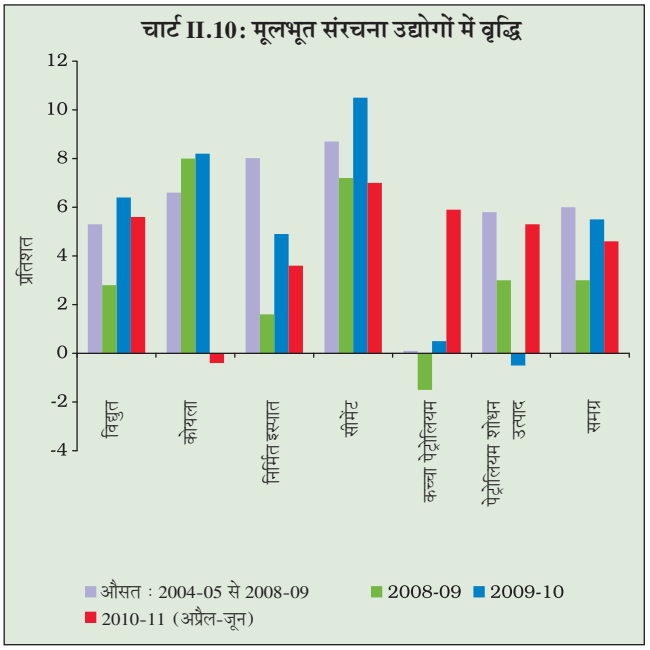

समझते हुए, 2010-11 के केंद्रीय बजट में केंद्र सरकार के योजनागत व्यय का 46 प्रतिशत बुनियादी ढांचा के लिए आबंटित किया गया है। कुल मिलाकर, वर्तमान आकलन के तहत भारतीय बुनियादी ढांचा उद्योग की क्षमता में 2010-11 में उल्लेखनीय बढ़ोतरी होने की उम्मीद है। सितंबर 2009 से जून 2010 के दौरान पूंजीगत माल के उत्पादन में हुई दुहरे अंकों की वृद्धि से भी यह प्रकट होता है।

सेवा क्षेत्र

II.1.25 सेवा क्षेत्र ने वैश्विक संकट से उत्पन्न संक्रमण के प्रति महत्वपूर्ण आघात-सहनीयता दिखाई (चार्ट II.11)। पर्यटकों के आगमन, प्रमुख बंदरगाहों पर संचालित कार्गो तथा अंतरराष्ट्रीय टर्मिनलों पर आए-गए यात्रियों, जैसी बाह्य मांग पर निर्भर सेवाओं में 2009-10 के दौरान सुधार हुआ, यद्यपि संकट-पूर्व स्तरों से उनका स्तर नीचे ही बना रहा। वाणिज्यिक वाहनों की बिक्री, सेल-फोन कनेक्शन तथा रेलवे परिवहन और निर्माण क्रियाकलाप जैसी स्वदेशी मांग पर आधारित सेवाओं में उच्च वृद्धि रही, विशेषकर वर्ष की दूसरी छमाही के दौरान। जहां वाणिज्यिक वाहनों का उत्पादन विनिर्माण कार्यों के तहत दर्शाया जाता है, वहीं वाणिज्यिक वाहनों की बिक्री से परिवहन सेवाओं के बारे में अग्रिम जानकारी मिलती है। यद्यपि सेवा क्षेत्र की समग्र वृद्धि 2009-10 के दौरान कम रही, तथापि 2009-10 की चौथी तिमाही में ''सामुदायिक, सामाजिक और व्यक्तिगत सेवाओं'' से इतर सेवा क्षेत्र ने लगभग 10 प्रतिशत की उच्च वृद्धि दर्शायी, जो 2003-08 के उच्च वृद्धि चरण के दौरान दर्ज सेवा क्षेत्र की औसत वृद्धि दर से अधिक है।

II.1.26 2009-10 के दौरान मोटर गाड़ियों के समग्र उत्पादन में सुधार रहा, जो अंशतः उत्पादन के निम्नतर आधार को दर्शाता है। विगत वर्ष (0.7 प्रतिशत) की तुलना में देशी बिक्री में 2009-10 के दौरान उल्लेखनीय बढ़ोतरी (26.4 प्रतिशत) हुई, जबकि एक वर्ष पहले के स्तर (23.6 प्रतिशत) की तुलना में निर्यात कमजोर (17.9 प्रतिशत) रहे। सड़क क्षेत्र में 2009-10 के दौरान राष्ट्रीय राजमार्गों के निर्माण और इन्हें चौड़ा करने का कार्य तेज गति से चला, साथ ही, रेलवे से माल-ढुलाई में भी बढ़ोतरी हुई। सरकारी और निजी दोनों ही प्रकार के सेल-फोन कनेक्शनों में उच्च वृद्धि (49.8 प्रतिशत) बनी रही, जिनमें सरकारी क्षेत्र के कनेक्शनों में उल्लेखनीय वृद्धि(62.8 प्रतिशत) हुई। वर्ष 2008-09 में संकट के कारण व्याप्त मंदी से यह सेक्टर प्रभावित नहीं हुआ। समुद्री पत्तनों और विमान पत्तनों पर कार्गो का आवागमन, जो 2008-09 में औद्योगिक मंदी की शुरुआत से ही गिर रहा था, 2009-10 के दौरान तेजी से सुधर गया (चार्ट II.12)। अप्रैल-जून 2010 के दौरान,

चार्ट II.11 : सेवा क्षेत्र सदेउ में वृद्धि

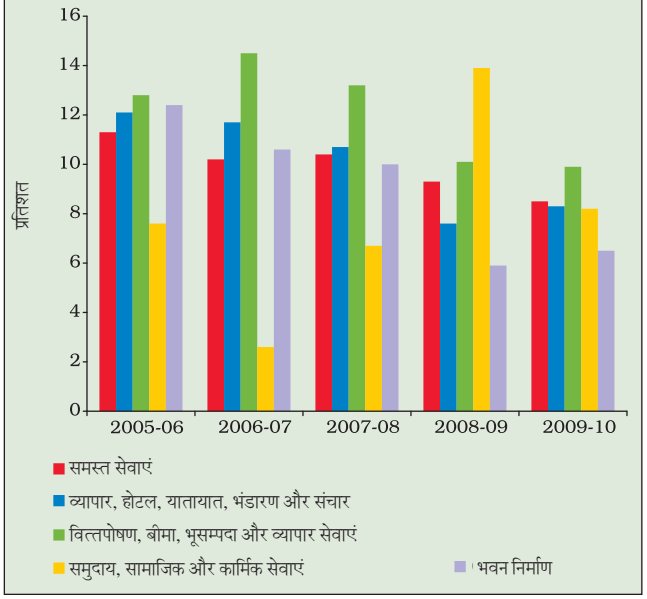

चार्ट II.12 : कार्गों आवागमन में वृद्धि की प्रवृत्ति

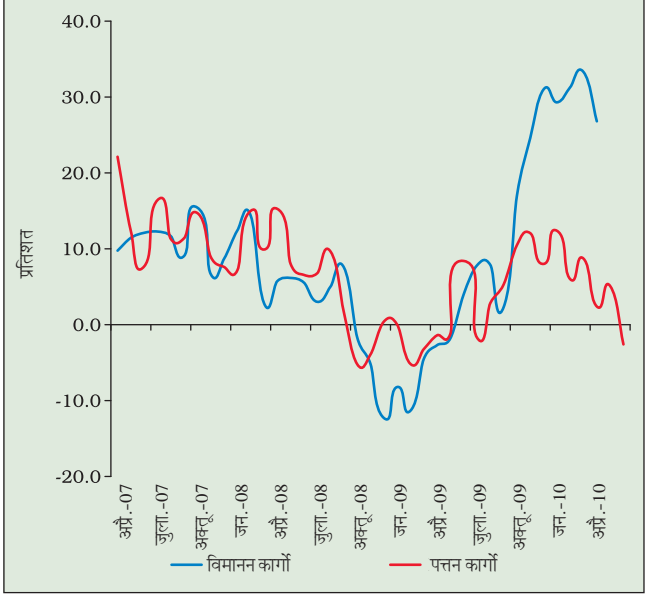

देशी बिक्री में उल्लेखनीय वृद्धि (29.6 प्रतिशत) तथा निर्यातों में काफी अधिक वृद्धि (54.5 प्रतिशत) होने से ऑटोमोबाइल का कुल उत्पादन बढ़ गया।

II.1.27 आगे चलकर, विनिर्माण क्षेत्र में वृद्धि से सेवा क्षेत्र में और तेजी आने की संभावना है। खुदरा व्यापार और निर्माण क्षेत्रों में पहले ही से उछाल दिखाई दे रहा है। आइटी-बीपीओ क्षेत्र ने भी राजस्व और मूल्य सृजन की दृष्टि से 2008-09 में आई मंदी के आघात से टर्न-अराउंड देखा है। पारम्परिक कारोबारी स्तंभों (वर्टिकल्स) के अलावा उदीयमान कारबारों अर्थात् कम्प्यूटिंग प्रणाली, ऊर्जा, बुनियादी ढांचा, औद्योगिक स्वचालीकरण और मेडिकल उपकरणों को भी महत्व प्राप्त होगा। देशी बाजार में हेल्थ-केयर, शिक्षा, वित्तीय और सार्वजनिक सेवाओं में आइसीटी-समर्थित समाधानों की बड़ी भूमिका देखने को मिलेगी। होटल, संचार, सूचना और वित्तीय सेवाओं जैसी कई सेवाओं में स्वदेशी मांग वृद्धि का प्रधान संचालक बनी हुई है।

II.1.28 इस वर्ष के अंत तक औद्योगिक रिकवरी की चिंता कम होने के कारण, नीतिगत बहस में उत्पादकता का मुद्दा पुनः सामने आया ताकि मध्यम अवधि में उच्च वृद्धि को बरकरार रखा जा सके। इस संदर्भ में भारत-केएलईएमएस अनुसंधान परियोजना के तहत अलग-अलग स्तरों पर औद्योगिक उत्पादकता का अध्ययन करने के लिए रिज़र्व बैंक ने एक बड़ी पहल की है। यह परियोजना बृहद वैश्विक केएलईएमएस पहल का एक हिस्सा है जिसका लक्ष्य अर्थव्यवस्थाओं की प्रतिस्पर्धात्मकता को समझने के लिए उद्योग स्तर पर उत्पादकता की प्रभावी पार-देशीय तुलना करना है (बाक्स II.3)।

बाक्स II.3
भारत में केएलईएमएस: भारत में औद्योगिक उत्पादकता को मापने के लिए रिज़र्व बैंक की एक पहल

भारत केएलईएमएस परियोजना भारत में वर्तमान उत्पादकता अनुसंधान का एक विस्तार है, ताकि वृद्धि के संचालकों की पहचान की जा सके। यह परियोजना सितंबर 2009 में प्रारंभ हुई और रिज़र्व बैंक तथा आइसीआरआईआर के बीच अनुसंधान-समन्वय की पहल के रूप में इसका निधीयन भारतीय रिज़र्व बैंक ने किया।

यह परियोजना उस वैश्विक पहल का एक अंग है जिसे आस्ट्रेलिया, कनाडा, यूरोपीय संघ (25 देश), संयुक्त राज्य अमरीका, लैटिन अमरीका (4 देश), रूस, जापान, कोरिया, भारत और चीन जैसे कई देशों में पहले से ही शुरू किया जा चुका है, ताकि यूरोपियन संघ में तैयार किए गए श्रम, पूंजी, कच्चा-माल, ऊर्जा और सेवाओं के फ्रेमवर्क में उत्पादकता का आकलन किया जा सके। विश्व केएलईएमएस परियोजना का अंतिम उद्देश्य यह है कि सेक्टर-वार स्तरों पर उत्पादकता का आकलन करने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तुलनीय आंकड़ा-आधार का सृजन किया जाए ताकि उत्पादकता की पार-देशीय तुलना की जा सके।

उत्पादकता आकलनों का केएलईएमएस फ्रेमवर्क पारम्परिक दृष्टिकोण से कई बातों में भिन्न है। प्रथम, इसका अभिप्राय सेक्टर-वार उत्पादकता विभेदक का स्पष्ट रूप से मापन करना है। दूसरे, यह घटक सेवाओं के लिए स्पष्ट लेखा तैयार कर निविष्टियों की विषमता को ध्यान में रखता है। घटक की गुणवत्ता की पहचान करने के लिए यह एक स्पर्धात्मक बाजार की कल्पना करते हुए बाज़ार कीमत आंकड़ों का प्रयोग करता है। तीसरे, विभेदीकृत मापन पर जोर देने की दृष्टि से यह नेशनल एकाउन्ट्स के प्रकाशित और व्यापक रूप से प्रयुक्त डेटा-श्रृंखला के साथ तुलनीयता को गंवाये बिना ही अत्यधिक सतर्कतापूर्वक केएलईएमएस डेटाबेस के सृजन का प्रयास करता है। यह देखते हुए कि सांख्यिकीय एजेन्सियों द्वारा प्रकाशित नेशनल एकाउंट डेटा शृंखला इस प्रकार के विभेदीकृत विवरण सहित उपलब्ध होना कठिन है, केएलईएमएस डेटाबेस तैयार करने में विस्तारित क्षेत्र-वार सूचना या सम्बद्ध सर्वेक्षणों का प्रयोग जरूरी है। चौथे, समय के साथ-साथ और अलग-अलग देशों में केएलईएमएस आंकड़ों की तुलना आसानी से संरचनागत परिवर्तन और उद्योगों में विकसित हो रहे निविष्टि-उत्पाद संबंधों, निविष्टि प्रयोग की गहनता (जैसे मानव और भौतिक पूंजी में निवेश) और उत्पादकता में वृद्धि (प्रौद्योगिकीय परिवर्तन, व्यापार की शर्तें, इत्यादि) को प्रकट कर सकेगी। अंततः यह वृद्धि के अनुमानित स्रोतों को बाजार सुधारों, क्षेत्र-विशेष के विनियमनों, व्यापार/बाह्य नीतियों और क्षेत्रीय नीतियों जैसी नीतिगत पहलों से जोड़ सकता है।

भारत केएलईएमएस तीन वर्षीय परियोजना है। प्रथम चरण में, घटक-निविष्टियों के रूप में श्रमिक घंटों और पूंजी स्टॉक के साथ मूल्यवर्धित वृद्धि लेखांकन मॉडल का प्रयोग करते हुए 31 सेक्टरों, जिनमें समूची अर्थव्यवस्था को शामिल किया गया है, की उत्पादकता का प्राथमिक आकलन किया गया है (सारणी-क) इसी संक्रिया को परियोजना के आगामी दो वर्ष में सामग्री, ऊर्जा और सेवा संबंधी डेटा-श्रृंखलाओं का विकास करते हुए सकल उत्पाद आधारित एकाउंटिंग फ्रेमवर्क में उत्पादकता अनुमानों के आकलन में भी अपनाया जाएगा।

वर्ष 1992-97 के दौरान 6.2 प्रतिशत की समग्र जीडीपी वृद्धि के साथ-साथ सभी सेक्टरों में हुई महत्वपूर्ण टीएफपी वृद्धि भी शामिल थी। वर्ष 1997-2005 के दौरान समग्र वृद्धि में गिरावट की आंशिक वजह उत्पादकता वृद्धि में गिरावट रही, जो कि 1992-97 के 2.6 प्रतिशत से घटकर 1.7 प्रतिशत पर आ गई, बावजूद इसके कि सेवा सेक्टर में टीएफपी वृद्धि में बढ़ोतरी रही।

समस्त अवधि (1980-2005) के दौरान, सेवा सेक्टर में टीएफपी वृद्धि (2.1 प्रतिशत) कृषि (1.6 प्रतिशत) और उद्योग (1.4 प्रतिशत) दोनों की तुलना में अधिक है। वर्ष 1986 के बाद से उद्योगों की उत्पादकता की वृद्धि में काफी सुधार आया है, जिसने समग्र वृद्धि में निविष्टियों के अंशदान में मंदी की भरपाई कर दी है। कृषि में 1980-97 के दौरान टीएफपी वृद्धि उच्चतर रही, जिसने इस अवधि के दौरान गिरावट आई निविष्टियों के न्यूनतर अंशदान को कुछ प्रतितुलित कर दिया। यद्यपि 1997-2005 के दौरान कृषि उत्पादकता में गिरावट आई; तथापि निविष्टियों के बढ़े हुए अंशदान से वृद्धि पर इसका प्रभाव नहीं के बराबर रहा।

(जारी...)

(समाप्त...)

सारणी-क: कुल घटक उत्पादकता (टीएफपी) और जीडीपी वृद्धि (प्रतिशत)

सेक्टर	1980-1986		1986-1991		1992-1997		1997-2005		1980-2005	
	टीएफपी	जीडीपी	टीएफपी	जीडीपी	टीएफपी	जीडीपी	टीएफपी	जीडीपी	टीएफपी	जीडीपी
समग्र अर्थव्यवस्था	2.2	5.3 (3.1)	1.6	5.9 (4.3)	2.6	6.5 (3.9)	1.7	5.7 (4.0)	1.9	5.7 (3.8)
कृषि	2.5	3.7 (1.2)	2.4	3.8 (1.4)	3.0	4.8 (1.8)	-0.2	2.2 (2.4)	1.6	3.4 (1.8)
उद्योग	-0.3	6.2 (6.5)	1.6	7.2 (5.6)	3.1	7.3 (4.2)	1.4	5.1 (3.7)	1.4	6.0 (4.6)
सेवाएं	3.4	5.8 (2.4)	1.0	6.9 (5.9)	2.0	7.3 (5.3)	2.2	7.9 (5.7)	2.1	7.0 (4.9)

टिप्पणी : कोष्ठकों में दिए गए आंकड़े समग्र वृद्धि को दर्शाते हैं, जो केवल इनपुट-आधारित है।

स्रोत: क्षेत्रवार टीएफपी के सीएसओ (एनएएस) और भारत के एलईएमएस के आकलन। एनएएस के अनुसार निर्माण को सेवाओं का एक अंग माना गया है। 31 सेक्टरों के मूल्यवर्धन के अंश के रूप में भारांक दिए गए हैं।

संदर्भ:

1. श्रेयर, पॉल स्प्रिंग (2001). ''दि ओईसीडी प्रोडक्टिविटी मैन्युअलः ए गाइड टू दि मेज़रमेंट ऑफ इंडस्ट्री-लेवल एंड एग्रीगेट प्रोडक्टिविटी'', इंटरनेशनल प्रोडक्टिविटी मॉनिटर, खंड-2, पृ.37-51.
2. जार्गेन्सन डब्ल्यू. डेल (2009), ''दि इकोनॉमिक्स ऑफ प्रोडक्टिविटी'', ''दि इंटरनेशनल लाइब्रेरी ऑफ क्रिटिकल राइटिंग्स इन इकोनॉमिक्स''
3. ग्रॉनिन्जेन विश्वविद्यालय, (2010), ''इंडिया केएलईएमएस वर्कशॉप'', अप्रैल 15-16, ग्रानिन्जेन, नीदरलैंड.

सकल मांग

II.1.29 सकल मांग के संचालकों में 2008-09 और 2009-10 के दौरान महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए (चार्ट II.13 और II.14)। निजी अंतिम उपभोग व्यय की वृद्धि 2008-09 की पहली छमाही के 8.0 प्रतिशत से गिरकर दूसरी छमाही में 5.8 प्रतिशत पर और 2009-10 की पहली छमाही में और कम होकर 4.6 प्रतिशत पर आ गई, जो आर्थिक मंदी, कृषि उत्पादन में कमी और उच्च खाद्य मूल्य को प्रकट करती है। निजी मांग में गिरावट को काबू में करने के लिए राजकोषीय उपाय शुरू किए गए (ब्यौरों के लिए देखिए खंड II.5)। परिणामस्वरूप, सरकारी अंतिम उपभोग व्यय की वृद्धि 2008-09 की पहली छमाही के 5.5 प्रतिशत से काफी बढ़कर 2008-09 की दूसरी छमाही में 25.7 प्रतिशत पर आ गई और 2009-10 की पहली छमाही में वह 22.5 प्रतिशत पर रही, जो संकट के प्रति

चार्ट II.13: जीडीपी वृद्धि में भारांकित अंशदान मांग पक्ष से

चार्ट II.14: उपभोग और निवेश मांग में वृद्धि

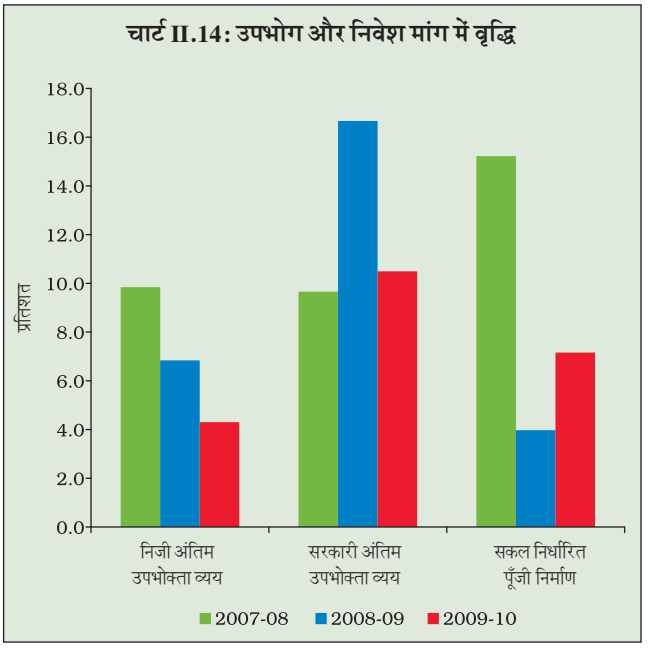

विस्तारवादी राजकोषीय अनुक्रिया को प्रकट करती है। सकल स्थिर पूंजी निर्माण (जीएफसीएफ) में बढ़ोतरी की दर 2008-09 की पहली छमाही के 6.9 प्रतिशत से गिरकर दूसरी छमाही में 1.3 प्रतिशत और फिर 2009-10 की पहली छमाही में 0.5 प्रतिशत पर आ गई।

II.1.30 वर्ष 2009-10 की दूसरी छमाही में निजी उपभोग मांग में गिरावट बनी रही, जबकि सरकारी उपभोग व्यय में आधारभूत प्रभाव के कारण उल्लेखनीय कमी आई। सकल स्थिर पूंजी निर्माण 2009-10 की दूसरी छमाही के दौरान वृद्धि का प्रमुख संचालक बनकर सामने आया और इसने 13.4 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की तथा समग्र जीडीपी वृद्धि में 46.3 प्रतिशत का अंशदान किया। वृद्धि में योगदान करने वाले अन्य महत्वपूर्ण बदलाव निवल निर्यात के रूप में सामने आये, क्योंकि दूसरी छमाही में निर्यातों में सुधार आयातों से पहले आया। यह स्थिति बढ़ते हुए निर्यातों की तुलना में आयातों में गिरावट के कारण ज्यादा रही। परिणामस्वरूप, जीडीपी वृद्धि में निवल निर्यातों का योगदान 2009-10 की पहली छमाही के ऋणात्मक 17.9 प्रतिशत से सुधारकर दूसरी छमाही में धनात्मक 22.2 प्रतिशत हो गया।

II.1.31 आपूर्ति पक्ष और मांग-पक्ष से वृद्धि के संचालकों के आकलन यह सुझाते हैं कि मजबूत रिकवरी में कृषि के न्यून योगदान और कमजोर उपभोग मांग के कारण, जिसमें ग्रामीण मांग का बड़ा हिस्सा है, वृद्धि के लाभों के विभाजनों में भी बदलाव संभावित हैं। रिकवरी को उत्प्रेरित करने के लिए अपनाए गए विस्तारपरक राजकोषीय रुख का एक प्रमुख हिस्सा नरेगा (एनआरईजीए) स्कीम के तहत उच्चतर व्यय के रूप में रहा। इस प्रकार, नीतिगत उत्प्रेरकों ने वृद्धि के लाभों के वितरण में सुधार पर ध्यान देते हुए तीव्र रिकवरी में योगदान किया।

II.1.32 आगे चलकर तो 2010-11 में बजट में राजकोषीय समेकन योजनाओं की रूपरेखा पहले ही दे दी गई है और समग्र वृद्धि में निवल निर्यातों का योगदान कम हो जाने की संभावना है, अतःइस वृद्धि के प्रमुख चालक होंगे - निजी उपभोग और निवेश मांग। हाल की तिमाहियों में निजी निवेश मांग में सुदृढ़ता पुनः वापस आई है। पूंजीगत माल के उत्पादन की प्रवृत्तियां सुझाती हैं कि यह पैटर्न बना रहेगा। औद्योगिक रिकवरी, बुनियादी ढांचा संबंधी परियोजनाओं पर सरकारी व्यय में उल्लेखनीय बढ़ोतरी, समुन्नत कारोबारी रुख और बहुत-से उद्योगों में क्षमता विस्तार की योजनाओं के पाइपलाइन में होने की स्थितियों से ज्ञात होता है कि 2010-11 में निवेश-मांग से वृद्धि को संवेग प्राप्त होगा।

बचत और पूंजी निर्माण

II.1.33 सकल बचत दर 2007-08 के 36.4 प्रतिशत से घटकर 2008-09 में जीडीपी के 32.5 प्रतिशत पर आ गई जो राजकोषीय उत्प्रेरक उपायों के प्रभाव के कारण सरकारी क्षेत्र की बचत में तेज गिरावट को प्रकट करती है। निवेश की दर 2007-08 के 37.7 प्रतिशत से घटकर 2008-09 में 34.9 प्रतिशत पर आ गई जिसका मुख्य कारण निजी निगमित क्षेत्र के निवेश में गिरावट आना है (चार्ट II.15)।

II.1.34 वर्ष 2009-10 के दौरान सरकार के राजस्व में उच्चतर घाटे के कारण सार्वजनिक क्षेत्र की बचत मंद रहने की संभावना है। उच्चतर लाभप्रदता के कारण निजी कारपोरेट बचतों में भी बढ़ोतरी की उम्मीद है।

चार्ट II.15: बचत और निवेश की दर

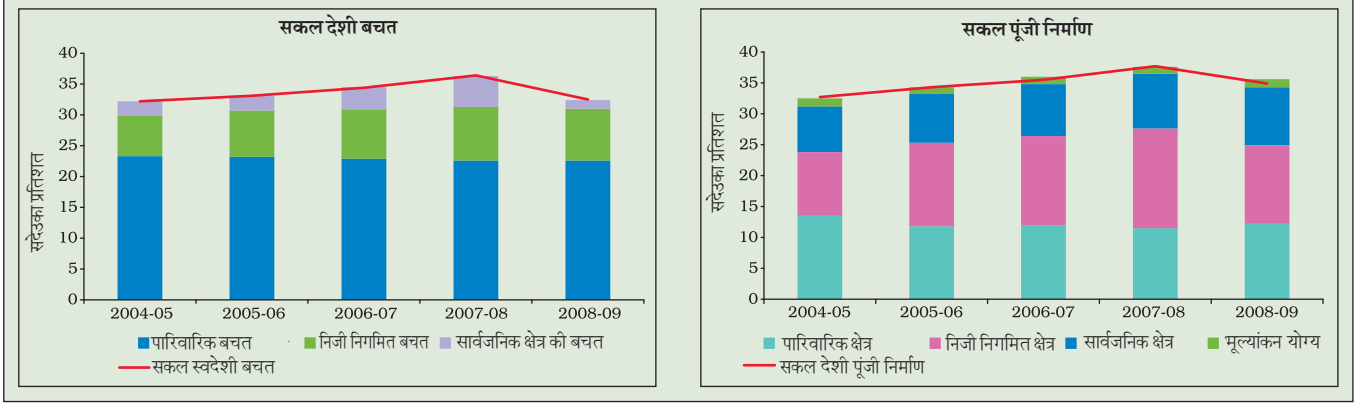

चार्ट II.16: पारिवारिक वित्तीय बचत

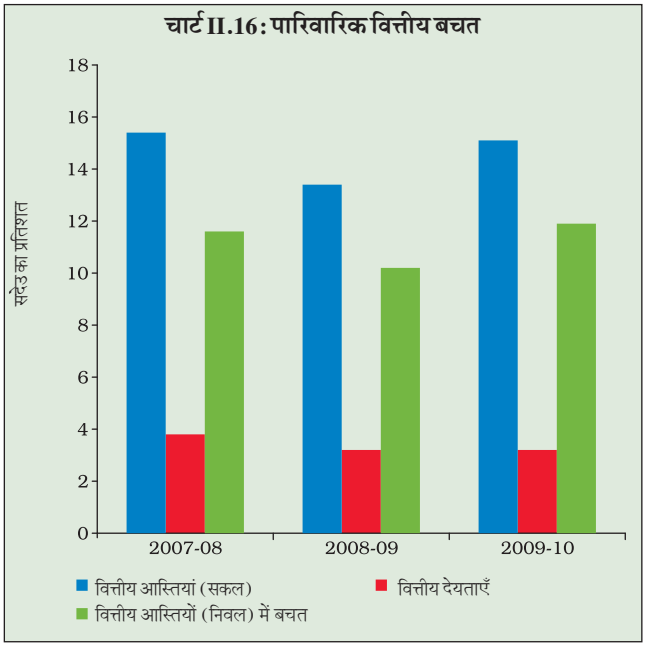

II.1.35 अद्यतन उपलब्ध सूचना के आधार पर प्राथमिक अनुमान घरेलू क्षेत्र की वित्तीय बचतों (निवल) को वर्तमान बाजार मूल्यों पर 2009-10 में जीडीपी वर्ष 2008-09 में 11.9 प्रतिशत पर रखते हैं जो वर्ष 2008-09 के 10.2 प्रतिशत के अनुमान से अधिक हैं (चार्ट II-16)। जमा राशियों पर ब्याज दरों में कमी के कारण बैंक की जमाराशियों में वृद्धि धीमी होने के बावजूद लगभग अन्य सभी घटकों के पुनर्जीवन द्वारा वर्ष 2009-10 में घरेलू वित्तीय बचतों में टर्न-अरांउड संभव हो सका। जीवन बीमा, सावजनिक भविष्य निधि, अल्प बचतों, वरिष्ठ नागरिक बचत योजनाओं और म्यूच्युअल फंडों में की गई घरेलू बचतों में तीव्र रिकवरी परिलक्षित हुई। इसके अलावा, आर्थिक वृद्धि में रिकवरी ने भी घरेलू वित्तीय बचतों की तेजी में अपना योगदान दिया।

II. मूल्य स्थिति

II.2.1 मुद्रास्फीति के पथ ने अपनी दिशा 2009-10 के दौरान दो पृथक चरणों में काफी महत्वपूर्ण रूप से बदली। पहली छमाही में मंद हेडलाइन मुद्रास्फीति ने इसे रिकवरी के लिए सहायक मौद्रिक नीति का रुख कायम रखने हेतु आवश्यक पूर्वापेक्षाएं प्रदान कीं। दूसरी छमाही में मुद्रास्फीति प्रक्रिया के बढ़ते हुए सामान्यीकरण ने नीतिगत फोकस के संतुलन में क्रमिक परिवर्तन के लिए यह जरूरी कर दिया कि मुद्रास्फीति की संभावनाओं को काबू में रखते हुए इसे रिकवरी के लिए समर्थनकारी भी रखा जाए। सुदृढ़ और व्यापक आधार वाली रिकवरी ने समझौता-परक मौद्रिक नीति रुख को धीरे-धीरे छोड़ते जाने में मदद की। वैश्विक रिकवरी की प्रवृत्ति के बारे में विद्यमान अनिश्चितताओं के कारण और सुदृढ़ देशी निजी मांग के कारण समग्र नीति का रुख वृद्धि के उद्देश्य के प्रति संवेदनशील बने रहने का है, जब कि नीतिगत फोकस का जोर मुद्रास्फीति के प्रबंधन पर रखना है।

II.2.2 साल-दर-साल आधार वाले थोक कीमत सूचकांक (डब्ल्यूपीआइ) की स्फीति वर्ष की पहली छमाही के दौरान कम रही (जून-अगस्त 2009 के दौरान नकारात्मक) और दूसरी छमाही में मार्च 2010 तक तेजी से बढ़कर यह 11.0 प्रतिशत पहुंच गई। 2008-09 की पहली छमाही में ऊंची कीमतों के आधार-प्रभाव ने 2009-10 की पहली छमाही में कम स्फीति में योगदान किया। आधार-प्रभाव के फीकेपन के साथ कम कृषि उत्पादन के कारण खाद्यान्न और तेल की कीमतों में तेज बढ़ोतरी, और अंतरराष्ट्रीय पण्य कीमतों , खासकर तेल की कीमतों में बढ़ोतरी के कारण दूसरी छमाही में मुद्रास्फीति तेज गति से बढ़ी (चार्ट II.17)। हालांकि समूचे वर्ष के दौरान मुद्रास्फीति का दबाव बना रहा, जैसा कि वर्ष के दौरान माह-दर-माह डब्ल्यूपीआइ में मजबूत बढ़ोतरी से प्रकट होता है। वर्ष के काफी बड़े भाग के दौरान कुछ पण्यों पर विशेष रूप से संकेंद्रित रहते हुए मुद्रास्फीति का दबाव रहा और यह 2009-10 की अंतिम तिमाही में सामान्य तौर पर सभी पण्यों में दिखाई देने लगा, क्योंकि और भी पण्यों की कीमतों में बढ़ोतरी हुई।

II.2.3 डब्ल्यूपीआइ बास्केट में 2009-10 के दौरान समग्र हेडलाइन मुद्रास्फीति के प्रति विभिन्न मदों/समूहों के अंशदान में उल्लेखनीय परिवर्तन आया (चार्ट II.18क)। खाद्यान्न मुद्रास्फीति 2009-10 के दौरान उच्च स्तर पर बनी रही जिसमें दिसंबर 2009 से कुछ कमी, विशेष रूप से विनिर्मित खाद्य उत्पादों में, देखी गई (चार्ट 18 ख)। विनिर्मित खाद्य कीमतों की स्फीति में आई गिरावट में चीनी के कीमत की गिरावट प्रमुख रही और इसकी कीमत मार्च 2009-जनवरी 2010 के दौरान 53.6 प्रतिशत बढ़ने के बाद जनवरी-जुलाई 2010 के दौरान 16.0 प्रतिशत गिर गयी। इस गिरावट को तथा खाद्येतर मुद्रास्फीति में वृद्धि को दर्शाते हुए, समग्र मुद्रास्फीति में खाद्यान्न मदों का अंशदान नवंबर 2009 के 100 प्रतिशत से अधिक से घटकर जुलाई 2010 तक लगभग 23 प्रतिशत तक आ गया।

चार्ट II.17 : थोक मूल्य मुद्रास्फीति की प्रवृत्तियां

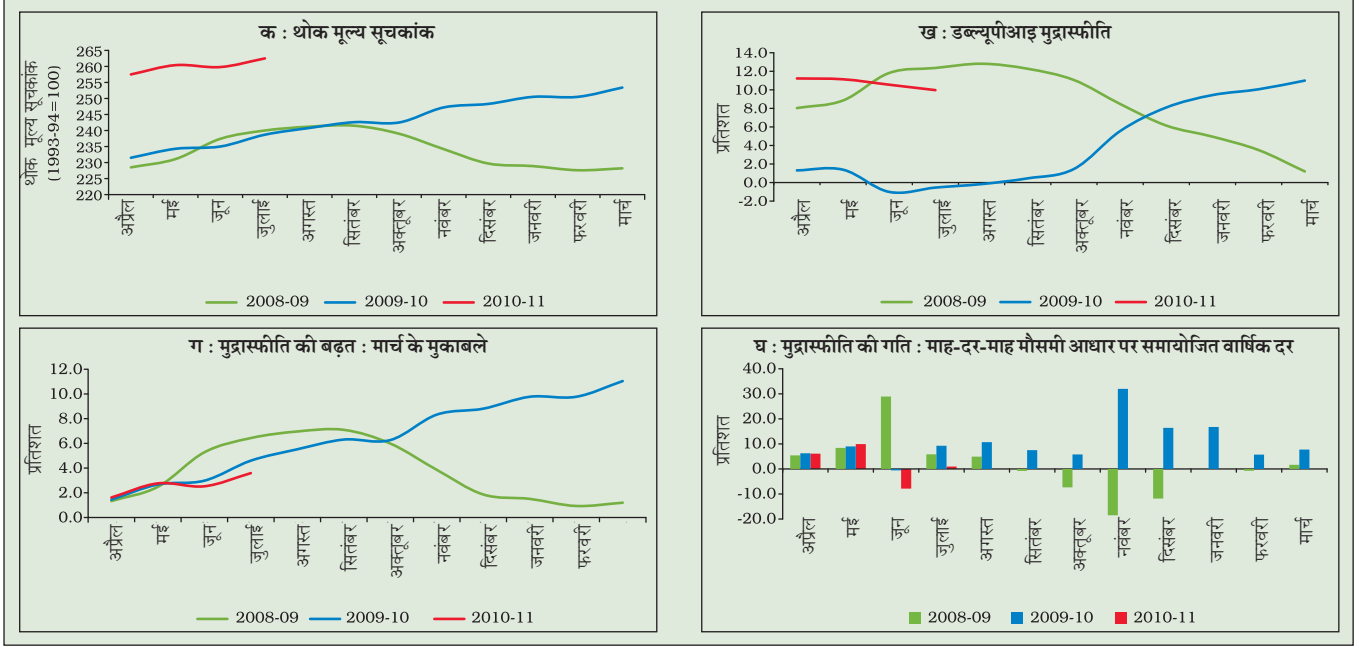

II.2.4 समग्र मुद्रास्फीति में ईंधन समूह का अंशदान जनवरी 2009 से ऋणात्मक रहा था परंतु इस वर्ष के पिछले चार महीनों से इनकी प्रवृत्तियां फिर बदल गईं। खाद्येतर विनिर्मित उत्पाद समूह का अंशदान अप्रैल-नवंबर 2009 के दौरान ऋणात्मक रहा था, वह उसके बाद बदलकर उल्लेखनीय रूप से बढ़ता गया जो मुद्रास्फीतिकारी दबावों का सामान्य बन जाना दर्शाता है। तथापि, डब्ल्यूपीआइ में साल-दर-साल होने वाली वृद्धि में खाद्यान्न तथा तेल के कीमतों में हुई वृद्धि सर्वाधिक थी, जिनका संयुक्त भारित अंशदान 59.4 प्रतिशत था (चार्ट II.19)। डब्ल्यूपीआइ मुद्रास्फीति में इन दो समूहों का अंशदान डब्ल्यूपीआइ में उनके संयुक्त भार की तुलना में सामान्यतया उच्चतर रहा है (चार्ट II.20)। यह मुद्रास्फीति के पथ पर निरंतर बने आपूर्ति दबावों को प्रकट करता है।

II.2.5 अंतरराष्ट्रीय पण्य मूल्यों, विशेष रूप से तेल, में 2009-10 के दौरान हुई उल्लेखनीय वृद्धि के कारण देशी कीमतों पर दबाव और बढ़ता गया (चार्ट II.21क)। वर्ष 2009-10 के दौरान प्रमुख अंतरराष्ट्रीय पण्य कीमतों में हुई वृद्धि देशी मुद्रास्फीति की तुलना में उल्लेखनीय रूप से उच्चतर थी, इससे कीमत नियंत्रण के एक विकल्प के रूप में रहा आयात सीमित हो गया (चार्ट II.21ख)। तथापि, अप्रैल 2010 से पण्य कीमतों में

चार्ट II.8: थोक मूल्य सूचकांक के स्रोत

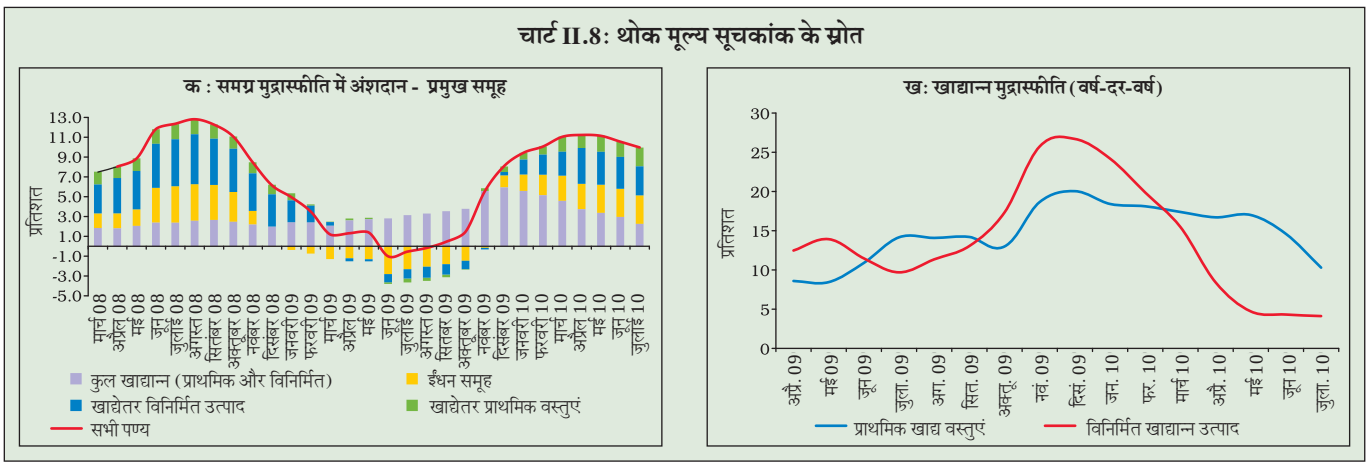

चार्ट II.19 : प्रमुख उप-समूहों में मुद्रास्फीति (डब्ल्यूपीआइ साल-दर-साल) मार्च 2010

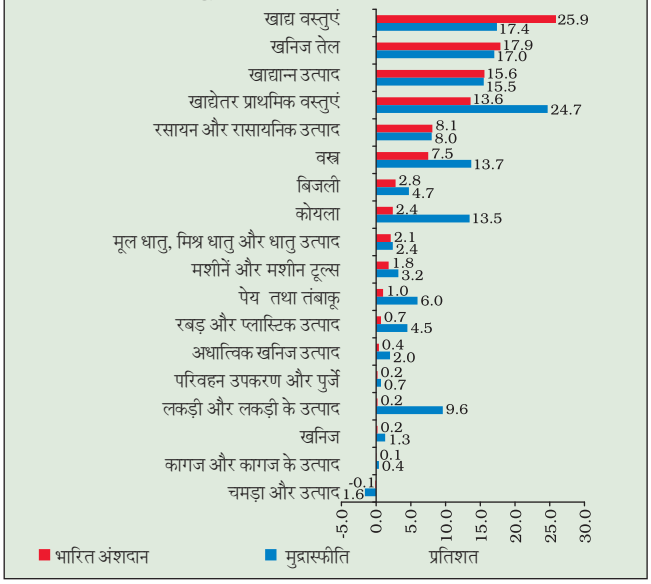

चार्ट II.20 : डब्ल्यूपीआइ में खाद्यान्न और ईंधन के संयुक्त भार के संबंध में डब्ल्यूपीआइ मुद्रास्फीति (साल-दर-साल) में उनका भारित अंशदान (डब्ल्यूसी)

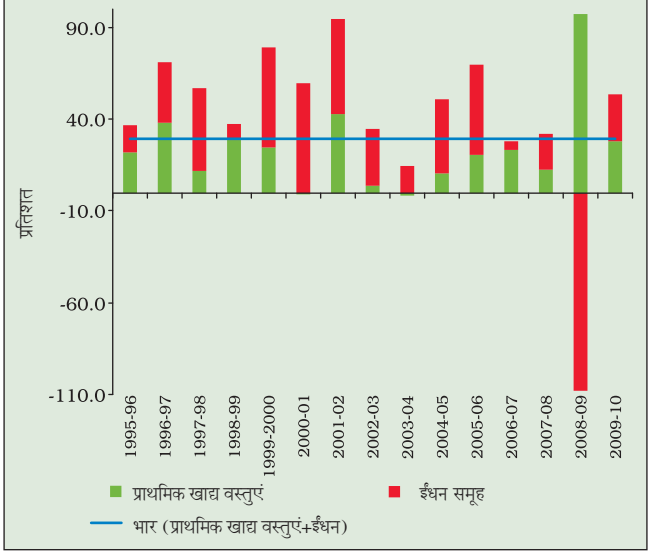

कुछ कमी नज़र आयी है क्योंकि यूरो ज़ोन में गतिविधियों के बाद उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में रिकवरी से संबंधित बृहत्तर अनिश्चितताएं पण्य बाजारों में व्याप्त हो गयीं।

II.2.6 वर्ष 2009-10 के दौरान कुछ तिमाहियों में पण्य वायदा-सौदों में सट्टेबाजी खाद्यान्नों की उच्च मुद्रास्फीति के पीछे निहित एक कारक के रूप में पायी गयी। सैद्धांतिक तथा नीतिगत चर्चाओं में काफी हद तक अनिर्णीत प्रश्न इस प्रकार थे - क्या पण्य फ्यूचर्स बाजार की गतिविधियों में हेजिंग या सट्टेबाजी की वास्तविक जरूरतें प्रकट होती हैं, और क्या ऐसी गतिविधियां व्यवस्थित रूप से पण्य कीमतों को प्रभावित करती हैं तथा क्या इससे कीमत में अस्थिरता बढ़ सकती है (बॉक्स II.4)। भारत में, फल और दूध जैसे कई पण्यों जिनका पण्य विनिमय बाज़ार में व्यापार नहीं होता, में आलोच्य वर्ष के दौरान कीमत वृद्धि पायी गयी। साथ ही, वर्ष 2007 में जिन पण्यों के व्यापार पर पाबंदी लगायी गयी थी ऐसे कतिपय पण्यों अर्थात् चावल, गेहूं, तुअर और उड़द में भी बाद की अवधि में कीमत वृद्धि पायी गयी। चीनी की ट्रेडिंग पर 2009 में पाबंदी लगाई जाने के बाद भी चीनी की कीमत निरंतर बढ़ती रही। दूसरी ओर, वर्ष 2009-10 के दौरान फ्यूचर बाजार में कारोबार वाले कतिपय अत्यावश्यक पण्यों, जैसे चना, मिरची, रेपसीड तेल और नारियल तेल की कीमतें या तो कम बनी रही या उनमें गिरावट आयी। फ्यूचर्स बाजार की गतिविधियों और पण्यों के हाज़िर कीमतों के बीच रहे संबंध के बारे में निरंतर विद्यमान

चार्ट II.21: वैश्विक तथा देशी मुद्रास्फीति

चार्ट II.21क : अंतरराष्ट्रीय पण्य मूल्यों की प्रवृत्तियां

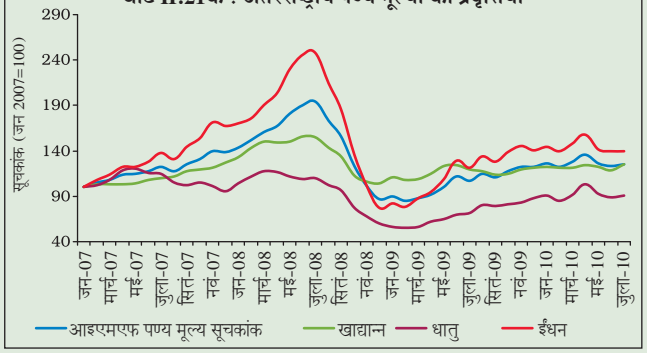

चार्ट II.21ख : प्रमुख पण्य मूल्य - वैश्विक बनाम देशी, मार्च 2010

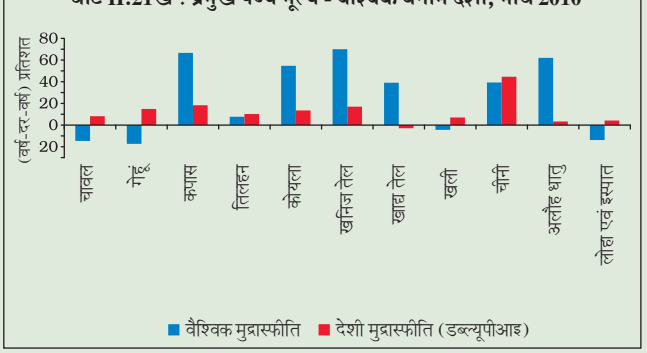

बॉक्स II.4
पण्य फ्यूचर्स बाज़ार में ट्रेडिंग का मुद्रास्फीति पर प्रभाव

पण्यों के वित्तीय लेनदेन बढ़ते जाने के साथ ही पण्यों के विनिमय केंद्रों में सट्टेबाजी की गतिविधियों की भूमिका मुद्रास्फीति के निर्धारक घटकों के रूप में मानी गई और इसे नीतिगत महत्व के मुद्दे के रूप में सामने लाया गया, विशेष रूप से तेल और धातु जैसे पण्यों तथा कृषि उत्पादों के आपूर्ति आघातों के कारण आयी उच्च मुद्रास्फीति के प्रसंगों के दौरान। अक्सर यह धारणा रहती है कि वित्तीयीकरण का चैनल विशिष्ट पण्यों के मामले में मांग और आपूर्ति पर कीमत के प्रभाव से बनने वाले असंतुलन को बढ़ा देता है, जिससे कीमत निर्धारण प्रक्रिया में आधारभूत तत्त्वों की भूमिका कमज़ोर पड़ जाती है। विशेष महत्वपूर्ण रूप से, फ्यूचर्स कीमतों को प्रभावित करने वाली सट्टेबाजी के बारे में यह तर्क दिया जाता है कि यह अंतरपणन के माध्यम से हाजिर कीमतों को प्रभावित करती है। वर्ष 2008 से अंतरराष्ट्रीय पण्य कीमतों में विद्यमान तीव्र, अस्थिरता के कारण विश्लेषण का रुख हाजिर और फ्यूचर्स बाजारों में पण्यों की कीमतों के अंतर्व्यवहारों का अध्ययन करने पर अधिक केंद्रित हुआ है। अंकटाड (यूएनसीटीएडी) (2010) के अनुसार ''आस्ति वर्गों के रूप में पण्य डेरिवेटिवों की मात्रा में हुई असाधारण वृद्धि से अल्पावधि संविभाग निवेशों में उछाल आ गया, जिसके कारण कीमतों का उनके प्रवृत्ति स्तरों से अधिक विपथन हो गया। एक आस्ति वर्ग के रूप में पण्यों के प्रति बढ़ते रुझान को पण्य बाजारों का वित्तीयकरण कहा गया है, जो पण्य फ्यूचर्स बाजारों में कीमत निर्धारण में एक अपेक्षाकृत नया घटक है...।'' आइएमएफ (2006) के अनुसार धारणाओं का संचालन बहुधा सहसंबंधों के निष्कर्षों से होता है, ना कि कार्य-कारण के आकलन से। कार्य-कारण संबंधों पर आधारित आइएमएफ के मूल्यांकन में यह सुझाव दिया गया है कि ''...इस प्राक्कलन कि सट्टेबाजी की गतिविधि (निवल दीर्घावधि गैर-वाणिज्य स्थिति द्वारा नापी गई) या तो आगे चलकर कीमत स्तरों को प्रभावित करती है अथवा निकट भविष्य में कीमतों अस्थिरता पैदा करती है। इसका समर्थन कम ही किया जा सकेगा। इसके विपरीत, इस बात के प्रमाण (विभिन्न पण्यों के संबंध में और समयांतर दोनों ही में) पाए गए हैं कि सट्टेबाजी की स्थिति के बाद कीमतों में उतार-चढ़ाव की स्थिति आती है।''

वर्ष 2009-10 में भारत में, खाद्यान्न और अत्यावश्यक पण्य कीमतों में हुई वृद्धि से कीमत प्रवृत्तियों को प्रभावित करने में पण्य फ्यूचर्स बाजार की भूमिका पर चर्चाएं गरमा गईं हैं। हाल के वर्षों में समग्र फ्यूचर्स ट्रेडिंग में कृषिक पण्यों के हिस्से में गिरावट आयी है, यह कई पण्यों की ट्रेडिंग पर लगाई गई पाबंदी को प्रकट करता है (चार्ट क)। इस बढ़ती संभावना की पृष्ठभूमि पर कि हेर-फेर की गतिविधि के कारण फ्यूचर बाजार में उथल-पुथल मचती जा रही है और मुद्रास्फीति बढ़ रही है; भारत सरकार ने 2007 में देश में कृषिक पण्यों की फ्यूचर कारोबार पर फ्यूचर कारोबार के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए प्रो.अभिजीत सेन की अध्यक्षता में एक फ्यूचर्स कारोबार पर विशेषज्ञ समिति (ईसीएफटी) गठित की थी। समिति की राय थी कि इस बारे में कोई पुख्ता निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि फ्यूचर कारोबार की शुरुआत हाजिर-कीमतों की परिवर्तनीयता में उतार या चढ़ाव से संम्बद्ध है या नही। जहां अन्य कई सारे अध्ययनों में हाजिर और फ्यूचर कीमतों के बीच के संबंध जांच की गई है वहीं अनुभवजन्य प्रमाण सम्मिश्र रहे हैं।

चार्ट क: भारत में पण्यों का फ्यूचर्स व्यापार

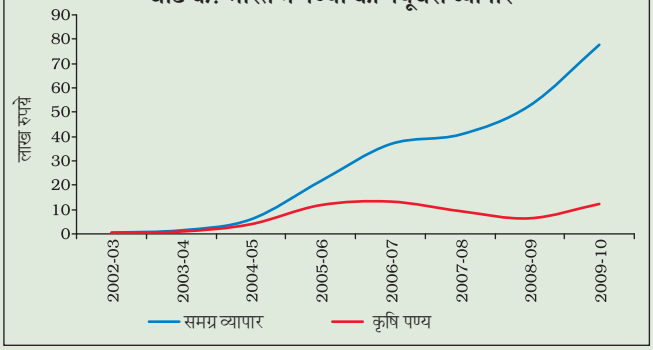

पण्यों के फ्यूचर कारोबार का उनकी हाजिर कीमतों पर हुए प्रभाव का अध्ययन करने के प्रति मानक दृष्टिकोण ग्रेंजर कॉजेलिटी टेस्ट के माध्यम से अपनाया जाता है। भारत में अनुभवजन्य विश्लेषण में अक्सर कठिनाई आती है, जिसका कारण है आंकड़ों की निरंतरता में बाधा, जो कि पण्य विनिमय केंद्रों पर कतिपय अत्यावश्यक पण्यों के फ्यूचर कारोबार पर बार-बार लगाए जाने वाले प्रतिबंधों और पुनः सूचीबद्ध करने के कारण आती है। जिस अवधि के लिए डाटा उपलब्ध है, ऐसी नमूना अवधि के संबंध में किए गए कार्य-कारण परीक्षण के परिणाम यह दर्शाते हैं कि फ्यूचर कीमतों का चीनी और उड़द के मामले में हाजिर कीमतों पर आकस्मिक प्रभाव पड़ा है (सारणी क)। यह भी देखा गया है कि उड़द, चना, गेहूं और चीनी के मामले में ग्रेन्जर कार्य-कारण ही फ्यूचर कीमतें बन जाते हैं। चीनी और उड़द के मामले में प्रतीत होता है कि ये हाजिर और फ्यूचर कीमतों के बीच द्विमार्गी कार्य-कारण संबंध प्रदर्शित करते हैं।

सारणी क : कृषि पण्यों के हाजिर तथा फ्यूचर्स कीमतों के बीच के संबंध के ग्रैन्जर कॉजेलिटी टेस्ट

पण्य	कार्य-कारण की दिशा के संबंध में परिकल्पना			
	हाजिर कीमत के लिए वायदा कीमत प्रवर्तक नहीं है		वायदा कीमत के लिए हाजिर कीमत प्रवर्तक नहीं है।	
	उल्लेखनीय*	'पी' मूल्य	उल्लेखनीय*	'पी' मूल्य
1	2	3	4	5
चीनी	हां	0.00	हां	0.00
उड़द	हां	0.00	हां	0.00
तुअर	नहीं	0.21	नहीं	0.42
गेहूं	नहीं	0.42	हां	0.04
चना	नहीं	0.74	हां	0.07
आलू	नहीं	0.14	नहीं	0.81

* यदि उल्लेखनीय है तो नगण्य परिकल्पना खारिज़ होती है।

टिप्पणी: टेस्ट 2004 से 2009 तक की अवधि के मासिक डाटा से संबंधित हैं। प्रतिबंधित पण्यों के लिए 2004-2007 तक की अवधि का डाटा प्रयुक्त किया गया है।

इस प्रकार, उक्त अनुभवमूलक विश्लेषण अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किए जानेवाले अन्य अध्ययनों की तरह किसी निष्कर्ष तक नहीं पहुंच सकते। भारत में, पण्य कीमतें, कीमत परिवर्तन के अन्य कारकों विशेष रूप से विशिष्ट पण्यों के संबंध में मांग-आपूर्ति अंतर, आयातों पर निर्भरता की मात्रा और इन पण्यों के अंतरराष्ट्रीय कीमतों में होने वाले उतार-चढ़ाव, द्वारा प्रभावित होते नज़र आते हैं।

संदर्भ :

1. भारत सरकार (2008), ''कृषक पण्य कीमतों के संबंध में वायदा-कारोबार के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए गठित विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट'', उपभोक्ता कार्य मंत्रालय, खाद्यान्न तथा सार्वजनिक वितरण।
2. आइएमएफ (2006), 'दि बूम इन नॉन फ्यूएल कमोडिटी प्राइसः कैन इट लास्ट?' वर्ल्ड इकानॉमिक आउटलुक, अक्तूबर, अध्याय-5।
3. अंकटाड (यूएनसीटीएडी) (2010) ''रिसेंट डेवलपमेंट इन की कमोडिटी मार्केटस् : ट्रेण्डस् एण्ड चैलेंजेस'' व्यापार और विकास पर संयुक्त राष्ट्र कान्फरेन्स, जेनेवा।

रही संदिग्धता के बावजूद समग्र मुद्रास्फीति स्थितियों के लिए इस बाजार की संभाव्य भूमिका के चलते फ्यूचर्स बाजार की गतिविधियों को बेहतर रूप से नियंत्रित किये जाने की जरूरत है।

II.2.7 हाल के वर्षों में कतिपय पण्यों में मांग-आपूर्ति असंतुलन बढ़ते प्रतीत हो रहे हैं जिसके कारण उनकी कीमतों में तीव्र उतार-चढ़ाव हो रहा है। कुछ खाद्य तेलों और दालों को छोड़कर, भारत ने अब तक अपनी खाद्यान्न मांग के बड़े अंश की देशी उत्पादन के जरिए पूर्ति कर ली है। गेहूं और चीनी के लिए भारत ने कभी-कभार आयातों का सहारा लिया, हालांकि आम तौर पर वह इन पण्यों का निर्यात करता है। खाद्य तेलों के मामले में मांग, देशी आपूर्ति से कई गुना अधिक थी और इस कमी को आयातों के जरिए पूरा किया गया। इन आयातों का अंश कुल खपत का लगभग 35 प्रतिशत था। दालों का उत्पादन भी मांग की तुलना में कम रहा, जिसके परिणामस्वरूप आयातों पर निर्भरता 14-15 प्रतिशत तक हो गई। भारतीय आयातों के कारण अंतरराष्ट्रीय कीमतों में बढ़ोतरी होने का जोखिम बना रहता है और इस प्रक्रिया में, कभी-कभी देश में मुद्रास्फीतिकारी दबावों को कम करने के लिए आयात का विकल्प नहीं रह पाएगा। कच्चा तेल जैसे पण्यों के मामले में जहां आयात पर निर्भरता लगभग 80 प्रतिशत तक की है, अंतरराष्ट्रीय कीमतों का देशी कीमतों में पूर्णतया अंतरण, अल्पावधि में मुद्रास्फीति को प्रभावित कर सकता है, हालांकि यह राजकोषीय स्थिति पर दबाव को कम करके कीमत स्थिरता में अपना योगदान देगा। राजकोषीय स्थिति के सुधार में योगदान देने के अलावा विनियमन ऊर्जा दक्षता और संरक्षण को भी प्रोत्साहित कर सकेगा।

II.2.8 संरचनात्मक घटकों के कारण कतिपय पण्यों की मुद्रास्फीति बढ़ सकती है जिसके कारण आपूर्ति में दीर्घावधिक गतिरोध पैदा हो सकता है। चूंकि खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि जनसंख्या में समग्र वृद्धि की अपेक्षा कम है, अतः, खाद्यान्न की निवल उपलब्धता में कमी आई है जो कीमतों में निरंतर हो रही वृद्धि से आंशिक रूप में प्रकट हुई है। साथ ही, चूंकि अर्थव्यवस्था में बहुत भारी सर्वसमावेशक वृद्धि देखी गई हैं अतः, इसके फलस्वरूप बड़े पैमाने पर जनता की आय में हुई वृद्धि द्वारा मांग के स्वरूप में बदलाव आयेगा तथा दालों, दूध और चीनी जैसी मदों की खपत बढ़ जाएगी, जिसके कारण उनके उत्पादों की कीमतों पर दबाव बढ़ेगा; उक्त उत्पादों की आपूर्ति करना बढ़ती मांग के कारण मुश्किल बन जाएगा।

II.2.9 हाल के महीनों में, शीर्ष मुद्रास्फीति पर पड़ने वाले अधिकांश दबाव या तो नियंत्रित कीमतों (जैसे कोयला, लौह-अयस्क, उर्वरक, बिजली और पेट्रोलियम उत्पाद) में संशोधन कर की गई वृद्धि के कारण अथवा मुद्रास्फीति की देरी से की गई रिपोर्टिंग के कारण रहे जो संशोधित डब्ल्यूपीआइ डेटा में प्रकट है। न्यूनतर नियंत्रित कीमतें दमित मुद्रास्फीति की द्योतक है और जब इन कीमतों में संशोधन कर वृद्धि की जाती है तब वास्तविक मुद्रास्फीति रेखा उर्द्धगामी हो जाती है। पेट्रोलियम उत्पादों की कीमतों में जून 2010 में की गई वृद्धि मात्र से ही हेडलाइन मुद्रास्फीति में तत्काल एक प्रतिशत अंक की बढ़ोतरी हो गई और प्रत्याशित समग्र प्रभाव (दूसरे दौर में उच्चतर निविष्टि लागतों के जरिए क्षेत्रों के बीच उसके संपूर्ण प्रभाव अंतरण सहित) करीब 2.9 प्रतिशत अंक हो सकता है।

II.2.10 मौद्रिक नीति के संचालन के लिए मुद्रास्फीति के स्रोतों की पहचान करना महत्वपूर्ण होता है। मांग के दबावों की पृष्ठभूमि में मौद्रिक नीति को कठोर बनाकर मांग के मौद्रिक नीति के प्रति संवेदनशील भाग को नियंत्रित रखते हुए वांछित परिणाम पाए जा सकते हैं। तथापि, जब स्फीतिकारी दबावों पर प्रतिकूल आपूर्ति आघातों का आधिक्य रहता है तब मौद्रिक नीति कीमतों से पड़ने वाले दबावों को सीमित करने में कम प्रभावी सिद्ध होती है। तथापि, आपूर्तिगत आघात आम तौर पर सापेक्ष कीमतों को बदल देते हैं और कतिपय परिस्थितियों में, सापेक्ष कीमत प्रवृत्तियों के कारण मौद्रिक नीतिगत कार्रवाइयां करना जरूरी हो जाता है, जैसा कि 2009-10 की अंतिम तिमाही में भारत की स्थिति बन गई थी (बॉक्स II.5)।

II.2.11 चूंकि वर्ष 2009-10 के दौरान मुद्रास्फीतिकारी स्थिति अधिकांशतः आपूर्ति के संबंध में उत्पन्न बाधाओं के कारण उभरी थी, अतः सरकार ने अत्यावश्यक पण्यों की देशी उपलब्धता में सुधार लाने के लिए कई अल्पावधि तथा मध्यावधि राजकोषीय एवं प्रशासनिक उपाय किए और इसके द्वारा मुद्रास्फीति पर पड़ने वाले दबावों को कम किया। इनमें शामिल हैं - चावल, गेहूं, दालें, खाद्य तेल (कच्चा), चीनी और मकई जैसी चुनिंदा खाद्यान्न वस्तुओं के आयात शुल्क को घटाकर शून्य बनाना; सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) के माध्यम से बिक्री के लिए अनाज का अतिरिक्त आबंटन और भारतीय खाद्य निगम (एफसीआई) द्वारा खुले बाजार में बिक्री के लिए गेहूं का आबंटन; बासमति से इतर चावल, खाद्य तेलों और दालों के निर्यात पर पाबंदी, आयातित दालों और खाद्य तेलों का पीडीएस के माध्यम से घटी (सहायता-प्राप्त) दरों पर संवितरण और उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से प्रमुख कृषि पण्यों के न्यूनतम समर्थन कीमत में वृद्धि।

बॉक्स II.5
आपूर्तिगत आघात, सापेक्ष कीमत परिवर्तन और मौद्रिक नीति की भूमिका

मुद्रास्फीति कीमत स्तर में होनेवाली सामान्य वृद्धि को इंगित करती है जिसे पारंपरिक रूप से कीमत सूचकांक की वृद्धि दर के रूप में नापा जाता है। मुद्रास्फीति के ऐसे पैमाने को अंतर्निहित स्फीतिकारी दबाव के उचित प्रकटनकर्ता के रूप में देखा जा सकता है, लेकिन केवल तभी जब चुनिंदा समग्र सूचकांक के समूह (बास्केट) के भीतर पण्यों की सापेक्ष कीमतें स्थिर रहें। शीर्ष मुद्रास्फीति के नाप द्वारा समूह के समस्त पण्यों की कीमतों में समान दिशा में और समान मात्रा में होने वाली घट-बढ़ का पता शायद ही चल पाता है। समूह के पण्यों के संबंध में कीमत अस्थिरता की विभिन्न प्रवृत्तियां और संबंधित कीमतों में इसके फलस्वरूप आने वाले बदलाव से औसत मुद्रास्फीति कम प्रातिनिधिक बन जाती है, विशेष रूप से मौद्रिक नीति के संचालन के प्रयोजन के लिए।

हाल के वर्षों में, सापेक्ष कीमतों में आनेवाले बदलाव भारत के लिए महत्वपूर्ण बन गए हैं, विशेष रूप से, मुद्रास्फीति के समग्र पथ को अनुकूल बनाने के संबंध में विद्यमान आपूर्ति आघातों के आधिक्य के कारण। इस संदर्भ में, मौद्रिक नीति संचालन के लिए चार विशिष्ट मुद्दे महत्वपूर्ण हैं: (क) पण्यों के बीच मुद्रास्फीति के संबंध में विद्यमान विभिन्न प्रकार की प्रवृत्तियों के चलते शीर्ष मुद्रास्फीति से संभाव्य भ्रामक सूचना, (ख) स्वयं उच्चतर सापेक्ष कीमत-भिन्नता के जोखिम के कारण शीर्ष मुद्रास्फीति उच्चतर होना, (ग) 'मांग' संबंधी घटकों में सापेक्ष कीमत परिवर्तनों के लिए आपूर्ति ट्रिगर को अलग करने की चुनौती और अत्यधिक महत्वपूर्ण रूप से (घ) सापेक्ष कीमतों में होनेवाले बदलाव से पैदा होनेवाले मुद्रास्फीतिकारी दबावों को रोकने के लिए मौद्रिक नीति क्या कर सकती है।

भारत में, निहित मुद्रास्फीति प्रवृत्ति को प्रभावित करने वाले आपूर्ति आघातों के आधिक्य की बात ग्रेन्जर कॉजेलिटी टेस्ट द्वारा स्वीकार हुई है (सारणी-क)। टेस्ट के परिणामों से 'खाद्यान्न तथा ईंधन मुद्रास्फीति' के साथ एक दिशावाली कार्य-कारण की मौजूदगी सामने आती है, जो समग्र मुद्रास्फीति में बदलाव लानेवाले आपूर्ति आघातों, ग्रेन्जर को प्रकट करती है। इस टेस्ट के लिए कोर मुद्रास्फीति के एक स्थूल नाप के रूप में ''तेल से इतर खाद्येतर घटक'' को प्रयुक्त किया जाता है। हालांकि, ये परिणाम केवल 10 प्रतिशत स्तर तक ही उल्लेखनीय हैं फिर भी, परिणाम दूसरे दौर के संभाव्य प्रभावों में योगदान देनेवाले आपूर्ति आघातों का संकेत देते हैं।

सारणी क : आपूर्ति आघातों और निहित मुद्रास्फीति के बीच कार्य- कारण संबंध

(नमूना अप्रैल 1994 से मार्च 2010 तक)

अमान्य प्राक्कलन	एफ सांख्यिकी	संभाव्यता
कोर मुद्रास्फीति खाद्यान्न और ईंधन मुद्रास्फीति का ग्रेंजर कारण नहीं है।	1.09	0.34
खाद्यान्न और ईंधन मुद्रास्फीति कोर मुद्रास्फीति का ग्रेंजर कारण नहीं है।	2.73	0.07

दूसरे दौर के प्रभाव सापेक्ष कीमतों के अंतरणों से समग्र मुद्रास्फीति को होनेवाले जोखिमों के द्योतक हैं, जो मूलतः आपूर्ति आघातों के ज़रिए उत्पन्न होते हैं। अक्सर, दूसरे दौर का प्रभाव एक अंतराल के बाद आता है और इसका कार्य मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं, वेतन समझौतों और फर्मों की कीमत निर्धारण प्रवृत्ति (रुख) के ज़रिए होता है। तथापि, व्यावहारिक दृष्टि से, पहले और दूसरे दौर के प्रभाव में अंतर करना मुश्किल है। सापेक्ष कीमतों में किसी परिवर्तन का कारण आपूर्ति आघातों को मानना भी सही नहीं होगा। एक संरचनागत 'वीएआर' ढांचे पर आधारित विभिन्नता विघटन विश्लेषण भारत की शीर्ष मुद्रास्फीति पर आपूर्ति आघातों के प्रभाव को उजागर करता है। प्रतीत होता है कि दो वर्षों की अवधि में शीर्ष मुद्रास्फीति में हुए परिवर्तन (अंतर) का लगभग एक-तिहाई हिस्सा आपूर्ति आघातों द्वारा स्पष्ट हुआ है(खाद्यान्न और तेल)। यह भी नोट किया जाना चाहिए कि शीर्ष मुद्रास्फीति में आये अंतर पर तेल आघातों (करीब 20 प्रतिशत) का प्रभाव खाद्यान्न आघातों (करीब 14 प्रतिशत) की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक है। अनुभव आधारित परिणाम यह भी दर्शाते हैं कि शीर्ष मुद्रास्फीति में आए उतार-चढ़ाव का तकरीबन 54 प्रतिशत स्वयं शीर्ष मुद्रास्फीति पर पड़ने वाले अवशिष्ट आघातों के कारण ही था और यह मुद्रास्फीति की प्रक्रिया को वर्णित करने में मुद्रास्फीति सातत्य और मुद्रास्फीतिकारी प्रत्याशाओं की भूमिका स्पष्ट करता है।

जहां तक, सापेक्ष कीमत गतिविधियों के प्रति मौद्रिक नीति की प्रतिक्रियाओं का प्रश्न है, आम तौर पर यह तर्क दिया जाता है कि आपूर्ति आघातों के फलस्वरूप होनेवाली सापेक्ष कीमत अस्थिरता को नियंत्रित करने में मौद्रिक नीति की कार्रवाइयां कारगर सिद्ध नही हो सकती। कतिपय मदों के कीमतों में आपूर्ति आघातों के कारण होनेवाली अस्थायी बढ़ोतरी के लिए मौद्रिक नीति को प्रतिक्रिया देने की जरूरत नहीं। इसके बदले, यदि सापेक्ष कीमतों में होने वाले परिवर्तन स्थायी (अर्थात् सापेक्ष कीमत में परिवर्तन निरंतर बने रहते हैं) हैं और इनके कारण दूसरे दौर के प्रभाव तथा प्रतिकूल मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं के ज़रिए सामान्यतः उच्चतर मुद्रास्फीति हो जाती हो तो मौद्रिक नीति को मुद्रास्फीतिकारी प्रत्याशाओं को नियंत्रित करने की भूमिका निभानी होगी। जैसा कि मिश्किन (2007) का आग्रह रहा है, प्रतिकूल आपूर्ति आघातों के फलस्वरूप होनेवाली उच्चतर मुद्रास्फीति मौद्रिक कठोरता की नीति का प्रयोग नहीं किया जाता है, ''...जब तक कि ऊर्जा की सापेक्ष कीमतों में किए जाने वाले स्थायी परिवर्तन के कारण मुद्रास्फीति की निहित प्रवृत्ति दर में परिवर्तन नहीं आ जाता।'' तथापि, मुद्रास्फीति और वृद्धि के बीच अल्पावधि प्रतिसंतुलन के होते हुए मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के लिए की गई कार्रवाई से कुछ सतही वृद्धि हो सकती है। इस परिप्रेक्ष्य में, फेल्डस्टिन (2009) ने पाया कि किसी केंद्रीय बैंक के लिए एक उचित नीति यह होगी कि वह इस बात को स्वीकार करें ''...कि एक कठोर मौद्रिक नीति अल्पावधि में वृद्धि को धीमा कर देगी... (परंतु) दीर्घावधि के लिए उससे मजबूत संवृद्धि एवं कम-से-कम जोखिम होगा।''

सामान्य कीमत सूचकांक के भीतर पण्यों के बीच मुद्रास्फीति में विद्यमान परिवर्तनीयता को देखते हुए कीमतों में सापेक्ष परिवर्तनों का पता लगाया जा सकता है। कीमतों की सापेक्ष परिवर्तनीयता (आरपीवी) के सूचकांक का मापन समग्र मुद्रास्फीति के संदर्भ में पण्य मुद्रास्फीति में पाए जानेवाले अंतरों के भारित जोड़ के रूप में किया जाता है:

$$RPV_t = \sqrt{\sum_{i=1}^{n} w_{it} (\pi_{it} - \pi_t)^2}$$

(जहां π_{it} पण्य i में t अवधि में मुद्रास्फीति है, वहां π_t अवधि में मुद्रास्फीति की औसत दर है और Wit कीमत सूचकांक में पण्य i का भारांक है)।

(जारी...)

(...समाप्त)

चार्ट क: मुद्रास्फीति तथा सापेक्षित मूल्य परिवर्तनीयता

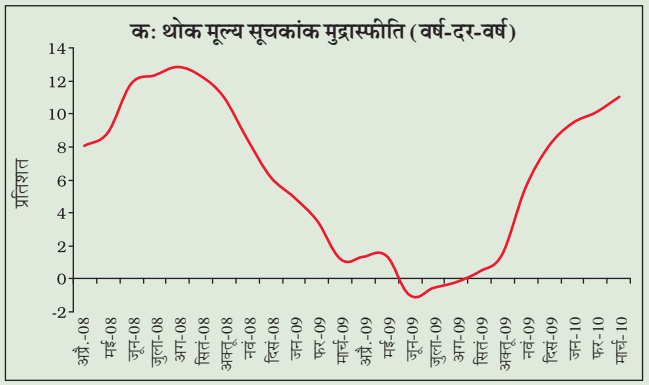

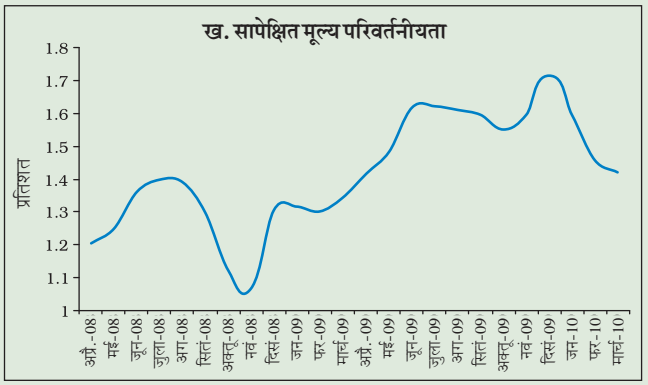

भारत में, 2009-10 की पहली छमाही में मुद्रास्फीति निम्न बनी रहने के बावजूद, कीमत की सापेक्ष परिवर्तनीयता बहुत अधिक बढ़ी, जो आपूर्ति आघातों की मौजूदगी को दर्शाती है (चार्ट क)। नवंबर 2009 से, मुद्रास्फीति उच्च स्तर की होने के बावजूद कीमत की सापेक्ष परिवर्तनीयता में कमी आई है, जो यह दर्शाती है कि मुद्रास्फीति अधिकाधिक सामान्य होती जा रही है और इस कारण ही, मुद्रास्फीतिकारी प्रत्याशाओं को नियंत्रित करने के लिए यथोचित मौद्रिक नीति उपाय करना जरूरी है।

संदर्भ:

1. फेल्डस्टिन, मार्टिन (2009), *''बियॉंड प्राइस स्टैबिलिटी: दि चैलेंजेस अहेड''* बीआइएस पेपर्स सं.45, अंतरराष्ट्रीय निपटान
2. मिश्किन, फ्रेडरिक एस (2007), *''हेडलाइन वर्सेस कोर इन्फ्लेशन इन दि कंडक्ट ऑफ मॉनीटरी पॉलिसी''* बिजनेस साइकल्स, इंटरनेशनल ट्रान्समिशन एंड मैक्रोइकानॉमिक पॉलिसीज कान्फ्रेंस, एचईसी मॉन्ट्रियल, में दिया गया भाषण अक्तूबर 20.

II.2.12 वर्ष 2009-10 की अंतिम तिमाही के दौरान भारत में कीमतों पर मांग का दबाव उत्पन्न हुआ जो आयात वृद्धि में जबरदस्त पुनरुत्थान, कारपोरेट बिक्री में प्रमुख कायापलट, क्षमता उपयोग में वृद्धि और निजी क्षेत्र से ऋण मांग में पुनरुत्थान जैसे कई संकेतकों से दिखाई दे रहा था। इसके अलावा निजी मांग में रिकवरी के साथ ही कार्पोरेट की कीमत निर्धारण शक्तियों में भी सुधार परिलक्षित हो रहा था जो रिज़र्व बैंक के औद्योगिक संभावना सर्वेक्षण (इंडस्ट्रियल आउटलुक सर्वे) में रिपोर्ट की गई वास्तविक प्रतिक्रिया की प्रवृत्तियों के अनुसार स्पष्ट है (चार्ट II.22)। यद्यपि कारपोरेट ने अधिकांशतया यही आशा की थी वे उत्पाद कीमतों को बढ़ा सकेंगे, क्योंकि इनपुट लागत में बढ़ोतरी की आशा थी, यह स्थिति सामान्य मुद्रास्फीति पर आपूर्ति-आघातों के लागत-संवर्धित प्रभाव को दिखाती है।

II.2.13 वर्ष 2009-10 के दौरान भारत में थोक और उपभोक्ता कीमत सूचकांकों द्वारा नापी गई मुद्रास्फीति के बीच अंतर बने रहना मुद्रास्फीति की प्रवृत्तियों का अन्य महत्वपूर्ण पहलू था (चार्ट II.23)। यह अंतर आंशिक रूप से खाद्यान्न में उच्च मुद्रास्फीति के परिणामस्वरूप था जिसका थोक कीमत सूचकांक की तुलना में उपभोक्ता कीमत सूचकांक में उच्चतर भार है। वर्ष 2009-10 की दूसरी छमाही में, थोक कीमत सूचकांक मुद्रास्फीति में वृद्धि और उपभोक्ता कीमत सूचकांक मुद्रास्फीति में सुधार के कारण यह अंतर कुछ मात्रा में कम हुआ।

चार्ट II.22 : कच्चे माल की लागत और बिक्री मूल्य की प्रत्याशाएं : रिज़र्व बैंक का औद्योगिक संभावना सर्वेक्षण

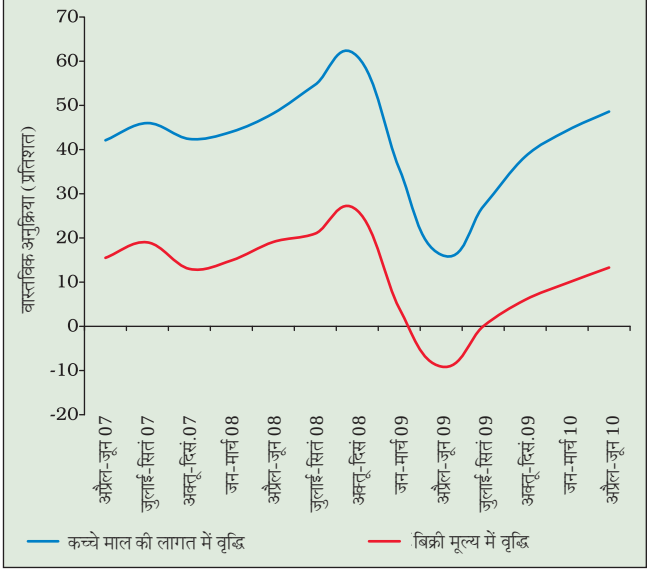

चार्ट II.23 : उपभोक्ता मूल्य सूचकांक और थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति

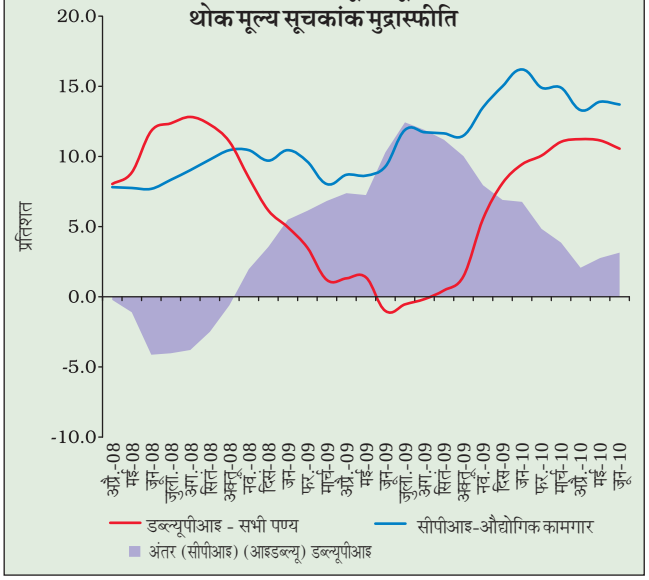

चार्ट II.24 : राज्य-वार उपभोक्ता मूल्य सूचकांक - कृषि मजदूर मुद्रास्फीति (साल-दर-साल प्रतिशत, मार्च 2010)

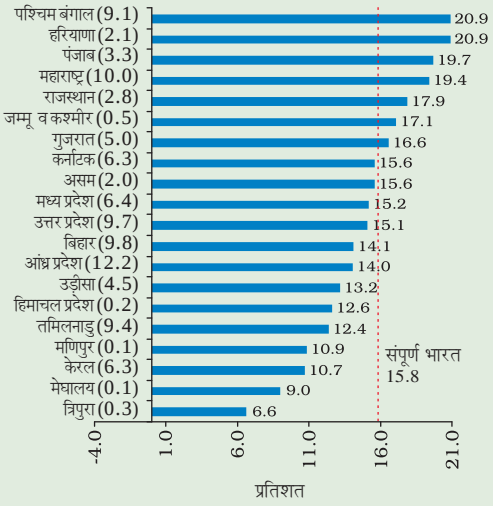

कोष्ठक के आंकडे सीपीआई में राज्यों के भारांको को दर्शाते हैं।

II.2.14 पण्यों और मूल्य सूचकांकों में मुद्रास्फीति के अंतर के अलावा राज्यों के बीच भी मुद्रास्फीति में अंतर होना उल्लेखनीय है (चार्ट II.24)।

II.2.15 जब उच्च मुद्रास्फीति बनी रहती है तब वह न केवल अर्थव्यवस्था की समग्र संभावनाओं को कम करती है बल्कि सम्मिलित वृद्धि की प्रगति में भी बाधा डालती है। मुद्रास्फीति के कारण संसाधनों के आबंटन में व्यवधान और देशी बचतों में गिरावट संभव है जिसके परिणामस्वरूप, वृद्धि पर विपरीत असर हो सकता है। मुद्रास्फीति से जुड़ी अनिश्चितता निवेश और खपत आयोजना को जटिल बना सकती है, जो पूंजी संचय और बचतों को प्रभावित कर सकती है। कभी-कभार मुद्रास्फीति उत्पादन गतिविधियों और उत्पादकता बढ़ानेवाले निवेश से हटकर सट्टा और जमाखोरी पर भी अंतरित हो सकती है।

II.2.16 सम्मिलित वृद्धि के लिए जोखिम के कारण जनसंख्या के विभिन्न वर्गों पर मुद्रास्फीति का विषम प्रभाव पड़ सकता है। जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग अपनी बहुत ही मामूली आय को मुद्रास्फीति की तुलना में नहीं बढ़ा सकता और इस प्रक्रिया में उसकी वास्तविक आय में ही गिरावट हो सकती है। खाद्यान्न में उच्च मुद्रास्फीति का प्रभाव और अधिक विषम हो सकता है क्योंकि गरीबों की आय का बहुत बड़ा अनुपात खाद्यान्न वस्तुओं की खपत के लिए विनियोजित किया जाता है। इस संभावना को देखते हुए कि उच्च मुद्रास्फीति के कारण वास्तविक आय में जो अधिकतम हानि अनुभव करते हैं, वे उच्च वृद्धि से भी अधिक लाभान्वित नहीं होते, मुद्रास्फीति के बने रहने की संभाव्यता में मुद्रास्फीति को नियंत्रित रखना मौद्रिक नीति के लिए अधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य बन जाता है(बॉक्स II.6)। हाल ही में भारत में, मुद्रास्फीति के बने रहने के प्रमाण ने यह संकेत दिया है कि वृद्धि और अल्पकालीन मुद्रास्फीति के

बॉक्स II.6
भारत में मुद्रास्फीति का सातत्य

मुद्रास्फीति को दीर्घस्थायी तब कहा जाता है जब बिना किसी बाधा के वह अपने पुराने स्तरों के आसपास बने रहने की प्रवृत्ति दर्शाती है। यदि मुद्रास्फीति आपूर्ति के आघातों के कारण अचानक परिवर्तन दर्शाती है और उसके बाद उसमें कोई सुधार नहीं आता, तो उस संदर्भ में मुद्रास्फीति के बने रहने का मतलब है मुद्रास्फीति की प्रवृत्ति का झुकाव धीरे-धीरे दीर्घकालीन औसत मान को बढ़ाने की तरफ जा रहा है। मुद्रास्फीति निरंतर जितनी उच्चतर रहेगी, आपूर्ति आघातों के बाद दीर्घकाल के लिए मुद्रास्फीति को नीचे लाने की दृष्टि से उतने ही सशक्त मौद्रिक उपाय अपनाने होंगे। यद्यपि मुद्रास्फीति के सातत्य को अक्सर एक महत्वपूर्ण सूचना के रूप में देखा जाता है, जिसे मौद्रिक नीति बनाते समय ध्यान में लिया जाना चाहिए।

फिर भी, इस बात पर इस विषय के विशेषज्ञों में बहुत कम सहमति है कि मुद्रास्फीति के दीर्घावधि सातत्य को सर्वोत्तम तरीके से कैसे नापा जाए। मुद्रास्फीति के सातत्य का स्वरूप समय के साथ-साथ और विभिन्न आपूर्ति आघातों से बदल सकता है। अर्थशास्त्र के साहित्य में मुद्रास्फीति की निरंतरता को मापने के दो भिन्न दृष्टिकोण पाये जाते हैं:- एक में तो मुद्रास्फीति के सातत्य को सामान्य एक चर समय श्रृंखला की प्रस्तुति के संदर्भ में मुद्रास्फीति को परिभाषित और मूल्यांकित किया जाता है, जबकि दूसरे में संरचनाबद्ध अर्थमितीय मॉडल का प्रयोग किया जाता है जिसका लक्ष्य मुद्रास्फीति के बर्ताव की व्याख्या करना है। एक चर (यूनिवैरिएट)

(जारी...)

(समाप्त...)

दृष्टिकोण (जिसे घटते स्वरूप का दृष्टिकोण भी कहा जाता है) के तहत मुद्रास्फीति के लिये सामान्य ऑटोरिग्रेसिव मॉडल का प्रयोग किया जाता है और इस आटोरिग्रेसिव प्रक्रिया के विचलन रहित घटक के साथ आघातों का आकलन किया जाता है। बहुचर (मल्टीवैरिएट) आधारित दृष्टिकोण अव्यक्त या सुव्यक्त रूप से मुद्रास्फीति और इसके निर्धारकों के बीच साधारण आर्थिक संबंधों को मानती है (सामान्यतः संरचनागत वी.ए.आर.मॉडल के माध्यम से) और मुद्रास्फीति की निरंतरता को इस प्रकार देखती है जैसे आघातों के प्रभाव की समयावधि को मुद्रास्फीति पर मुद्रास्फीति के निर्धारकों के आघातों के प्रभावों की आवधिकता के साथ संदर्भित किया जा रहा हो। यद्यपि एकचर आधारित दृष्टिकोण में मुद्रास्फीति पर आघातों को अभिनिर्धारित नहीं किया जाता हैं, जबकि बहुचर आधारित दृष्टिकोण में यह प्रयास किया जाता है कि विभिन्न आघातों को अभिनिर्धारित किया जाए ताकि आघात विशेष के लिए निरंतरता विश्लेषण में सुविधा रहे।

भारत में मुद्रास्फीति निरंतरता पर अनुभवजन्य अध्ययन करने पर विरोधी परिणाम मिलते हैं। खुन्द्रकपम (2009) ने यह पाया कि मुद्रास्फीति के लिए वैकल्पिक उपायों के बावजूद भारत में मुद्रास्फीति की निरंतरता का स्तर तुलनात्मक रूप से कम है, यद्यपि 'थोक कीमत सूचकांक' के घटकों में 'विनिर्माण' मुद्रास्फीति सबसे अधिक दीर्घस्थायी है।

भारत में मुद्रास्फीति सातत्य का स्वरूप समझने के लिए प्रयोग में लाए गए विभिन्न दृष्टिकोण लगभग एक जैसे परिणाम दर्शाते हैं। इनमें निम्नलिखित शामिल हैं: (क) परंपरागत यूनिट रूट टेस्ट्स : एक यूनिट रूट की एक शृंखला में अपरिमित धारणाशक्ति होती है यानि कि 't' अवधि में हुए एक आघात का परिणाम सभी अवधियों पर होता है t+k; k>0 इस प्रकार एक यूनिट रूट की एक शृंखला पर हुए किसी भी आघात का परिणाम हमेशा के लिए बना रहता है; (ख) मुद्रास्फीति शृंखला का पहला स्वतः सहसंबंध; (ग) मुद्रास्फीति शृंखला का ऑटोकोरिलेशन फंक्शन; (घ)मुद्रास्फीति के लिए ऑटोरिग्रेसिव गुणांकों का जोड़। अनुभव के आधार पर, इन उपायों की अप्रैल 1995 से अप्रैल 2010 तक के थोक कीमत सूचकांक के आंकड़े (आधार:1993-94=100) इस्तेमाल करके जांच की गई है। वर्ष 2000 से मौद्रिक नीति चलनिधि समायोजन सुविधा के अंतर्गत परिचालित की जाती है। इस प्रकार, मुद्रास्फीति के सातत्य के इस अंतरण का मूल्यांकन करने के लिए, नमूना अवधि को दो उप अवधियों में अर्थात अप्रैल 1995 से मार्च 2000 तक और अप्रैल 2000 से अप्रैल 2010 तक, विभाजित किया गया है। परंपरागत यूनिट रूट टेस्ट से यह ज्ञात होता है कि विभाजित नमूना और संपूर्ण नमूने के लिए, थोक कीमत सूचकांक आधारित मुद्रास्फीति में, खासकर उक्त नमूने के बादवाले आधे हिस्से में कोई यूनिट रूट नहीं होता (सारणी क)। इसका मतलब है वर्ष 2000 के बादवाली अवधि में मुद्रास्फीति की प्रक्रिया कम बनी रही थी।

सारणी क : मुद्रास्फीति के लिए यूनिट रूट परीक्षण

	पी - मूल्य (शून्य परिकल्पना: श्रृंखला में यूनिट मूल है		
	अप्रैल 95 से अप्रैल 10	अप्रैल 95 से मार्च 00	अप्रैल 00 से अप्रैल 10
एडीएफ टेस्ट	0.0154	0.0437	0.0000
फिलिप्स पेरॉन	0.0019	0.0453	0.0332

दूसरी बात, मुद्रास्फीति सातत्य के मापन के एक सरल उपाय, स्वतः सहसंबंधी गुणांक के पहले क्रम ने, सातत्य का समय-समय पर बदलता

चार्ट क : रोलिंग नमूना (3 वर्षीय चित्र के साथ) मुद्रास्फीति के स्वत:सहसंबंधी का पहला क्रम

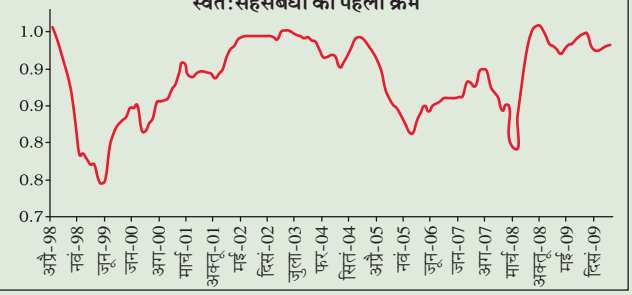

चार्ट ख : थोक कीमत सूचकांक मुद्रास्फीति का स्वत-सहसंबंध

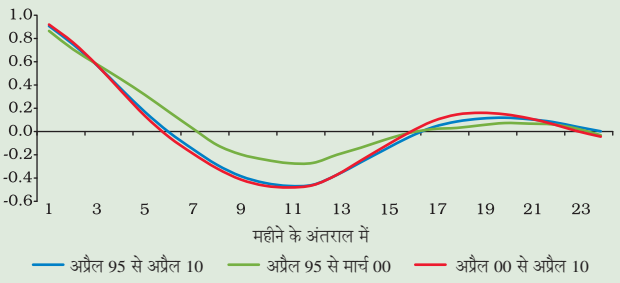

स्वरूप दर्शाया है (चार्ट क)। यद्यपि, हाल की अवधि में मुद्रास्फीति सातत्य अधिक स्पष्ट है, मुद्रास्फीति ऑटोकोरिलेशन की यह संरचना उसका सातत्य नकार नहीं रही है, बल्कि केवल मुद्रास्फीति का कम सातत्य दर्शा रही है (सारणी ख)।

सारणी ख: एआर (के) प्रक्रिया पर आधारित सातत्य परीक्षण

	अप्रैल 95 से अप्रैल 10	अप्रैल 95 से मार्च 00	अप्रैल 00 से अप्रैल 10
एआर गुणांक का जोड़	0.8431(एआर(3))	0.8416(एआर(1))	0.8380(एआर(3))
पी-मूल्य	<.0001	<.0001	<.0001

इस प्रकार, विभिन्न अनुमानों से यह सूचित होता है कि 2000 के बाद की अवधि में मुद्रास्फीति के सातत्य में गिरावट आने के बावजूद वह एक वास्तविकता रही है। भारत में विशेष रूप से खाद्यान्न और खाद्यतेल समूहों के मामले में मुद्रास्फीति की उच्च डिग्री के अनुभवजन्य साक्ष्य के आधार पर मोहन्ती (2010) ''....ने इस बात पर बल दिया है कि वांछित लक्ष्य प्राप्त करने के लिए मौद्रिक नीति के समायोजन की गति निर्धारित करने में मुद्रास्फीति सातत्य की सीमा महत्वपूर्ण है।''

संदर्भ

1. खुन्द्रकपम के.जीवन (2008): ''हाउ परसिस्टेंट इज इन्फ्लेशनरी प्रोसेस, हैज़ इट चेंज़्ड?'' रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया ऑकेजनल पेपर्स, 29(2), 23-45..
2. मोहन्ती दीपक (2010) ''इन्फ्लेशन डाइनोमिक्स इन इंडिया'' : इश्यूज़ एंड कन्सर्नस्ड दिनांक 4 मार्च 2010 को बॉम्बे चेम्बर ऑफ कॉमर्स में दिया गया भाषण.

बीच संभाव्य समझौते के जोखिम के बावजूद रिज़र्व बैंक के लिए भारत में नीति संबंधी अन्य उद्देश्यों की तुलना में मुद्रास्फीति नियंत्रण को अधिक वरीयता देनी होगी।

वर्ष 2010-11 में अब तक हुई गतिविधियां

II.2.17 वर्ष 2010-11 की प्रथम तिमाही में खाद्य उत्पादों की कीमतों में कुछ सुधार आने के बावजूद शीर्ष मुद्रास्फीति द्विअंकीय (9.97 प्रतिशत, साल-दर-साल, जून 2010 में अनंतिम) बनी रही। मार्च 2010 के लिये संशोधित आंकड़ों के आधार पर थोक कीमत सूचकांक मुद्रास्फीति 11.0 प्रतिशत और अप्रैल 2010 के लिए 11.2 प्रतिशत थी जो अनंतिम आंकड़ों की तुलना में प्रत्येक आधार अंक से एक प्रतिशत अधिक थी। विनिर्मित खाद्येतर उत्पादों में मुद्रास्फीति में और तेज़ी आयी जो मुद्रास्फीति पर मांग की ओर से आनेवाले दबावों में वृद्धि दर्शाती है। प्रशासित कीमतों में परिवर्तन के साथ ही साथ कीमत सूचकांकों में हुई उर्ध्वगामी वृद्धि, जो पिछली कीमत वृद्धियों की मध्यम दर्जे की रिपोर्टिंग दर्शाती है, ने हाल के महीनों में थोक कीमत सूचकांक में हुई वृद्धि में उल्लेखनीय रूप से योगदान दिया। कुछ कमी आने के बावजूद विभिन्न सूचकांकों द्वारा मापी जानेवाली उपभोक्ता कीमत मुद्रास्फीति मई/जून, 2010 के दौरान 13.0-14.1 प्रतिशत के बीच उच्च स्तर पर बनी रही।

II.2.18 वर्तमान संकटकाल में उच्च और दीर्घस्थायी मुद्रास्फीति ने कई चुनौतियां खड़ी कर दी है। मुद्रास्फीति का बढ़ता हुआ सामान्यीकरण मांग की तरफ से मुद्रास्फीतिकारी दबावों को उभरने का संकेत देता है जिसके लिए निकट अवधि में सक्रिय मांग प्रबंधन नीतियों की आवश्यकता होगी। तथापि, मध्यावधि मुद्रास्फीति प्रबधंन का ध्यान ऐसे प्रमुख क्षेत्रों में आपूर्ति की बाधाओं को दूर करने में केंद्रित करना होगा जहां मांग बढ़ती रहेगी। यह विशेष रूप से कृषि उत्पादनों के लिए महत्वपूर्ण है। यह भी पहचानना आवश्यक होगा कि यदि उच्च और व्यापक मुद्रास्फीति बनी रहती है, तो वह अपने आप संसाधन के वितरण में प्रतिकूल प्रभाव और साथ ही साथ गरीबों पर पुनर्वितरण संबंधी प्रतिकूल प्रभावों के ज़रिए विकास के लिए एक जोखिम है। विभिन्न वस्तुओं, विभिन्न क्षेत्रों और विभिन्न सूचकांकों के बीच मुद्रास्फीति के विस्तृत फैलाव के लिए समग्र मुद्रास्फीतिकारी स्थितियों के मूल्यांकन हेतु भी मुद्रास्फीति के अनेक संकेतकों का प्रयोग आवश्यक है।

III. मुद्रा और ऋण

II.3.1 वर्ष 2009-10 के दौरान मौद्रिक और ऋण स्थिति रिकवरी में सहयोग देने वाली बनी रही जो रिज़र्व बैंक के निभावकारी मौद्रिक नीति के रुख को व्यापक रूप से प्रकट करता है। निम्न लागत पर आसानी से चलनिधि पाना, सुधार के प्रबंधन में समग्र नीतिगत अनुक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक था। अन्य अधिकांश केंद्रीय बैंकों की तरह रिज़र्व बैंक ने भी देशी और विदेशी मुद्रा चलनिधि को बढ़ाने के लिए वर्ष 2008-09 की दूसरी छमाही में कई पारंपरिक और अपारंपारिक उपाय अपनाए। अक्तूबर 2008 और अप्रैल 2009 के बीच की सात महीने की अवधि में नीति में अभूतपूर्व सक्रियता दिखाई दी क्योंकि रिपो दर 425 आधार अंकों से घटाकर 4.75 प्रतिशत कर दी गई, रिवर्स रिपो दर 275 आधार अंकों से घटाकर 3.25 प्रतिशत कर दी गई, और आरक्षित नकदी निधि अनुपात 400 आधार अंकों से घटाकर 5.0 प्रतिशत कर दिया गया। प्राथमिक चलनिधि का वास्तविक/संभाव्य प्रावधान 5,60,000 करोड़ रुपए (जीडीपी के 9.0 प्रतिशत) का था।

II.3.2 मौद्रिक नीति का निभावकारी रुख वर्ष 2009-10 की पहली छमाही के दौरान जारी रहा। चूंकि सुधार की प्रक्रिया ने गति पकड़ ली और उभरते हुए मुद्रास्फीतिकारी दबावों की अनुक्रिया में, वर्ष की दूसरी छमाही में सुविचारित मौद्रिक अनवाइंडिंग शुरू हो गई। मौद्रिक नीति में नरमी के बावजूद, निजी खपत और निवेश मांग में विशेष रूप से वर्ष की पहली छमाही में उल्लेखनीय गिरावट आने के कारण मौद्रिक और ऋण समुच्चय में वृद्धि कम हो गई। वर्ष की दूसरी छमाही में, औद्योगिक वृद्धि के कारण सुधार में जो गति आई, वह नवंबर 2009 से ऋण संवृद्धि में सुधार आने के बावजूद मुद्रा संवृद्धि की प्रवृत्ति में प्रकट नहीं हुई। 2010-11 में अब तक, पहली तिमाही के दौरान ऋण वृद्धि में तेजी बनी हुई है तथा जुलाई 2010 में उसमें कुछ कमी आयी, जबकि मुद्रा वृद्धि में पहली तिमाही में गिरावट बनी रही।

आरक्षित मुद्रा

II.3.3 आरक्षित मुद्रा की प्रवृत्तियों में मौद्रिक नीति के परिवर्तनों और चलनिधि प्रबंध परिचालनों का प्रभाव, घटकों और स्रोतों दोनों पर, व्यापक रूप से परिलक्षित हुआ। बैंक के आरक्षित

नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) में नीति-प्रेरित परिवर्तन को दर्शाते हुए आरक्षित मुद्रा वृद्धि में वर्ष 2008-09 में गिरावट आई, परंतु वर्ष 2009-10 में उसमें वृद्धि हुई। आरक्षित नकदी निधि अनुपात में हुए तीव्र परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए, विश्लेषणात्मक रूप से सीआरआर में परिवर्तनों के लिए समायोजित आरक्षित मुद्रा को देखना जरूरी है। समायोजित आरक्षित मुद्रा वृद्धि में पिछले वर्ष की तुलना में वर्ष 2009-10 में कमी हुई (चार्ट II.25)।

II.3.4 रिज़र्व बैंक के पास बैंकों की जमाराशियां 2009-10 के दौरान बढ़ गईं तथा इस बढ़ोतरी की बड़ी मात्रा चौथी तिमाही में फरवरी 2010 से प्रभावी हुई सीआरआर में वृद्धि के फलस्वरूप आई। वर्ष 2008-09 में, वर्ष के दौरान सीआरआर में 250 आधार अंकों की निवल कटौती होने के कारण बैंकरों की जमाराशियों में गिरावट आई थी। आरक्षित मुद्रा का प्रमुख घटक परिचालनगत मुद्रा है, जो व्यापक रूप से मांग की स्थिति से निर्धारित की जाती है। मुद्रा वृद्धि में 2009-10 के दौरान मामूली गिरावट दिखाई दी, जो वर्ष की पहली छमाही की आर्थिक गतिविधियों की कमजोरियों के अनुरूप थी।

II.3.5 आरक्षित मुद्रा के स्रोत के पक्ष में, पिछले वर्ष की प्रवृत्ति जारी रखते हुए 2009-10 में केंद्र को दिया गया निवल रिज़र्व

चार्ट II.25 : आरक्षित मुद्रा में वृद्धि (प्रतिशत)

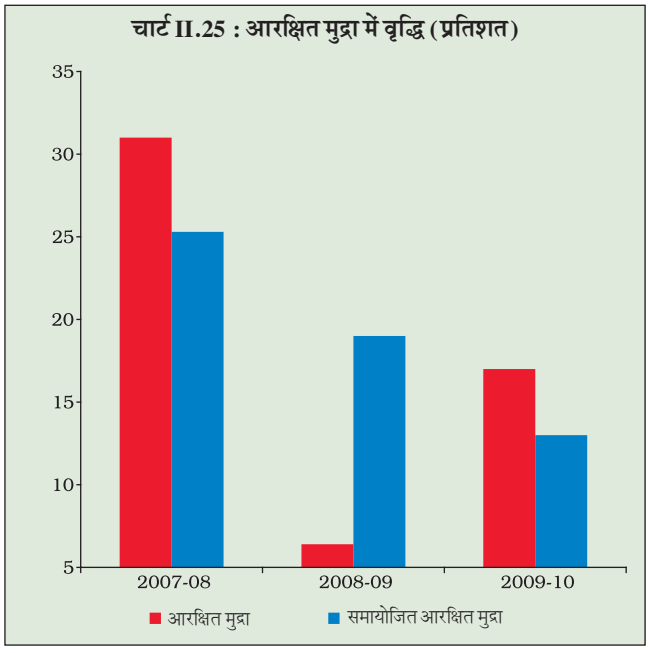

चार्ट II.26 : आरक्षित मुद्रा में घट-बढ़ के महत्वपूर्ण स्रोत

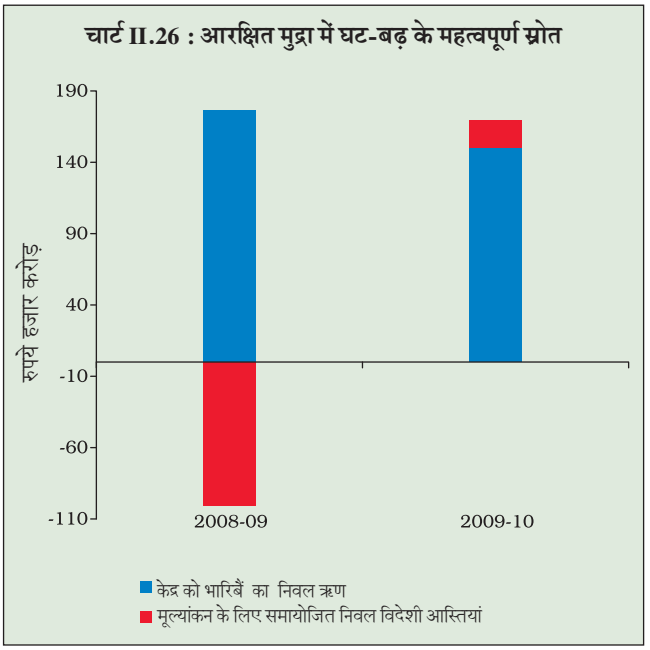

बैंक ऋण आरक्षित मुद्रा में वृद्धि का प्रमुख स्रोत रहा (चार्ट II.26)। निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों (मूल्यन के लिए समायोजित) में भी वर्ष के दौरान थोड़ी वृद्धि हुई। विदेशी मुद्रा आस्तियों में परिवर्तन तीन कारणों से होते हैं - प्राधिकृत डीलरों से खरीद/बिक्री, सरकार को सहायता प्राप्तियां और विदेशी मुद्रा आस्तियों की आय। बाद के दो घटकों का आरक्षित राशि पर प्रभाव नहीं पड़ता है। इस प्रकार, 2009-10 में निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों (मूल्यांकन के लिए समायोजित) में वृद्धि होने के बावजूद इसने वर्ष के दौरान आरक्षित मुद्रा की वृद्धि में योगदान नहीं दिया क्योंकि विदेशी मुद्रा आस्तियों में बढ़ोतरी प्राथमिक रूप से अर्जित निवल ब्याज/बट्टे और सहायता प्राप्तियों से हुई।

II.3.6 वर्ष 2009-10 में केंद्र सरकार को रिज़र्व बैंक के निवल ऋण का विस्तार, रिज़र्व बैंक के पास सरकार की नकद जमाराशियों में परिवर्तन के अलावा चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ), और बाज़ार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) सहित, खुला बाज़ार परिचालन (ओएमओ) के माध्यम से संचालित किये जाने वाले मौद्रिक परिचालनों के संयुक्त प्रभाव को दर्शाता है। वर्ष 2009-10 के दौरान केंद्र को दिए गए रिज़र्व बैंक के निवल ऋण में हुई वृद्धि का लगभग 57प्रतिशत भाग बाज़ार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) के अंतर्गत धारित शेषों को अनवाइंड/विमुक्त करने के कारण था

चार्ट II.27 : केंद्र सरकार को दिए गए रिज़र्व बैंक ऋण में वार्षिक घट-बढ़ के स्रोत

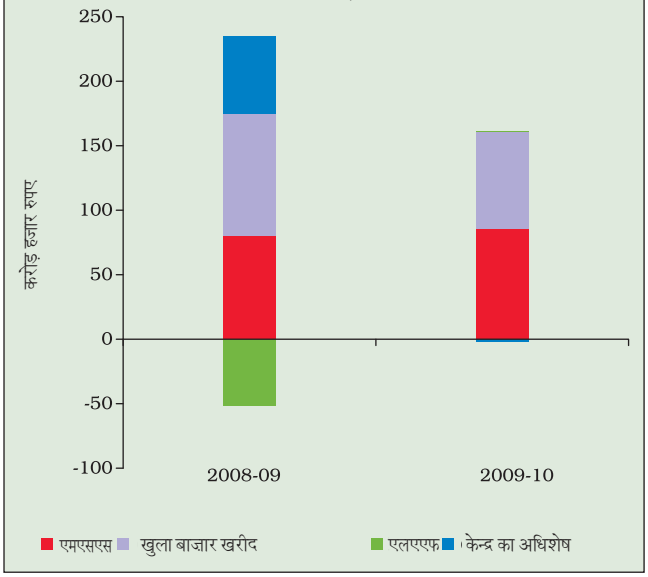

(चार्ट II.27)[1]। वर्ष की पहली तिमाही के दौरान बाजार स्थिरीकरण योजना की शेष राशियों में भारी गिरावट आई। अप्रैल 2004 से बाज़ार स्थिरीकरण योजना पूंजीगत अंतर्वाहों में वृद्धि के कारण चलनिधि पर पड़ने वाले प्रभावों से निपटने के लिए प्रमुख निष्प्रभावीकरण लिखत है, जिसके परिणामस्वरूप सरकारी जमाराशियों का संचय हो जाता है जो रिज़र्व बैंक के पास निष्प्रभावित पड़ी रहती हैं। वैश्विक संकट की स्थिति में चलनिधि बढ़ाने के लिए बाज़ार स्थिरीकरण योजनाओं की इन शेष राशियों की अनवाइंडिंग तथा उन्हें विमुक्त करने के माध्यम से जारी किया गया।

II.3.7 वर्ष 2009-10 में केंद्र सरकार को दिए गए निवल रिज़र्व बैंक ऋण का एक अन्य प्रमुख संचालक था बैंक का खुला बाज़ार परिचालन, जो वृद्धि का 50 प्रतिशत रहा। खुला बाज़ार खरीद मुख्यतः वर्ष की पहली छमाही तक सीमित रही, जिसने बाज़ार स्थिरीकरण योजना की अनवाइंडिंग के साथ वर्ष 2009-10 के लिए सरकार के फ्रंट-लोडेड उधार कार्यक्रम को सुचारु रूप से संचालन को सुकर बनाया। यद्यपि बाजार स्थिरीकरण योजना की अनवाइंडिंग और खुला बाज़ार खरीद केंद्र सरकार को दिए गए रिज़र्व बैंक के निवल ऋण में आनेवाले लगभग सभी वार्षिक उतार-चढ़ावों को स्पष्ट करते हैं; चलनिधि को प्रभावित करने वाले अन्य घटक जैसे चलनिधि समायोजन सुविधा बाज़ार में परिचालन और रिज़र्व बैंक के साथ केंद्र सरकार के नकदी अधिशेष में परिवर्तन वर्ष 2009-10 के दौरान प्रणालीगत चलनिधि में तिमाही घट-बढ़ के लिए महत्वपूर्ण संचालक थे। 28 जुलाई 2010 से, रिज़र्व बैंक के पास बाज़ार स्थिरीकरण योजना की शेष राशियां शून्य रह गई हैं, इस प्रकार, चलनिधि बढ़ाने के लिए बाज़ार स्थिरीकरण योजना की शेष राशियों के परिसमापन और उससे आरक्षित मुद्रा में वृद्धि को प्रभावित करने का विकल्प समाप्त हो गया है।

II.3.8 समग्र मौद्रिक स्थिति से चलनिधि के स्वचालित संचालकों और रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीति के रुख से सुसंगत उसके विवेकपूर्ण चलनिधि परिचालनों में उल्लेखनीय परिवर्तन परिलक्षित हुए। अलग-अलग देशों में चलनिधि के स्वचालित संचालकों की अलग-अलग व्याख्या करने की प्रथा के बावजूद, भारत में, एक उपयुक्त संकेतक में निम्नलिखित संयुक्त घटक शामिल हो सकते हैं: (i) प्राधिकृत व्यापारियों से रिज़र्व बैंक द्वारा विदेशी मुद्रा की निवल खरीद, (ii) जनता के पास मुद्रा, (iii) अर्थोपाय अग्रिम और ओवरड्राफ्ट के अलावा भारतीय रिज़र्व बैंक के पास सरकार की अधिशेष नकदी शेष राशियाँ और (iv) अन्य। अंततःरिज़र्व बैंक द्वारा चलनिधि के प्रबंधन में, जिसे प्रणालीस्तरीय चलनिधि के विवेकाधीन घटक के रूप में देखा जा सकता है, इसमें (i) एलएएफ परिचालन (ii) निवल ओएमओ (iii) एमएसएस और (iv) सीआरआर में हुए परिवर्तनों के प्रथम दौर के प्रभाव सहित चलनिधि प्रभाव शामिल होता है। चलनिधि के स्वचालित और विवेकपूर्ण घटकों में उतार-चढ़ाव के सकल परिणाम का मिलान बैंक की आरक्षित निधियों में बदलाव के साथ होता है (चार्ट II.28)। रिज़र्व बैंक के चलनिधि प्रबंधन परिचालनों पर विस्तृत चर्चा अध्याय III में प्रस्तुत की गई है।

2010-11 में अब तक की गतिविधियां

II.3.9 2010-11 में अब तक (13 अगस्त 2010) आरक्षित मुद्रा तीव्र गति से बढ़ती रही है। आरक्षित मुद्रा में वृद्धि का मुख्य

[1] रिपो/ओएमओ खरीद में बढ़ोतरी और रिवर्स रिपो/एमएसएस शेष में कमी/रिज़र्व बैंक के पास सरकार के अधिशेष में कमी से रिज़र्व बैंक द्वारा केंद्र को निवल ऋण में बढ़ोतरी तथा विलोमतः।

चार्ट II.28 : चलनिधि प्रबंधन परिचालन

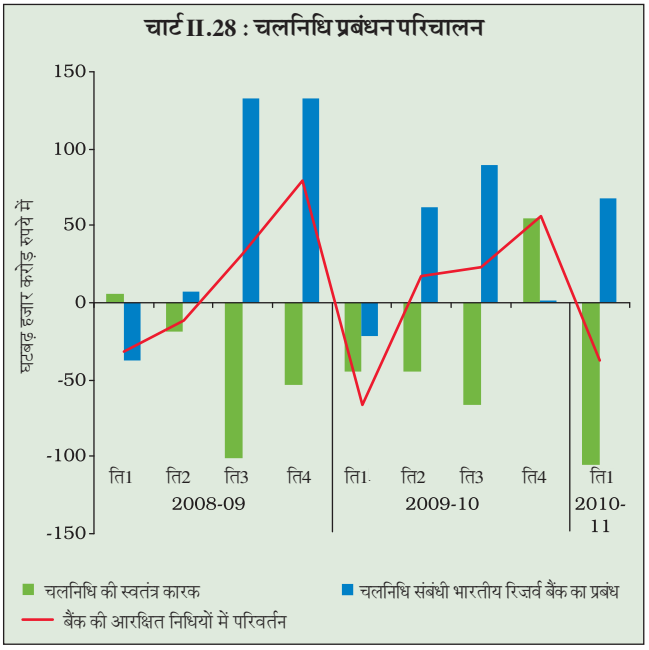

चार्ट II.29: मुद्रा (एम$_3$) मीयादी जमाराशि और ब्याज दर

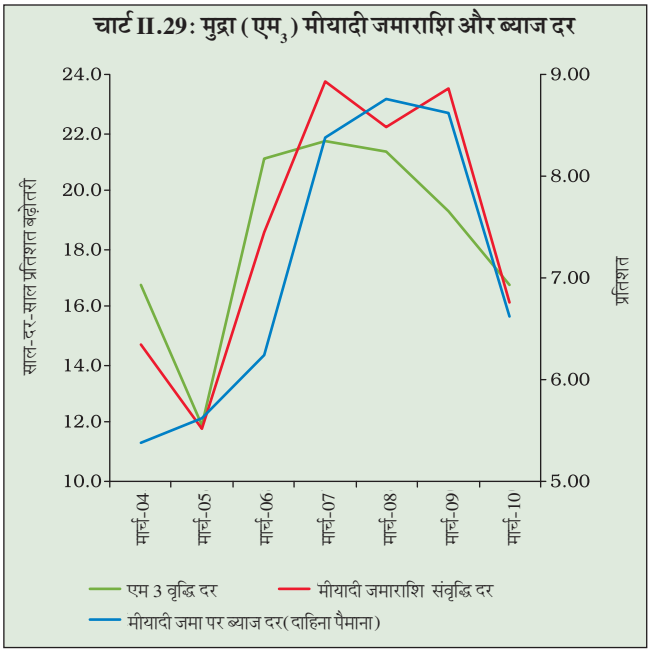

घटक संचलन में विद्यमान मुद्रा है। मुद्रा में उच्च वृद्धि (20.1 प्रतिशत) मुख्यतया मुद्रास्फीति में तेजी, जमाराशियों पर कम ब्याज दरों और बैंकों के पास वाल्ट में रखी नकदी में बढ़ोतरी के कारण थी।

मुद्रा आपूर्ति

II.3.10 वर्ष 2003-2008 के दौरान प्राप्त उच्च वृद्धि की तुलना में आर्थिक वृद्धि में आयी मंदी के साथ जुड़ी मांग में नरमी के कारण वर्ष 2009-10 में लगातार दूसरे वर्ष भी व्यापक मुद्रा (एम$_3$) वृद्धि में गिरावट रही। घटकों का पक्ष देखें तो अंशतया वर्ष के दौरान ब्याज दरों में नरमी की अनुक्रिया में सावधि जमाराशियों की संवृद्धि में कमी इस गिरावट की मुख्य वजह रही(चार्ट II.29)। तदनुसार, एम$_3$ में वार्षिक बढ़ोतरी में सावधि जमाराशियों का हिस्सा भी कम हुआ (चार्ट II.30)। तथापि, वर्ष 2008-09 में दबावग्रस्त इक्विटी बाजारों, जोखिम अवधारणाओं में वृद्धि और मीयादी जमाराशियों पर उस समय पर उपलब्ध जोखिमरहित उच्च ब्याज दरों के कारण मीयादी जमाराशियों में मजबूत वृद्धि दिखाई दी। मीयादी जमाराशि दरों में बाद में गिरावट की प्रत्याशा ने मांग जमाराशियों में हुए कुछ बदलाव को भी प्रेरित किया ।

II.3.11 स्रोतों के पक्ष में, वर्ष 2008-09 और 2009-10 में M_3 में हुई वार्षिक वृद्धि में सरकार के लिए बैंकिंग प्रणाली से ऋण का अंश हाल के वर्षों में सबसे अधिक है (चार्ट II.31)। वर्ष 2009-10 में M_3 में वार्षिक घट-बढ़ में निवल विदेशी आस्तियों का ऋणात्मक अंशदान था (चार्ट II.32)।

II.3.12 पिछले वर्ष की तरह वर्ष 2009-10 के दौरान कुल निवल देशी आस्तियों में वाणिज्यिक क्षेत्र को दिए गए बैंक ऋण के अंश में गिरावट आयी। यह मुख्य रूप से नवंबर 2008 से अक्तूबर 2009 तक खाद्येतर ऋण के प्रवाह में गिरावट के कारण हुआ था

चार्ट II.30: एम$_3$ में करोड़ रुपयों में हुई वार्षिक घट-बढ़ और इस घट-बढ़ में एम$_3$ के प्रमुख घटकों का प्रतिशत अंश

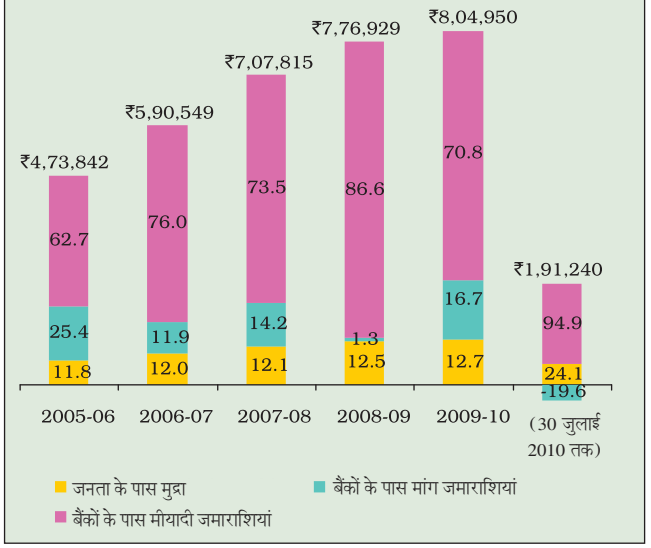

चार्ट II.31: एम$_3$ में वार्षिक घट-बढ़ में बैंकिंग प्रणाली से सरकार को दिए गए ऋण का अंश (प्रतिशत)

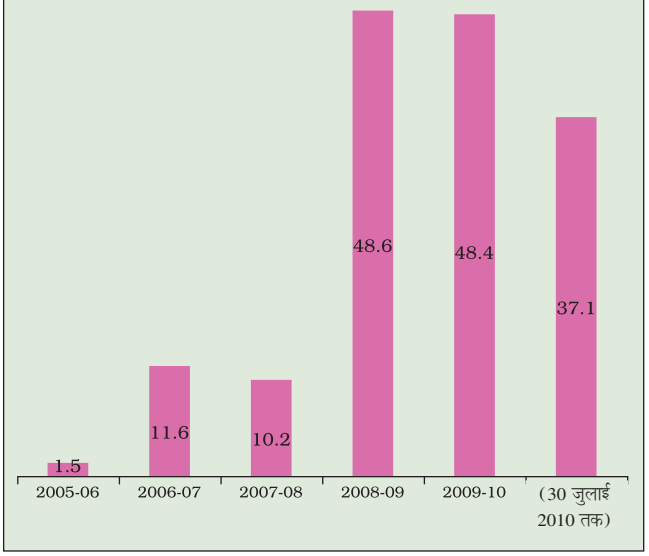

चार्ट II.32: एम$_3$ में करोड़ रुपए में हुई वार्षिक घट-बढ़ और इस घट-बढ़ में एम$_3$ के स्रोतों का प्रतिशत अंश

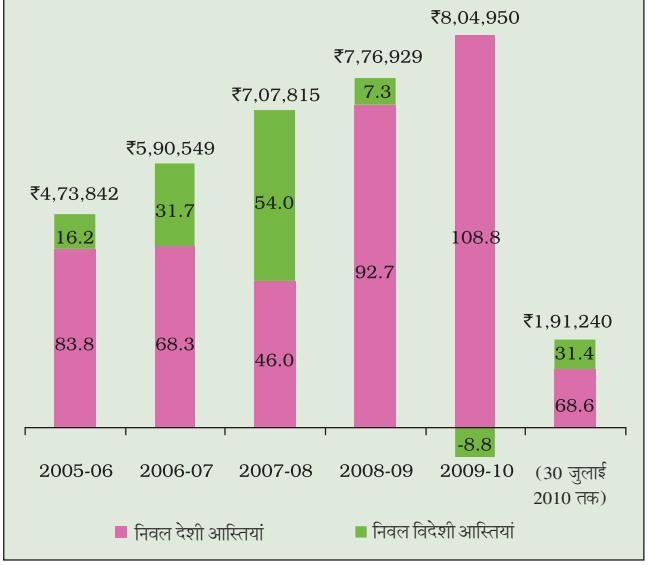

(चार्ट II.33)। नवंबर 2009 तक खाद्येतर ऋण की वृद्धि में गिरावट दिखायी दी और उसके बाद सुदृढ़ औद्योगिक रिकवरी से सम्बद्ध बढ़ती मांग के कारण उसमें तीव्र गति से वृद्धि हुई। दो वर्षों में खाद्येतर ऋण का तिमाही वृद्धिशील उच्चतम प्रवाह 2009-10 की चौथी तिमाही में परिलक्षित हुआ, जो कि औद्योगिक उत्पादन की अगुवाई में संवृद्धि में हुई मजबूत बढ़ोतरी को प्रकट करता है (चार्ट II.34)। वैकल्पिक वित्तपोषण तक बढ़ी हुई पहुंच के साथ-साथ रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीतिगत कार्रवाई ने ऋण बाजार में सामान्य संचारण प्रक्रिया के माध्यम से रिकवरी में योगदान किया, यद्यपि इसमें थोड़ी देरी हुई (बॉक्स II.7)।

चार्ट II.33: खाद्येतर ऋण में वृद्धि (साल-दर-साल, प्रतिशत)

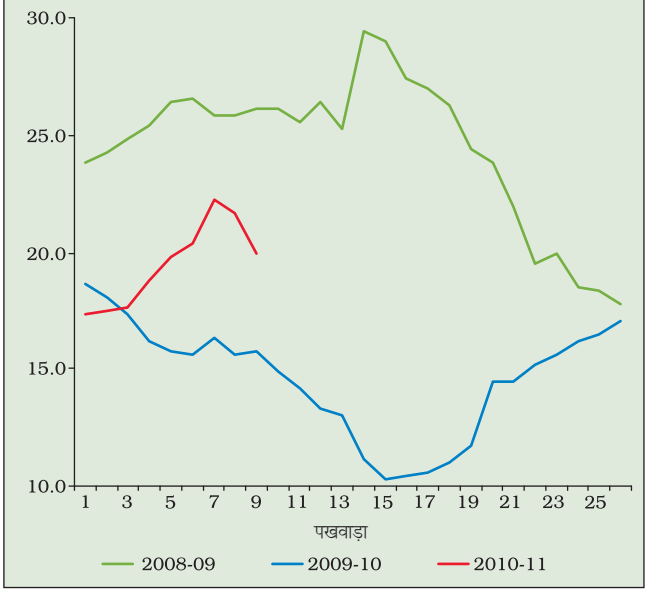

चार्ट II.34: अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का ऋण (तिमाही घट-बढ़)

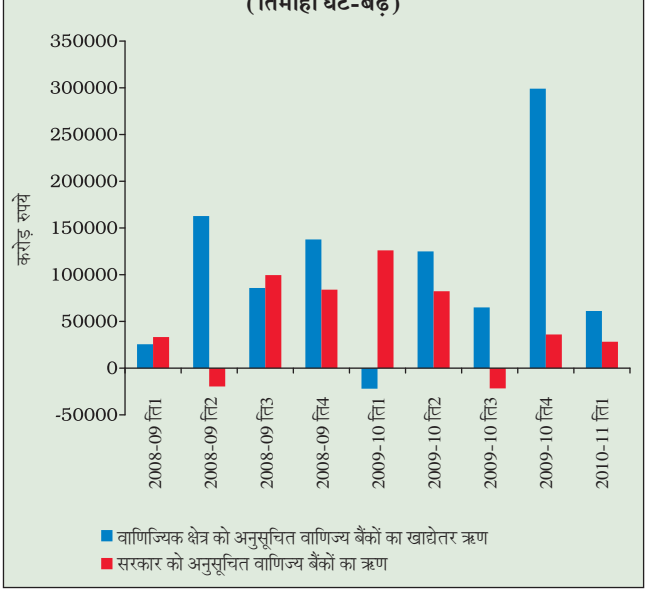

बॉक्स II.7
समुत्थान के दौरान मौद्रिक नीति का ऋण चैनल

वर्ष 2008-10 के दौरान मौद्रिक नीति संबंधी परिचर्चाओं में मौद्रिक नीति के संचारण के ऋण चैनल पर सर्वाधिक ध्यान दिया गया, क्योंकि ऋण बाजारों में विशेष तनाव को देखते हुए कई उन्नत अर्थव्यवस्थाओं को अपना नीति-निर्धारण करना पड़ा। 'क्रेडिट फ्रीज' के माहौल में मौद्रिक नीति का संचारण पूरी तरह से रुक सकता है क्योंकि केंद्रीय बैंक द्वारा न्यूनतम संभाव्य लागत पर उपलब्ध करायी गई चलनिधि अर्थव्यवस्था के सभी भागों तक तक नहीं पहुंच सकेगी। यहां तक कि बाजार की सामान्य परिस्थितियों के दौरान मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता का आकलन एक जटिल विषय हो सकता है, क्योंकि मौद्रिक नीति संचारण व्यवस्था को एक ''ब्लैक बॉक्स'' के समकक्ष रखा जा सकता है (बर्नान्के एवं गर्टलर, 1995)। केंद्रीय बैंक सामान्य रूप से एकदिवसीय ब्याज दर को नीतिगत दरों के आसपास नियंत्रित करते हैं लेकिन उसके बाद वास्तविक लक्ष्य परिवर्तियों तक संचारण अक्सर अनिश्चित और अस्पष्ट होता है। ब्लिंडर (1998) द्वारा की गई व्याख्या के अनुसार केंद्रीय बैंक सामान्य रूप से केवल एकदिवसीय ब्याज दर पर नियंत्रण रखते हैं, वह एक ऐसी ब्याज दर है जिसका वास्तव में आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण किसी लेनदेन से कोई संबंध नहीं है। मौद्रिक नीति का महत्वपूर्ण समष्टि आर्थिक प्रभाव यह है कि यह केवल उसी सीमा तक वित्तीय बाजार की कीमतों को संचालित करती है जितना वास्तव में जरूरी है जैसे कि दीर्घावधि ब्याज दरें, शेयर बाजार के मूल्य और विनिमय दरें''। इस प्रकार सकल मांग पर पूंजी की लागत, विनिमय दरों तथा आस्ति मूल्यों में हुए परिवर्तनों का प्रभाव पड़ सकता है तथा इनमें से सभी नीतिगत दरों में बदलाव के प्रति अनुक्रिया व्यक्त कर सकते हैं। इस प्रकार नीतिगत दर संबंधी साधन का लाभ उठाते हुए माल और सेवाओं, आवास, माल-सूचियों और निवेश से जुड़ी हुई मांग को प्रभावित किया जा सकता है, हालांकि मांग की ब्याज दर के प्रति संवेदनशीलता महत्वपूर्ण नहीं हो सकती है, खासकर आर्थिक क्रियाकलापों में मंदी या गिरावट के दौरान। ऐसी परिस्थिति में संचारण व्यवस्था के ऋण-चैनल का आकलन मौद्रिक नीतिगत कार्रवाई की प्रभावशीलता के बारे में अनुपूरक जानकारी प्रदान कर सकता है।

बर्नान्के और गर्टलर (1995) के अनुसार, ऋण चैनल के दो घटक हैं - तुलन-पत्र चैनल और बैंक-ऋण चैनल। उधारकर्ताओं के पास बाह्य वित्तपोषण के संबंध में हमेशा आंतरिक वित्तपोषण और बाह्य वित्तपोषण के बीच तथा बैंकों और गैर-बैंकों के बीच चुनाव का विकल्प होता है। मौद्रिक नीति संबंधी कार्रवाइयां ''बाह्य वित्त प्रीमियम'' अर्थात् बाह्य निधियों की लागत और आंतरिक निधियों की अवसर लागत के बीच के अंतर को बदल सकती हैं। बाह्य वित्त प्रीमियम उधारकर्ताओं की वित्तीय स्थिति के साथ प्रतिकूल संबंध प्रदर्शित करता है। बाह्य वित्तीय प्रीमियम तुलन-पत्र और बैंक ऋण चैनल दोनों द्वारा मौद्रिक नीतिगत कार्रवाइयों से प्रभावित होता है। नकदी प्रवाहों और तुलन-पत्रों के परिवर्तन उल्लेखनीय वास्तविक प्रभाव डाल सकते हैं। वैश्विक संकट के दौरान विकसित अर्थव्यवस्थाओं में यह स्पष्ट हुआ जब न केवल बैंकों के तुलन-पत्र में गिरावट रही, बल्कि परिवारों तथा कंपनियों ने भी निवल मालियत में उल्लेखनीय कमी का अनुभव किया तथा नकदी प्रवाहों के बारे में अनिश्चितता का सामना किया। इन गतिविधियों से उधारकर्ताओं की वित्तीय स्थितियां, अर्थात उनकी ऋण पात्रता जो बदले में उनके बाह्य वित्त प्रीमियम को प्रभावित करतीं, बदली हैं। मौद्रिक नीति का बैंक उधार माध्यम, जो बैंक-आश्रित उधारकर्ताओं के लिए जमा संस्थाओं (अर्थात बैंकों) द्वारा ऋण की आपूर्ति के माध्यम से संचालित होता है, बैंकों की ओर से जोखिम से बचने में उल्लेखनीय वृद्धि के अलावा उनकी पूंजी पर दबाव के कारण बैंकों की उधार देने की क्षमता में गिरावट द्वारा इन अर्थव्यवस्थाओं में उल्लेखनीय रूप से अस्त-व्यस्त हो गया था।

भारत में, ऋण बाजार स्थितियों ने सामान्य रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत कार्य किया और खाद्येतर ऋण की वृद्धि में गिरावट के बावजूद वर्ष 2009-10 के दौरान वृद्धि में सुधार के लिए सहायक बनी रहीं। बैंक ऋण माध्यम के मूल्यांकन में मांग पक्ष के प्रभावों को आपूर्ति पक्ष के प्रभावों से अलग करने की चुनौती का अक्सर सामना करना पड़ता है। भारत में न तो बैंकों की उधार देने की क्षमता उनकी पूंजी पर किसी दबाव के कारण प्रभावित हुई और न ही कंपनियों तथा पारिवारिक इकाइयों पर किसी तीव्र डिलीवरेजिंग का ऐसा कोई दबाव था जिससे ऋण की मांग में बड़े पैमाने पर कमी आ सकती हो। तथापि, आर्थिक मंदी और निजी उपभोग और निवेश मांग से सम्बद्ध गिरावट से खाद्येतर ऋण की मांग में कमी दिखायी दी। फिर भी, रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीति संबंधी कार्रवाइयों के कारण, जो प्राथमिक रूप से न्यूनतम नीतिगत दरों और पर्याप्त चलनिधि स्थितियों के रूप में थीं, ऋण बाजार में आपूर्ति पक्ष से हुए अवरोध को काफी हद तक टाला गया । खाद्येतर ऋण की वृद्धि में व्यापक रुझान में आपूर्ति पक्ष से बैंक ऋण चैनल नहीं दिखाई देगा क्योंकि ऋण हेतु निराशाजनक मांग में निजी उपभोग तथा निवेश मांग का प्रभाव एक साथ हावी हो रहा था। पंडित और अन्य (2006) को भारत के लिए बैंक ऋण चैनल की विद्यमानता के सबूत मिले, यद्यपि मौद्रिक नीतिगत आघातों सहित कई घटक बैंकों के उधार संबंधी व्यवहार को प्रभावित करते प्रतीत हुए।

आवश्यक निदानपरक परीक्षणों सहित मानक चार परिवर्तनशील वीएआर (सकल देशी उत्पाद में वृद्धि, खाद्येतर ऋण में वृद्धि, औसत उधार दर तथा मांग दर) हाल के आंकड़ों के लिए भारत में परंपरागत मौद्रिक नीति संबंधी संचारण की उपस्थिति की पुष्टि करते हैं। कॉल दरों में (नीतिगत दरों में परिवर्तन से प्रेरित) वृद्धि से दो तिमाहियों के अंतराल सहित औसत उधार दरें उच्चतर हो गईं, जिससे बदले में खाद्येतर ऋण की वृद्धि में कमी आयी, जो उधार दरों में परिवर्तनों के लिए ऋण की मांग संबंधी संवेदनशीलता का संकेत है। संचारण प्रक्रिया के अंत में ऋण वृद्धि कम होने से उत्पादन वृद्धि में कमी आती है। हालांकि, उसका अनुमानित प्रभाव कम प्रतीत होता है और क्रमिक रूप से समाप्त हो जाता है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि जीडीपी में वृद्धि से लेकर ऋण में हुई वृद्धि तक चलनेवाली हेतुकता सांख्यिकीय रूप से उल्लेखनीय हो जाती है जो यह सुझाता है कि ऋण, वृद्धि की गति में आई तेजी की अगुवाई करने के बजाय, उसका अनुसरण कर रहा है। इस प्रक्रिया की ओर निधियों के गैर-बैंकिंग स्रोतों की बढ़ती हुई उपलब्धता और वर्ष 2009-10 में आर्थिक बहाली के दौरान उनके रुख के संबंध में देखने की आवश्यकता है। भारतीय कार्पोरेट जगत के पास अब आंतरिक वित्तपोषण और बैंकों तथा गैर-बैंकों से वित्तपोषण प्राप्त करने बीच चुनाव का अधिक लचीलापन मौजूद है जो उनकी देयताओं के संघटन में साल-दर-साल होने वाले उल्लेखनीय परिवर्तनों से स्पष्ट है। समग्र स्तर के आंकड़े भी यह सुझाते हैं कि वर्ष 2009-10 में बैंकों से हुए ऋण प्रवाह की तुलना में गैर-बैंकिंग स्रोतों से हुआ कुल वित्तपोषण कहीं अधिक था। इस प्रकार यह आवश्यक नहीं है कि केवल ऋण प्रवृत्तियां आर्थिक बहाली में रिज़र्व बैंक द्वारा सुनिश्चित की गई वित्तीय और चलनिधि स्थितियों की भूमिका का योगदान स्पष्ट कर सकें।

संदर्भ

1. बर्नान्के, बेन एस. और मार्क गर्टलर (1995), ''इन साइड द ब्लैक बॉक्स: द क्रेडिट चैनल ऑफ मोनिटरी पॉलिसी ट्रान्समिशन'', जर्नल ऑफ इक्नॉमिक पर्सपेक्टिव्ज, खंड 9, सं.4
2. ब्लिंडर, ए.एस. (1998) ''सेंट्रल बैंकिंग इन थिअरी एंड प्रैक्टिस'', कैंब्रिज, एमआइटी प्रेस
3. पंडित बी.एल., अजित मित्तल, महुआ रॉय एवं सैबल घोष (2006), ''ट्रान्समिशन ऑफ मोनिटरी पॉलिसी एंड द बैंक लेंडिंग चैनल: अनॅलिसिस एंड एविडेंस फॉर इंडिया'', डीआरजी स्टडी नं.25, भारतीय रिज़र्व बैंक

चार्ट II.35: वाणिज्य क्षेत्र के लिए वित्तीय संसाधनों का कुल प्रवाह (हजार करोड़ रुपये)

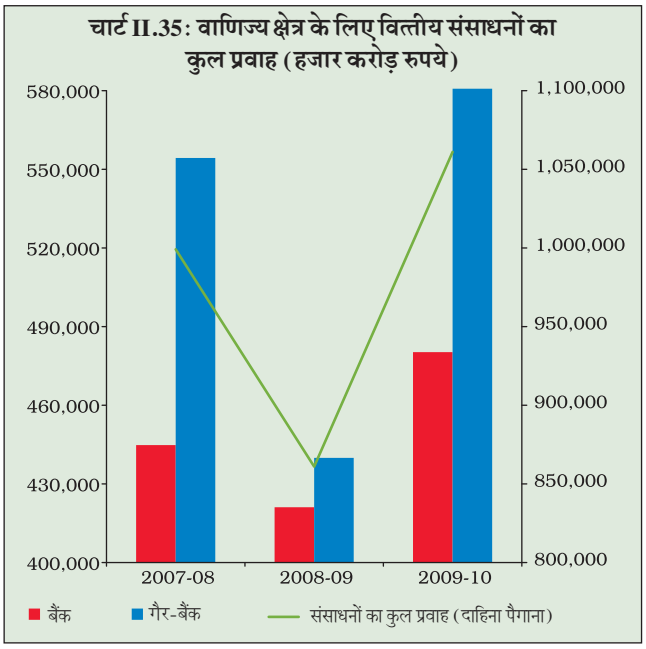

चार्ट II.36: बैंक ऋण का क्षेत्रीय अभिनियोजन (साल-दर-साल वृद्धि प्रतिशत में)

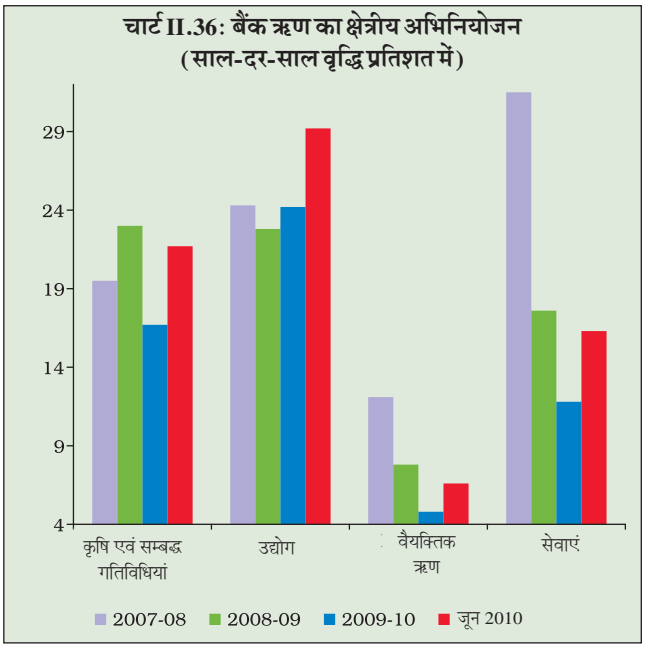

II.3.13 नवंबर 2008 की शुरुआत में बारह महीने की अवधि के दौरान जब परंपरागत रूप से नापे गए बैंक ऋण में गिरावट आ रही थी तब बैंकों के अन्य निवेशों (अर्थात् कंपनियों के शेयरों/बांडों/डिबेंचरों, वाणिज्यिक पत्रों और म्यूच्युअल फंडों) की संवृद्धि दर में बढ़ रही थी। परिणामस्वरूप, बैंकों के अप्रत्यक्ष वित्तपोषण में वृद्धि हुई। स्वदेशी के साथ-साथ विदेशी दोनों गैर-बैंकिंग स्रोतों ने वाणिज्यिक क्षेत्र की निधीयन संबंधी जरूरतों के बड़े अंश को पूरा किया (चार्ट II.35)। खाद्येतर ऋण में गिरावट की अवधि के दौरान गैर-बैंक वित्त के प्रमुख स्रोतों में प्रारंभिक सार्वजनिक प्रस्ताव (आइपीओ), निजी स्थानन, वाणिज्यिक पत्र जारी करना, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश और अमरीकी/वैश्विक निक्षेपागार प्राप्तियां शामिल थीं। जब वर्ष 2009-10 के दौरान बैंकों तथा गैर-बैंकों से संसाधनों का कुल प्रवाह बढ़ा तब उद्योग के लिए बैंक ऋण के लिए बैंक ऋण का प्रवाह मजबूत रहा (चार्ट II.36)।

वर्ष 2010-11 में अब तक की गतिविधियां

II.3.14 जमाराशियों की वृद्धि दर में धीमेपन के कारण 2010-11 के दौरान अब तक मुद्रा में वृद्धि धीमी बनी रही। बैंकों ने जुलाई 2010 के अंत से मीयादी जमाराशियों के लिए दरों में वृद्धि की घोषणा द्वारा जमाराशियां जुटाना प्रारंभ कर दिया। वाणिज्यिक क्षेत्र से ऋण की बढ़ी हुई मांग को पूरा करने के लिए यह आवश्यक हो गया है। यद्यपि, बढ़े हुए ऋण प्रवाह को अभी और व्यापक बनना बाकी है फिर भी हाल के महीनों में वैयक्तिक ऋणों और सेवाओं के लिए ऋण वृद्धि में सुधार आया है। गैर-बैंकिंग क्षेत्र से भी वित्तीय संसाधनों के प्रवाह में 2010-11 के पहले चार महीनों के दौरान उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई है।

IV. वित्तीय बाजार

II.4.1 2009-10 के पूरे वर्ष में वित्तीय बाजारों ने सुव्यवस्थित तरीके से कार्य किया। चूंकि समग्र चलनिधि की स्थितियों का आधिक्य रहा और मुद्रा बाज़ार की ब्याज दरें सामान्यतया एलएएफ दर कॉरिडोर की निम्नतर सीमा के नजदीक रहीं। वर्ष 2009-10 के दौरान सरकार द्वारा बाजार से बड़ी मात्रा में उधारों से सरकारी प्रतिभूतियों संबंधी प्रतिलाभों पर ऊर्ध्वमुखी दबाव रहा। हालांकि, इसमें रिज़र्व बैंक द्वारा सक्रिय चलनिधि प्रबंधन अंतर्विष्ट था। निजी क्षेत्र की निम्न ऋण मांग ने भी प्रतिलाभ पर ऊर्ध्वमुखी दबाव डालने में मदद की। वर्ष के दौरान इक्विटी बाजार वैश्विक पैटर्न की तरह सविराम सुधार के साथ स्थिर रहे। सार्वजनिक निर्गमों के माध्यम से संसाधन संग्रहण में वृद्धि हुई। वर्ष 2009-10 के दौरान आवास कीमतों में उछाल आया। रिज़र्व बैंक के सर्वेक्षण के अनुसार, मुंबई में ये संकट पूर्व के उच्च स्तर से आगे निकल गईं। विनिमय दर ने भारी लचीलापन प्रदर्शित किया।

II.4.2 वित्तीय बाजार उन माध्यमों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनसे प्रतिकूल वैश्विक आघातों का प्रभाव सबसे पहले दिखाई देता है। भारत पर भी वैश्विक संकट का प्रभाव वित्तीय बाजारों में सबसे पहले दिखाई दिया। इस प्रकार बाजारों में सामान्य स्थिति को बहाल करना नीति निर्माण के लिए प्रमुख चुनौती है ताकि वास्तविक अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव को रोका जा सके। रिज़र्व बैंक ने परंपरागत और गैर परंपरागत दोनों उपायों का सहारा लेते हुए मुद्रा, विदेशी मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाजारों को एक साथ संचालित किया जिससे बाजार में सामान्य स्थिति बहाल करने में मदद मिली। इसके बदले 2009-10 में वसूली के लिए अन्य समष्टि आर्थिक नीतियों का प्रबंधन प्रभावी रूप से होना महत्वपूर्ण था। यह देखते हुए कि भारत ने देश के भीतरी वित्तीय संकट को टाल लिया तो वित्तीय प्रणाली में दबाव के वे जोखिम भी काफी टल गए, जो कि रिकवरी में बाधक हो सकते थे। भारत में वित्तीय संस्थान अच्छी तरह से पूंजीकृत रहे और इससे मुद्रा तथा ऋण बाजारों को तेज गति से संकट-पूर्व प्रक्षेप पथ में लौटने में मदद मिली। तथापि, वैश्विक बाजारों में प्रचलित मौजूदा अनिश्चितताओं और वर्ष के दौरान विभिन्न समय पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार की खबरों के प्रवाह को देखते हुए रिकवरी के समर्थन में बाजार के सामान्य कामकाज को सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण था।

II.4.3 नीति निर्माण करते समय वित्तीय बाजार की गतिविधियां द्विमार्गीय जटिल और सतत चुनौतियां देती हैं : पहला तो यह अनिश्चितता कि वित्तीय बाजारों से प्रतिकूल आघात किस प्रकार वास्तविक अर्थव्यवस्था में संचारित हो जाते हैं; दूसरे यह कि मौद्रिक नीति उपायों को किस प्रकार वित्तीय बाजारों में संचारित किया जाए ताकि वास्तविक अर्थव्यवस्था से संबंधित अंतिम उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके। यद्यपि दुबई वर्ल्ड और ग्रीस में हुई गतिविधियों से संबंधित प्रतिकूल विदेशी समाचारों की अनुक्रिया में भारतीय बाजारों, विशेषकर इक्विटी और फोरेक्स बाजारों में कुछ उतार-चढ़ाव दिखाई दिए, तथापि बाजार की प्रवृत्तियां अधिकांशतया देशी समष्टि आर्थिक गतिविधियों के साथ-साथ सरकार और रिज़र्व बैंक के नीतिगत रुख से प्रतिबद्ध रहीं।

अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजार

II.4.4 वैश्विक वित्तीय संकट के अवरोध के बावजूद वर्ष 2009 के दौरान वैश्विक वित्तीय बाजार की स्थितियों में सुधार आया, यद्यपि इसमें बीच-बीच में असंयमित उतार-चढ़ाव के दौर थे। तथापि, 2009 के अंत और 2010 की शुरुआत में वित्तीय बाजारों में सरकारी देनदारी के जोखिम व्याप्त हो गए, जिसमें दुबई वर्ल्ड की ओर से देनदारी का रुक जाना और ग्रीस की सरकारी देनदारी की समस्या ने वित्तीय प्रणाली के लिए अनिश्चितता का अतिरिक्त दौर शुरू कर दिया। अप्रैल 2010 के शुरू में वैश्विक वित्तीय बाजारों को एक और आघात लगा जो कि ग्रीस की सरकारी देनदारियों की समस्या से शुरू होकर यूरो जोन के अन्य देशों में फैल गया, इससे यूरो का महत्वपूर्ण मूल्यह्रास हुआ और यूरो जोन में स्टॉक कीमतों में गिरावट रही साथ ही समूचे विश्व के अन्य वित्तीय बाजारों में भी अस्थिरता फैल गई (चार्टII.37 क से घ)। उन्नत देशों की सरकारी प्रतिभूतियों, आदि पर प्रतिलाभों को सुरक्षा की दृष्टि से कम किया गया। राजकोषीय असंतुलनों के बढ़ने के साथ-साथ यूरोपियन देशों के क्रेडिट डिफाल्ट स्वैप (सीडीएस) के अंतराल भी बढ़े, जोकि इन देशों में जोखिमों के बारे में बाजार द्वारा किए गए आकलन को दर्शाता है।

II.4.5 उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के प्रति जोखिम में कमी की धारणा और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में विस्तारित अवधि के लिए नीतिगत दरों के कम बने रहने से पूंजी प्रवाह की बहाली को बल मिला जिसने आस्ति कीमतों की वृद्धि में योगदान के साथ-साथ ईएमई की विनिमय दरों में वृद्धि दबावों को बनाये रखा। भारत में, वैश्विक बाजारों की गतिविधियों के परिणामस्वरूप इक्विटी और विदेशी मुद्रा बाजार में उतार-चढ़ाव दिखाई दिए। कुल मिलाकर, समुचित नीतिगत अनुक्रियाओं के कारण वास्तविक अर्थव्यवस्था में वैश्विक आघातों का संचारण सीमित बना रहा। संवृद्धि में मजबूत रिकवरी, जिसको वित्तीय बाजारों की सामान्य स्थितियों का लाभ मिला, से भी बाजारों में विश्वास और धारणाओं को मजबूती मिली।

देशी वित्तीय बाजार

II.4.6 विकसित अर्थव्यवस्थाओं के वित्तीय संकट के आघातों की तत्काल अनुक्रिया भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा पर्याप्त देशी रुपया चलनिधि के प्रावधान और विदेशी मुद्रा चलनिधि की संतोषजनक स्थिति के रूप में रही। ताकि चलनिधि की कमी की आशंका से उत्पन्न होने वाली अनिश्चितताओं में कमी लाकर देशी और विदेशी मुद्रा बाजारों में विश्वास की बहाली करना इनका लक्ष्य था। भारत पर आघातों का सीधा संचारण पूंजी बहिर्वाह और विनिमय दरों में भारी मात्रा में उतार-चढ़ाव के रूप में था जिससे विदेशी मुद्रा बाजार में

चार्ट II.37: वैश्विक वित्तीय बाजार की गतिविधियों के संकेतक

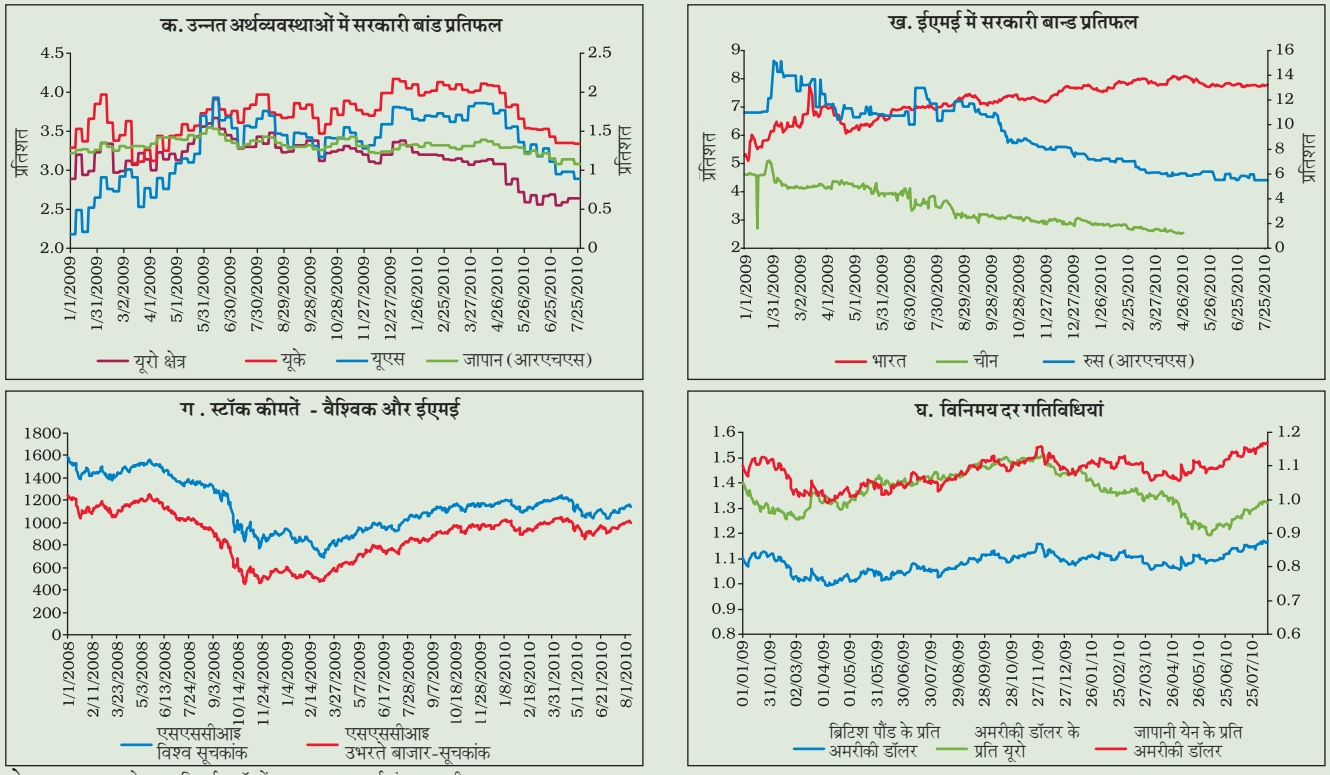

स्रोत: आइएमएफ, फेडरल रिज़र्व आफॅ सेंट लुइस, ब्ल्यूमबर्ग एंव डाटास्ट्रीम

सुव्यवस्थित माहौल की बहाली के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा हस्तक्षेप किया जाना जरूरी हो गया था। विदेशी मुद्रा बाजार के वास्तविक हस्तक्षेपीय विक्रय के अलावा भारतीय रिज़र्व बैंक ने बैंकों के लिए विदेशी मुद्रा स्वैप सुविधा की शुरुआत की और विशिष्ट किस्म के अन्तर्वाहों में सुधार हेतु अपेक्षित कदम भी उठाये। बैंकिंग तंत्र में रुपया चलनिधि की कमी होने की आशंका को दूर करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक ने आरक्षित नकदी निधि अनुपात में कमी की, बाजार स्थिरीकरण योजना प्रतिभूतियों की शेषराशियों का मोचन करने के साथ ही कई अन्य परम्परागत और गैर-परम्परागत उपाय किए। अक्तूबर 2008 से लेकर अप्रैल 2009 की अल्पावधि के दौरान नीतिगत दर में 425 आधार अंकों की कमी की गयी थी, जिसने चलनिधि लागत को घटा दिया। इन उपायों के परिणामस्वरुप 2008-09 की दूसरी छमाही में आये वैश्विक आघातों के शुरुआती प्रभावों के पश्चात भारत में वित्तीय बाजार की स्थितियों में काफी तेजी से सुधार हुआ।

II.4.7 भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा शीघ्रतापूर्वक और समय रहते किए गए नीतिगत उपायों ने बड़े पैमाने पर वित्तीय बाजार में सामान्य स्थितियों की तेजी से बहाली को सुनिश्चित किया, यद्यपि विकसित अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय तंत्र पर आये दीर्घकालिक दबाव ने वास्तविक अर्थव्यवस्था को उत्पादन और रोजगार खोने के रूप में महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया। भारतीय रिज़र्व बैंक के नीतिगत उपाय दो कारणों से महत्वपूर्ण थे। पहला, मौद्रिक नीति को यह सुनिश्चित करना था कि बाह्य आघातों से प्रभावित वित्तीय बाजारों के विभिन्न खंडों में यथाशीघ्र सामान्य स्थिति की वापसी हो सके ताकि वास्तविक अर्थव्यवस्था में सहयोग हेतु वित्तीय मध्यस्थता की प्रक्रिया गैर-विघटनकारी तरीके से सम्पन्न हो सके। पर्याप्त चलनिधि प्रावधानों के साथ-साथ सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली ने देशी वित्तीय बाजारों के विभिन्न खंडों में स्थितियों के तेजी से सामान्य होने में मदद की। दूसरा, मौद्रिक नीति को विभिन्न उपाय अपनाने पड़े ताकि वास्तविक क्षेत्र को वैश्विक आघातों के प्रतिकूल प्रभाव से बचाया जा सके। आर्थिक क्रियाकलापों में छायी भारी मंदी को दूर करने और इसके बाद तेज रिकवरी में योगदान की दृष्टि से अभिप्रेत परिणाम प्राप्त करने हेतु वित्तीय बाजार की स्थितियों को सामान्य स्थिति में लाना भी जरूरी था ताकि मौद्रिक नीति सही दिशा में जा सके। पर्याप्त स्थिरता के बावजूद देशी वित्तीय बाजारों को 2009-10 की दूसरी छमाही में

बड़े राजकोषीय घाटे और हेडलाइन मुद्रास्फीति से उत्पन्न होनेवाली स्फीतिकारी प्रत्याशाओं से उभरती चिन्ताओं का सामना करना पड़ा।

बाजार के क्रियाकलाप

II.4.8 वित्तीय बाजारों में सुधार के संकेत सितंबर 2008 से पूर्व की अवधि में जोखिम अवधारणाओं में कमी और बाजार के विभिन्न खंडों में कारोबारीं-क्रिया कलापों के सामान्य स्तर पर लौटने के रूप में परिलक्षित हुए। अल्पकालिक ब्याज दरों को दबाव से बचाने और उसके द्वारा संवृद्धि की रिकवरी को सुगम बनाने हेतु संपूर्ण 2009-10 के दौरान चलनिधि की पर्याप्तता को सुनिश्चित किया जाना अनिवार्य समझा गया। साथ ही, बाजार में दीर्घकालीन निवेश में जोखिम महत्वपूर्ण रूप से कम हुए जैसा कि एएए रेटिंग प्राप्त 5 वर्षीय कारपोरेट बांडों के स्प्रेड में कमी से प्रकट होता है। इक्विटी बाजार में वर्ष के प्रारंभिक भाग में आई मूल्य अस्थिरता में कमी में सरकारी देनदारी संबंधी चिन्ताओं द्वारा वैश्विक बाजारों के प्रभावित होने के बाद इसमें वृद्धि हुई (चार्ट II.38)।

II.4.9 जोखिम अवधारणाओं में हो रही उल्लेखनीय कमी और बाजार मनोभाव में आये सुधार से मुद्रा बाजार के सभी खंडों में उछाल आया और क्रिया-कलाप सामान्य स्तर पर लौट आये और बाजार के कई खंडों में तो कारोबारी मात्रा का स्तर संकट-पूर्व के स्तरों को भी पार कर गया, जिससे वित्तीय संस्थाओं और कंपनियों को उनकी कार्यशील पूंजी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संसाधन जुटाने में सहायता मिली। 2009-10 के दौरान मुद्रा बाजार की स्थितियों में और सुधार आया जो मुद्रा बाजार की दैनिक कारोबारी मात्रा में 49 प्रतिशत की बढ़ोतरी के रूप में परिलक्षित हुआ। संपार्श्विक खंड, जो मुद्रा बाजार का प्रमुख खंड रहा है, के अंतर्गत, 75 प्रतिशत से भी अधिक ऋण म्यूच्युअल फंडों (एमएफ) द्वारा प्रदान किए गए।

II.4.10 निरंतर चलनिधि की अधिशेष स्थिति को दर्शाते हुए जमा प्रमाणपत्रों (सीडी) के पाक्षिक रूप से जारी किए जाने वाले औसत निर्गमों में महत्वपूर्ण बढ़ोतरी हुई और बाजार में चलनिधि की मौजूदगी से ब्याज दरों में स्थायित्व आया जिनमें 2009-10 की अंतिम तिमाही में कुछ बढ़ोतरी दिखाई दी। वाणिज्यिक पत्रों (सीपी) के निर्गमन में महत्वपूर्ण बढ़ोतरी हुई। निर्गमन में महत्वपूर्ण बढोतरी के बावजूद, वाणिज्यिक पत्रों पर ब्याज दरों में नरमी आयी जिससे रिकवरी के

चार्ट II.38 : देशी वित्तीय बाजारों में जोखिम के संकेतक

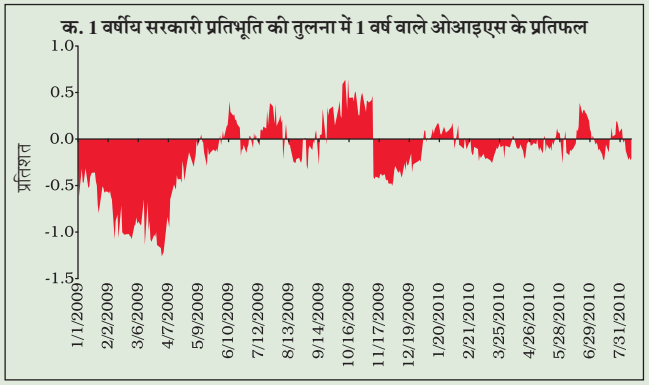

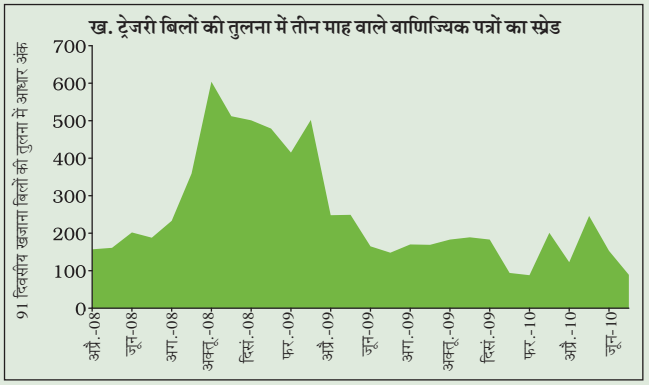

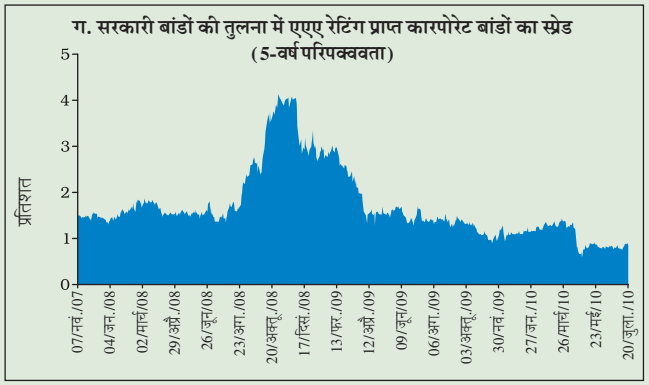

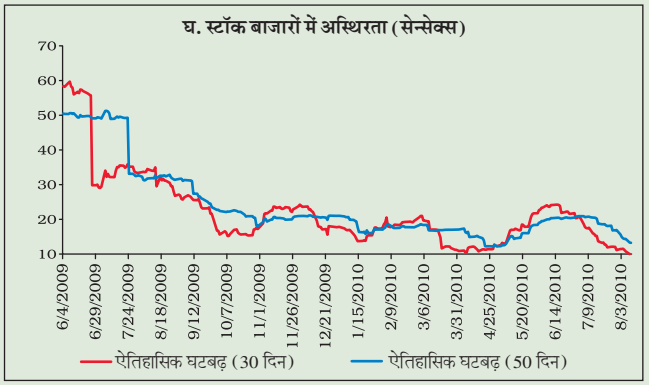

दौरान कंपनियों को अपनी कार्यशील पूंजी आवश्यकताओं के लिए वित्त प्राप्त करने में आसानी हुई। सरकारी प्रतिभूति बाजार में कारोबारी मात्रा जो वर्ष 2009-10 के दौरान उछाल पर रही थी, आखिरी तिमाही में प्रतिफलों में अनिश्चितता और अस्थिरता के चलते घट गयी। देश में हुई सुदृढ़ रिकवरी और बाहरी परिस्थितियों में आये सुधार के चलते इक्विटी बाजारों के क्रिया-कलापों में संकट-पूर्व के स्तर से अधिक कारोबार के साथ महत्वपूर्ण रूप से पुनः उछाला आया। इससे कंपनियों को पूंजी बाजारों से सार्वजनिक निर्गम (आइपीओ) और निजी निर्गमन के माध्यम से संसाधन जुटाने में मदद मिली, जिसने बैंकिंग स्रोतों से ऋण की मांग को आंशिक रूप से कम किया। विदेशी मुद्रा बाजारों में क्रिया-कलाप, विशेष रूप से वणिक खंड में, पूंजी प्रवाहों में सुधार की गति और विदेशी व्यापार के घटे हुए स्तर के अनुरूप ही रहे (चार्ट II.39)।

वित्तीय डेरिवेटिव

II.4.11 देशीबाजारों में स्थिरता के लौटने और सिस्टम में पर्याप्त चलनिधि के साथ वर्ष 2009-10 में वित्तीय डेरिवेटिव के क्रिया-

चार्ट II.39: देशी वित्तीय बाजारों में गतिविधियां

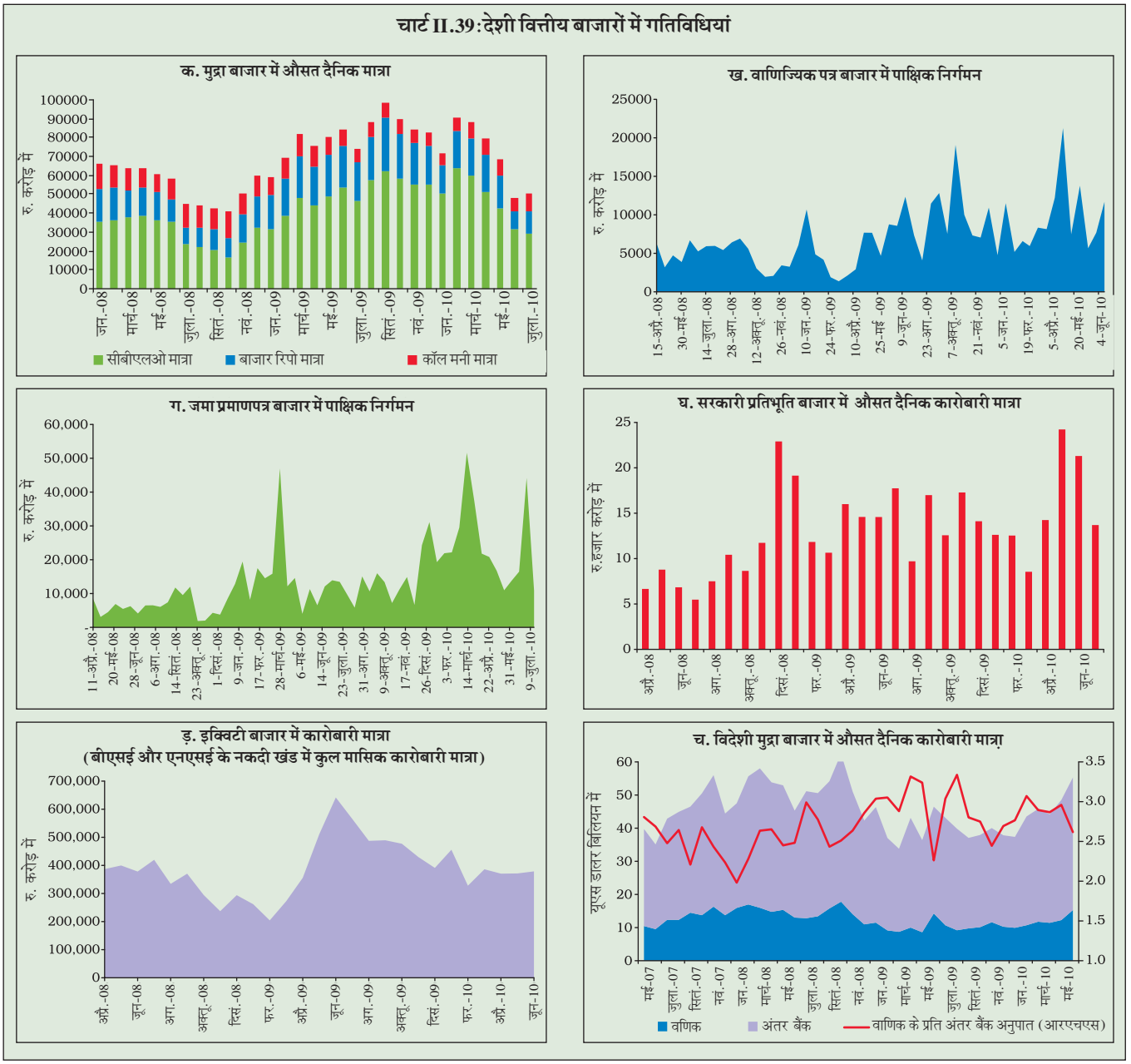

चार्ट II.40: वित्तीय डेरिवेटिव बाजारों की गतिविधियां

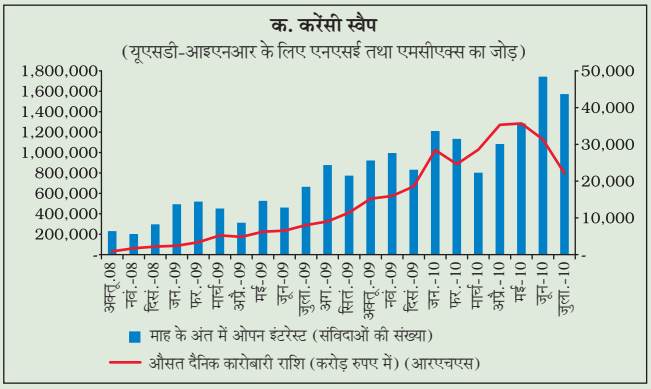

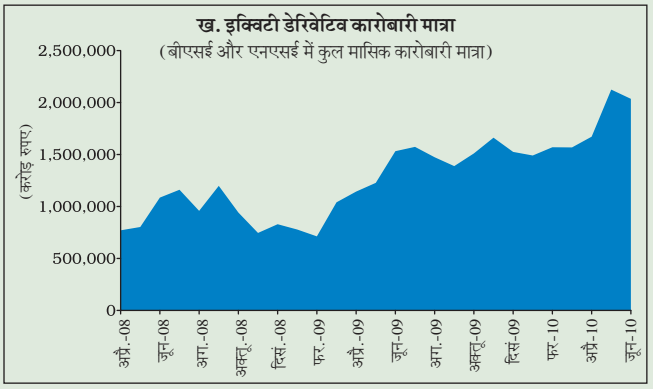

कलापों, विशेष रूप से ब्याज दर स्वैप और इक्विटी डेरिवेटिव खंड,में महत्वपूर्ण सुधार देखा गया, जिन पर वित्तीय संकट से प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था (चार्ट II.40)। 10 वर्षीय नोशनल कूपन वाले सरकारी बांड पर ब्याज दर वायदा सौदे 31 अगस्त 2009 को नेशनल स्टाक एक्सचेंज में शामिल किए गए। हालांकि, बाजार, चलनिधि और ओपन इंट्रेस्ट को रोक पाने में असफल रहा और कारोबारी मात्रा कम रही। इसलिए, 2010-11 के वार्षिक नीति वक्तव्य में 5 वर्षीय और 2 वर्षीय नोशनल कूपन वाली प्रतिभूतियों और 91 दिवसीय खज़ाना बिलों पर ब्याज दर वायदा सौदों की शुरुआत का प्रस्ताव किया गया। इन उत्पादों की शुरुआत के लिए उत्पाद संरचना और परिचालन रूपरेखा एक स्थायी समिति द्वारा तैयार की जा रही है।

II.4.12 बैंकों, प्राथमिक डीलरों और अखिल भारतीय वित्तीय संस्थानों के साथ ही कारपोरेटों को जुलाई 1999 में ब्याज दर स्वैप (आइआरएस) की अनुमति प्रदान की गई थी ताकि वे विनियमित ब्याज दरों के वातावरण में अपने ब्याज दर जोखिम का प्रबंधन कर सकें । भारतीय बाजार में स्वैप की चार बेंचमार्कों पर ट्रेडिंग की जाती है, जिनके नाम हैं - मिबोर (मुंबई अंतर-बैंक पेशकश दर), मिफोर (मुंबई अंतर-बैंक वायदा पेशकश दर), आइएनबीएमके और एमआइएसओआइएस, यद्यपि पहले दो बेंचमार्कों अर्थात मिबोर और मिफोर दोनों में सर्वाधिक ट्रेडिंग की जाती है। कुछ वर्षों में बाजार की उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। मार्च 2008 में सकल आनुमानिक मुख्य बकाया 80,18,647 करोड़ रुपए[2] पहुंच गया था जो अप्रैल 2000 के अंत में 42,82,452 करोड़ रुपए है।

II.4.13 ऐसा लगता है कि संकट ने वित्तीय नवोन्मेषों के प्रति अवधारणा को कुछ बदल दिया है। अप्रैल 2007 में डेरिवेटिव के लिए भारत में समेकित दिशानिर्देश जारी किए गए जिनका उद्देश्य प्रणाली के साथ-साथ बाजार के खिलाड़ियों के हितों की रक्षा करना था (बाक्स II.8)। 2009-10 के दौरान इक्विटी बाजार के डेरिवेटिव खंड के क्रियाकलाप में भी उल्लेखनीय बढ़ोतरी हुई, जिसमें शेयर मूल्यों में बढ़ोतरी और विदेशी संस्थागत निवेशों के अन्तर्वाह द्वारा सृजित चलनिधि सबसे आगे रही।

वित्तीय बाजारों के माध्यम से मौद्रिक नीति का संचारण

II.4.14 वित्तीय बाजारों तक मौद्रिक नीति के संचारण की प्रणाली जो वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान चिन्ता का विषय बन गयी थी, उसमें वर्ष 2009-10 के दौरान सुधार हुआ। सामान्य रूप से नीतिगत दरों में आये परिवर्तनों को बाजार ब्याज दरों में विशेष रूप से अल्पावधि में मौटे तौर पर उसी प्रकार की गतिविधियों के समान ही परिलक्षित होना चाहिए। वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान पर्याप्त चलनिधि का प्रावधान करने के साथ ही भारत में अक्तूबर 2008 और अप्रैल 2009 के बीच नीतिगत दरों में 425 आधार अंकों की कमी की गयी। अक्तूबर 2008 और अप्रैल 2009 के बीच काल-मनी दरों में लगभग 700 आधार अंकों की गिरावट नीतिगत दरों की कमी का काल दरों में तीव्रता से संचारण दर्शाती हैं, जिसने एलएएफ कॉरिडोर में 150 आधार अंकों के अंतराल को देखते हुए एलएएफ विधि से रिवर्स रेपो में शिफ्ट को अंशतः

[2] वित्तीय क्षेत्र आकलन समिति (सीएफएसए) की रिपोर्ट 2009, खंड - 2, पृ. 282

बाक्स II.8
भारत में वित्तीय नवोन्मेष: वृद्धि और स्थिरता के लक्ष्यों का संतुलन

वर्ष 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट से यह प्रकट होता है कि यद्यपि, वित्तीय नवोन्मेषों का आशय जोखिम से बचाव और सटीक कीमत की खोज करने में सहायता पाने के लिए था, तथापि, इनका प्रयोग लीवरेज और सट्टेबाजी के लिए हो सकता है जिससे विकृत प्रलोभनों का सृजन हो सकता है और वित्तीय प्रणाली में अस्थिरता का जोखिम आ सकता है। यद्यपि, यह तय करना बहुत कठिन हो सकता है कि सभी वित्तीय नवोन्मेष अच्छे है या बुरे, तो भी अब यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जा चुका है कि वित्तीय नवोन्मेषों को वित्तीय स्थिरता के व्यापक संदर्भों में देखा जाना चाहिए और ये वित्तीय प्रणाली के परिपक्वता स्तर और वास्तविक अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप अनिवार्य रूप से सुसंगत होने चाहिए।

आर्थिक वृद्धि को बढ़ाने वाले नवोन्मेषों के लिए जरूरत है संतुलन करने और वित्तीय प्रणाली को प्रणालीगत जोखिमों की ओर ले जाने वाले नवोन्मेषों से बचाने की, जो एक ऐसी चुनौती है जिसके बारे में कोई पाठ्य पुस्तक जैसा समाधान अब तक उपलब्ध नहीं है यहां तक कि कोई व्यावहारिक लगने वाला समाधान ही नहीं है। आर्थिक वृद्धि पर वित्तीय नवोन्मेष के आकस्मिक प्रभावों से संबंधित अंतरराष्ट्रीय अनुभव आधारित विश्लेषण निष्कर्षहीन रहे हैं। टर्नर (2010) के अनुसार,''.... ऐसा कोई अकाट्य प्रमाण प्रतीत नहीं होता है कि विकसित विश्व में विगत 30 वर्ष के दौरान बढ़ते हुए वित्तीय नवोन्मेषों ने उत्पाद वृद्धि पर कोई लाभप्रद प्रभाव डाला हो .... एक स्तर के बाद बढ़ी हुई वित्तीय सघनता, सकारात्मक लाभ प्रदान करना बन्द कर सकती है या वास्तव में इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ा हो।'' वित्तीय संकल्पनाओं में अपने-आप ही कुछ भी गलत होना जरूरी नहीं है; हो सकता है कि नवोन्मेषों के साथ जुड़े हुए जोखिम वस्तुतःअनुचित विनियमन, सूचना के कमजोर प्रकटीकरण, या जोखिम प्रबंधन की उपेक्षा के कारण हुए हों। ईएमई के लिए बहुधा यह सुझाव दिया जाता है कि ये ऐसे उत्पादों की शुरुआत कर सकते हैं जो सापेक्षिक रूप से सामान्य और मानकीकृत हों, जो स्पष्ट मूल्यवर्धन करते हों और नियंत्रकों, क्रेताओं और विक्रेताओं को आसानी से समझ में आ सकें। इस संदर्भ में लिप्स्की (2010) ने विचार व्यक्त किए ''....वर्तमान कठिनाइयों और चुनौतियों के बावजूद वित्तीय नवोन्मेष वैश्विक आधार पर वृद्धि को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहेंगे, लेकिन विशेष रूप से उभरते हुए बाजारों और विकासशील देशों में। जैसे-जैसे हम आगे बढ़ेंगे वर्तमान संकट से महत्वपूर्ण सबक मिल सकते हैं।''

भारत में वृद्धि में सहायक वित्तीय बाजारों की गतिविधियों को प्रोत्साहन देते समय विनियामक संरचना ऐसी रही है जो निरन्तर आधार पर वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करने की जरूरत के प्रति हमेशा सचेत रही है। प्रति-चक्रीय विनियामक वातावरण और व्यष्टि तथा समष्टि विवेकपूर्ण उपाय उन महत्वपूर्ण घटकों में है जिन्होंने भारत में संकट के प्रभावों का प्रतिरोध करने में मदद की। बैंकों को प्रोत्साहित किया गया कि वे थोक या पूंजी बाजार वित्तपोषण की तुलना में पारम्पारिक रिटेल बैंकिंग के रूप में बतायी गयी बैंकिंग पर ध्यान केंद्रित करें। बैंकिंग विनियमन में वित्तीय नवोन्मेषों के लाभों और जटिलता दोनो का समुचित परिज्ञान लिया गया। बाजारों और संस्थानों दोनो ही में वित्तीय प्रणाली में दक्षता समूहों की पर्याप्तता के दायरे को भी नई वित्तीय लिखतों के सूत्रपात में निहितार्थों का मूल्यांकन करते समय ध्यान में रखने की आवश्यकता थी। नियामक फ्रेमवर्क के दायरे में प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण सभी वित्तीय संस्थानों को लाया गया और हाल ही के वर्षों में वित्तीय समूहों के अभिनिर्धारण और नियंत्रण की नीति अपनायी गयी।

भारत में, विगत दशक में वित्तीय क्षेत्र की पहुँच और दक्षता दोनों ही को बढ़ाने वाले नवोन्मेषों की प्रक्रिया के अलावा एक चरणबद्ध तरीके से वित्तीय नवोन्मेषों की श्रृंखला का सूत्रपात किया गया। हाल ही की अवधि में रिज़र्व बैंक ने कारपोरेट बॉन्ड में रेपो और विदेशी मुद्रा में निपटाए गए ब्याज दर वायदा सौदों और विभिन्न मुद्राओं में विदेशी मुद्रा वायदा/आप्शन सौदों की शुरुआत की है। हालांकि रिज़र्व बैंक के दिशानिर्देश ऐसे संरचनाबद्ध सिंथेटिक डेरिवेटिव उत्पादों की ट्रेडिंग को प्रतिबन्धित करते हैं, जिनमें कोई अन्य डेरिवेटिव अंतर्निहित के रूप में हो। सहभागियों को ऋण जोखिम के प्रबंधन का साधन प्रदान करने के लिए अतीत में भारत ने ऋण डेरिवेटिव लागू करने पर सक्रियता से विचार किया गया था। भारत में सीडीएस लागू करने के लिए परिचालनगत ढांचे को अंतिम रूप देने हेतु रिज़र्व बैंक ने एक आंतरिक दल का गठन किया। इस दल ने यह नोट किया है कि सीडीएस बाजार का विकास एक सुविचारित और व्यवस्थित तरीके से किया जाना चाहिए जिसमें वास्तविक क्षेत्र के साथ सह-बद्धताओं पर फोकस किया जाना चाहिए तथा सुदृढ़ जोखिम प्रबंधन ढांचे के सृजन पर बल दिया जाना चाहिए ताकि हाल के वित्तीय संकट में देखी गई विभिन्न जोखिमों से निपटा जा सके। उक्त दल ने अन्य बातों के साथ-साथ यह सिफारिश की है कि सीडीएस की अनुमति संदर्भ दायित्वों के रूप में कारपोरेट बांड के लिए ही दी जाएगी, संदर्भ संस्थाएं अकेली विधिक निवासी संस्थाएं होंगी, प्रयोगकर्ता अंतर्निहित एक्सपोजर के बिना सीडीएस नहीं खरीद सकेंगे तथा ऐसी अंतर्निहित जोखिम की सीमा तक ही संरक्षण खरीदा जा सकेगा।

संदर्भ

1. रेड्डी,वाइ.वी. (2009): इंडिया एंड द ग्लोबल फाइनेंसियल क्राइसिसः मैनेजिंग मनी एण्ड फाइनैंस, ओरिएंट ब्लेकस्वैन प्रा.लि.
2. बीआइएस 79 वीं वार्षिक रिपोर्ट, 1 अप्रैल 2008 - 31 मार्च 2009, जून 29, 2009 को प्रकाशित।

दर्शाया। इसी अवधि के दौरान 91 दिवसीय खज़ाना बिलों और इसी परिपक्वता अवधि वाले वाणिज्यिक पत्रों पर प्रतिलाभों में गिरावट प्रमुख नीतिगत दरों में आयी गिरावट की तुलना में अधिक रही। नीतिगत दरों में कमी का दीर्घावधि संचारण सरकारी बांडों में भी उल्लेखनीय रूप से हुआ, जहां इसी अवधि में 10 वर्षीय बांड प्रतिलाभ में लगभग 200 आधार अंकों की गिरावट हुई, भारी सरकारी घाटे और बढ़ती हुई मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं से उत्पन्न होने वाली चिंताओं के चलते इसमें वृद्धि हुई।

चार्ट II.41 : सरकारी प्रतिभूतियों पर प्रतिफल वक्र की गति

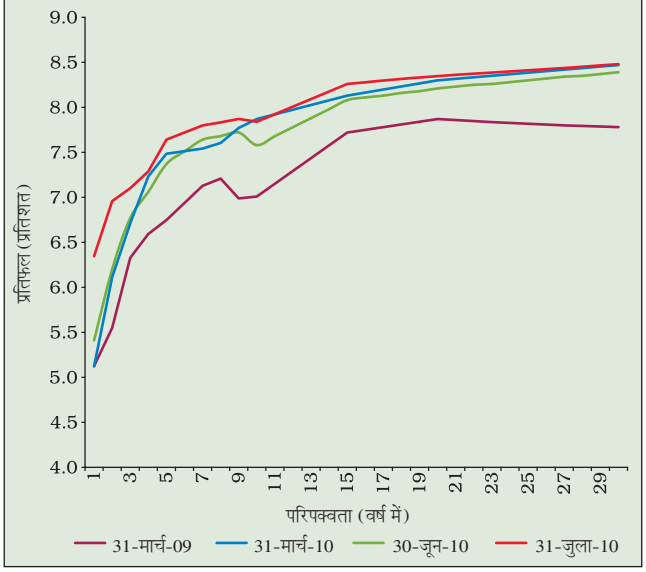

II.4.15 ब्याज दरों में स्थायित्व के दृष्टिकोण से वर्ष 2009-10 के दौरान राजकोषीय समेकन वित्तीय बाजारों के लिए चिंता का एक प्रमुख विषय बन गया। जबकि मुद्रा स्फीति और राजकोषीय घाटे की चिंताओं को दर्शाते हुए वर्ष 2009-10 के दौरान मध्यावधि से दीर्घावधि बांड प्रतिलाभों में लगातार वृद्धि होती रही, वहीं चलनिधि अधिशेष स्थितियों को दर्शाते हुए अल्पावधि प्रतिलाभों में वर्ष 2009-10 की तीसरी तिमाही तक कमजोरी बनी रही, जो इसके बाद चलनिधि अधिशेष में कमी आ जाने से चौथी तिमाही में बढ़ते गये और इसके बाद नीतिगत ब्याज दर चक्र में विपरीत दिशा में बदलाव हुआ (चार्ट II.41)। यद्यपि, वर्ष 2010-11 के केंद्रीय बजट में राजकोषीय घाटे के लक्ष्यों में कमी ने मध्यम से दीर्घावधि प्रतिलाभ में स्थिरता का मार्ग प्रशस्त किया और कुछ हद तक राजकोषीय घाटों के सामान्य ब्याज दर वातावरण पर प्रभाव डालने की चिंताओं को कम किया। वर्ष 2010-11 की प्रथम तिमाही के दौरान मुद्रास्फीति के बढ़े हुए आंकड़ों के चलते 10 वर्षीय प्रतिलाभ पुनः बढ़ गये परंतु इसके बाद इनमें गिरावट आयी जो कि 3जी / बीडब्ल्यूए स्पैक्ट्रम नीलामी से बजट में अपेक्षित प्रवाह से उच्च आमदनी को प्रकट करता है। मुद्रास्फीति की उच्चतम स्थिति में कुछ सुधार होने संबंधी बाजार की उम्मीदों, सरकारी प्रतिभूतियों में वित्तीय संस्थागत निवेशकों के लिए निवेश की उच्चतम सीमा में वृद्धि संबंधी उम्मीदों, अल्पकालीन नकदी प्रबंधन के लिए निर्गम की घोषणा के कारणों से भी प्रतिलाभ में कुछ कमी आयी।

II.4.16 ऋण बाजारों में नीतिगत दरों का संचारण और उद्योग को ऋण का प्रवाह अत्यंत महत्वपूर्ण चिन्ता के रूप में छाये रहे। वर्ष 2009-10 की प्रथम छमाही के दौरान ऋण वृद्धि में मंदी छायी रही, जबकि दूसरी छमाही में जीडीपी वृद्धि में हुई सुदृढ़ बहाली ने ऋण की मांग में तेजी को बढ़ावा दिया, जिससे बैंकिंग प्रणाली की ओर से आपूर्ति में किसी बाधा की बजाय माँग में कमजोरी प्रकट होती है। यद्यपि, निम्नतर उधार दरों के माध्यम से ऋण बाजार को नीतिगत दरों के संचारण में सुधार देखने में आया तथापि ऋण प्रवाह के दृष्टिकोण से यह चिंता का विषय बना रहा। तथापि, बैंकों की दीर्घकालिक उधार-दरों पर नीतिगत दरों का संचारण वित्तीय बाजारों के अन्य खंडों की तुलना में सापेक्षिक रूप से धीमा रहा (चार्ट II.42)।

II.4.17 ऋण बाजार में धीमा संचारण वित्तीय बाजारों में किसी संकट से संबंधित बाधाओं की बजाए संरचनागत कठोरताओं की ओर इशारा करता है। पहला, थोक मूल्य सूचकांक (डब्ल्यूपीआइ) के संदर्भ में हेडलाइन मुद्रास्फीति कम रही जबकि उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति के विभिन्न माप बढ़े हुए रहे, जिन्होंने मुद्रास्फीति पूर्वापेक्षाओं को कम नहीं होने दिया। दूसरा, बैंक लघु बचतों के रूप में अपनी जमाराशियों का आधार खो देने की आशंका से केन्द्रीय बैंक की नीतिगत दर संकेतों के जवाब में आमतौर पर जमा दरों में कटौती किए जाने के प्रति सतर्क रहे। अल्प बचतों पर ब्याज दरों में नियमित आधार पर समायोजन, विशेष रूप से रिज़र्व बैंक द्वारा नीतिगत दरों में किए गए परिवर्तनों की अनुक्रिया में, नहीं किया गया। तीसरा, जमाकर्ताओं के बैंकों के साथ संविदात्मक संबंध विषम रहे। जब,ब्याज दरें बढ़ रहीं हों, जमाकर्ताओं के पास यह विकल्प होता है कि वे अपनी जमाराशियों को परिपक्वता अवधि से पूर्व आहरित कर उसे उस समय चल रही ऊंची दरों पर फिर से जमा करा दें। इसके विपरीत, जब ब्याज दरें गिर रही हों, तो जमाकर्ताओं के पास उच्चतर दरों पर पुरानी जमाराशियां जारी रखने के लिए प्रोत्साहन रहता है। इस संरचनात्मक कठोरता से मौद्रिक संचारण में रुकावट आती है। बैंक आम तौर पर, नीतिगत संकेतों के जवाब में अपनी उधार देने की दरों को शीघ्रता से समायोजित करने में असमर्थ होते हैं जब तक कि वे जमाराशियों के पुनर्मूल्यन द्वारा लागत पक्ष को समायोजित करने में समर्थ न हो पायें। चौथा, भारी सरकारी उधारों के चलते भी मौद्रिक संचारण बाधित होता है। इस प्रकार, संरचनात्मक लक्षण को दर्शाते हुए बैंकों की उधार देने की दरों में क्रमिक नरमी दिखाई पड़ी जिससे ऋण बाजारों में संचारण की गति में धीमापन आया। बैंकों के लिए उधार देने की दरों के निर्धारण हेतु 1 जुलाई 2010 से

सारणी II.42: नीतिगत दरों का वित्तीय बाजारों में संचारण

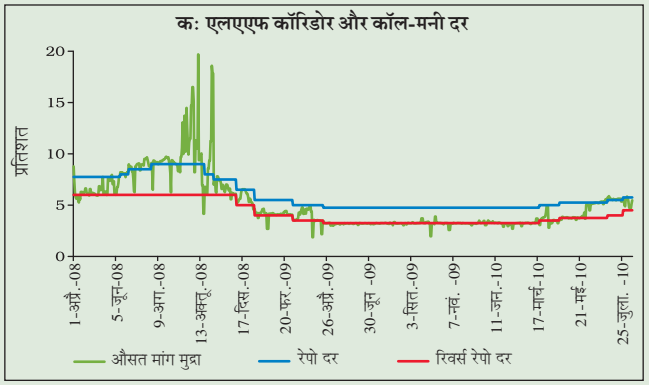

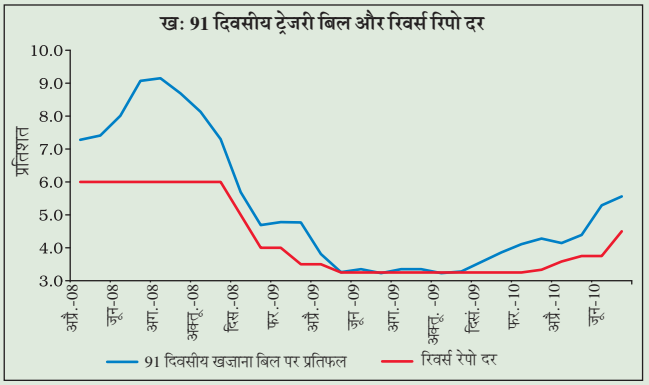

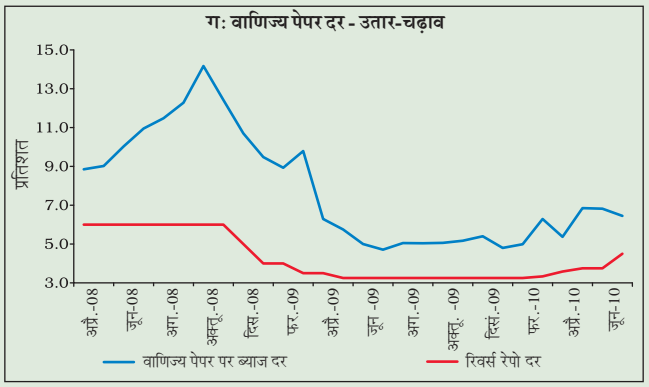

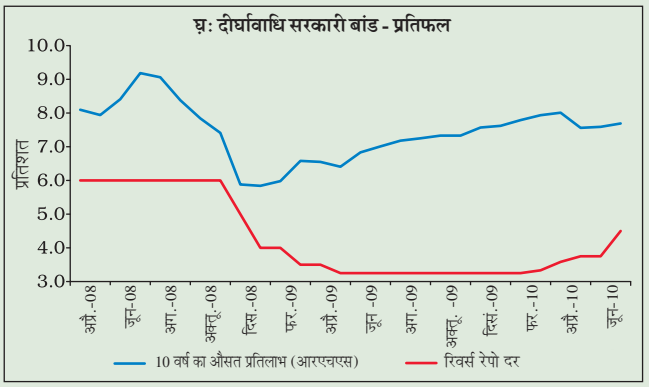

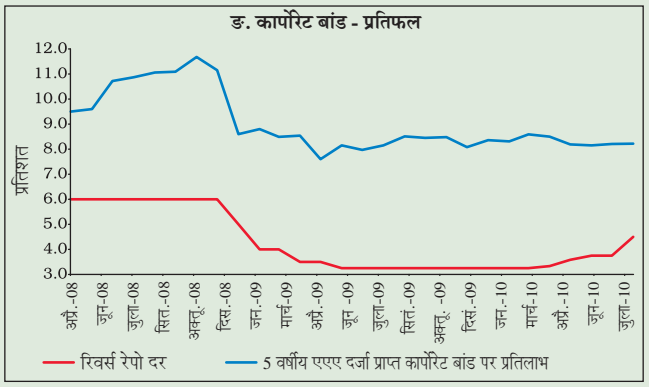

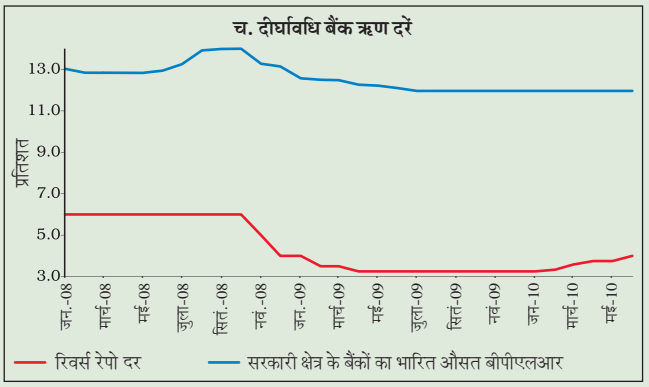

लागू होने वाली आधार दर प्रणाली से, मौद्रिक नीति संचारण के आकलन में सुधार होने की आशा है।

II.4.18 आधार दर प्रणाली बैंकों को यह छूट देती है कि वे पारदर्शिता सुनिश्चित करते हुए अपने द्वारा दिए जाने वाले ऋण का मूल्य निर्धारण करें। आधार दरों में सापेक्षित दक्षता और लागत संरचना प्रतिबिम्बित होगी। उधार देने की दरें जहां अलोचशील होती है वहीं यह आशा की गयी है की आधार दर प्रणाली अधिक लचीली होगी और मौद्रिक संचारण के ब्याज दर और ऋण दोनो चैनलों को मजबूत बनायेगी। यह माना जा रहा है कि यह बैंकों द्वारा वित्तीय मध्यस्थता प्रक्रिया की आबंटनात्मक दक्षता में बढ़ोतरी करेगी। दो लाख रुपये तक के ऋणों की उधार दरों को विनियंत्रित करने से कृषि और छोटे व्यवसायों को ऋण का प्रवाह बढ़ेगा।

II.4.19 यद्यपि सूक्ष्म वित्त संस्थाएं वित्तीय समावेशन में योगदान दे रही है फिर भी ऋणों पर उनके द्वारा ली जाने वाली ब्याज दर अधिक बनी रही हैं। उच्च ब्याज दरें निश्चिय ही उनकी उधार लेने और परिचालन लागतों का अधिक होना परिलक्षित करती हैं। भारतीय रिज़र्व बैंक के

पास ऋण कंपनियों के रूप में वर्गीकृत और प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण जमा संग्रहण न करने वाली 12 एनबीएफसी (एन.बी.एफ.सी - एन.डी.एस.आइ) (100 करोड़ रुपए से अधिक आस्ति आकार वाली) पंजीकृत हैं जो सूक्ष्म वित्त क्षेत्र को ऋण देने का कार्य करती हैं। ऋणों पर उनके द्वारा ली जाने वाली ब्याज दर 23.6 प्रतिशत से 30 प्रतिशत के बीच होती है। बहुत से अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों, विशेषरूप से निजी क्षेत्र के नए बैंकों और विदेशी बैंकों ने अपने प्राथमिकता क्षेत्र के लक्ष्यों को पूरा करने के लिये संपूर्ण रूप से खरीद करने और ऋणों के समनुदेशन के लिये गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के साथ समझौते किए हैं। तथापि, अंतिम हिताधिकारियों को कम ब्याज दरों का लाभ नहीं मिल पाता है क्योंकि बैंकों ने इन गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को ऋण का प्रबंधन करने का दायित्व दे रखा है। फलस्वरूप उधारकर्ता उसी दर पर भुगतान जारी रखता है। इन गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के लिये निधियों का प्रमुख स्रोत बैंकों और वित्तीय संस्थाओं (विदेशी वित्तीय संस्थाओं सहित) से उधार लेना ही होता है। उनमें से बहुतों ने बड़ी धनराशि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के रूप में प्राप्त की है और उनमें से अधिकतर का स्वामित्व विदेशी है।

इक्विटी और आवास की कीमतें

II.4.20 विदेशी संस्थागत निवेशों के पुनःआरंभ होने के साथ ही देशीबाजार में मजबूत रिकवरी और बाजार नकदी की पर्याप्तता से भारत में आस्तियों की कीमतें विशेषकर इक्विटी कीमतों में तीव्र वृद्धि हुई। स्टॉक की कीमतों में, दुबई वर्ल्ड के भुगतान में चूक और ग्रीस सरकारी देनदारी संकट से उपजे वैश्विक वित्तीय बाजार झटकों के कारण हुई कुछ यदा-कदा गिरावटों को छोड़कर, पूरे वर्ष भर तेजी बनी रही (चार्ट II.43 क और ख)। आर्थिक रिकवरी के दौरान, इक्विटी के मूल्यों में तीव्र वृद्धि ने निवेश के माहौल में सुधार लाने में सहायता की और कार्पोरेट संस्थाओं को आइपीओ और निजी आंबटन के जरिए धन जुटाने में सक्षम बनाया। यद्यपि वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान आवास की कीमतों के गिरावट आई, पर बाद में इसमें तीव्र उछाल आया जो मोटे तौर पर स्टॉक की कीमतों में उछाल के साथ ही हुआ (चार्ट II.43 ग और घ)। 2009-10 की चौथी तिमाही में कुछ गिरावट आने के बावजूद मैक्रोइकोनामिक प्रबंधन की दृष्टि से आस्ति की कीमतों में तीव्र गति से वृद्धि चिंता का कारण

चार्ट II.43: इक्विटी और आवास की कीमतों में उतार-चढ़ाव

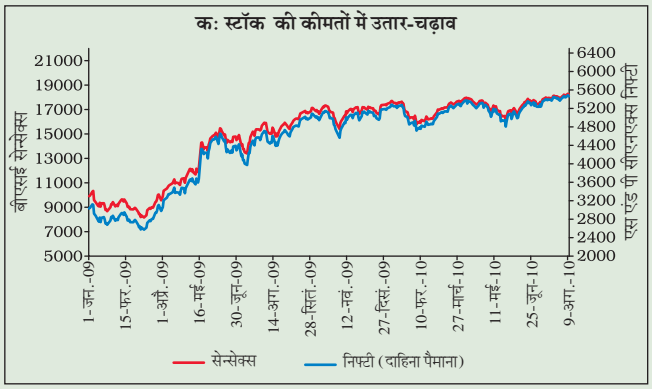

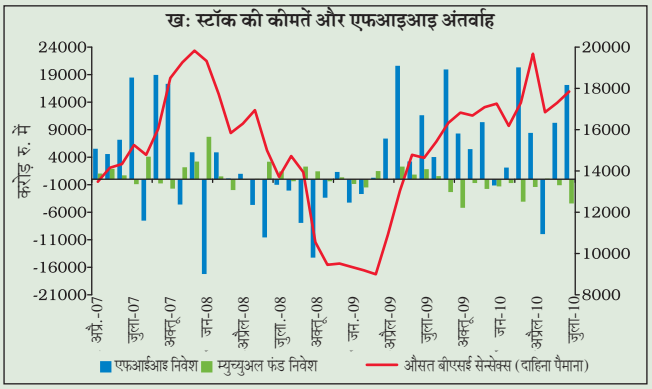

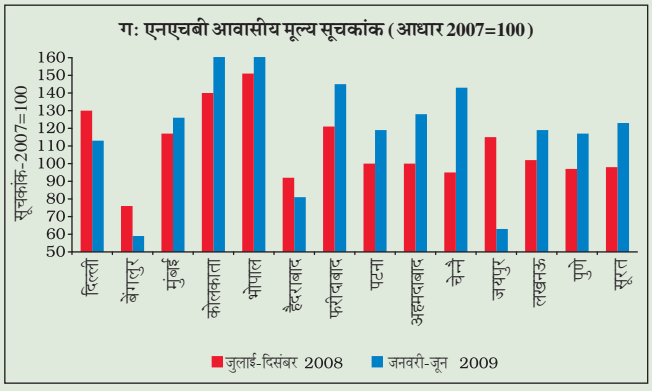

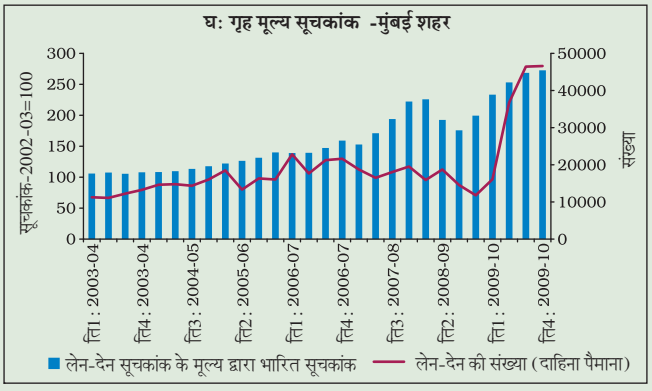

बनी रही। आस्तियों की ऊंची कीमतें आमतौर पर मांग दबाव बनाती हैं जिससे मुद्रास्फीति दबाव बढ़ता है। हालांकि, मुद्रास्फीतिकारी प्रक्रिया के लिए इनके निहितार्थ समाविष्ट रहे।

विनिमय दर

II.4.21 विनिमय दर के उतार-चढ़ाव को तय करने में पूंजी प्रवाह के महत्व ने देशीविदेशी मुद्रा बाजार को अंतरराष्ट्रीय पूंजी प्रवाह के प्रति अतिसंवेदनशील बना दिया है। भारत में पूंजी प्रवाह विनिमय दर के साथ-साथ अन्य बाजार खंड में भी उतार-चढ़ाव का प्रमुख कारण है। जब एफआइआइ निवेशक अचानक इक्विटी और प्रतिभूति बाजार से एक साथ निवेश वापस खींचते हैं, तो स्टॉक और बांड की कीमतें प्रभावित होती हैं और जब निवेशक मोचन से प्राप्त राशि को देश से बाहर ले जाते हैं, तो विनिमय दर प्रभावित होती है। विनिमय दर में उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करने के लिए रिज़र्व बैंक के विदेशी मुद्रा बाजार परिचालनों के कारण देशी नकदी में कमी आ सकती है और जिससे मुद्रा बाजार प्रभावित हो सकता है। चूंकि पूंजी प्रवाह वैश्विक गतिविधियों के साथ-साथ देशी अर्थव्यवस्था के मूल आधारों के प्रति संवेदनशील है, पर कभी-कभी देशी वित्तीय बाजार केवल पूंजी प्रवाहों द्वारा ही आगे बढ़ता है। अतः वित्तीय बाजारों के माध्यम से आ रहे बाह्य प्रतिकूल प्रभावों के जोखिमों की पहचान करनी होगी और समय पर इसका निवारण करना होगा।

II.4.22 2009-10 के दौरान, अल्पावधि पूंजी प्रवाह और सकारात्मक वृद्धि दृष्टिकोण के कारण सामान्यतः अमेरिकी डालर की तुलना में रुपये के मूल्य में वृद्धि हुई यद्यपि कभी-कभी मूल्यह्रास का रुख रहा। पूंजी प्रवाहों के आगमन से बाजार में आपूर्ति की सहज स्थिति होने से भी वायदा प्रीमियम में सुधार हुआ। महत्वपूर्ण बात यह है कि चालू खाता में वित्तीय अंतर की तुलना में पूंजी प्रवाह हालांकि बहुत अधिक नहीं था, फिर भी विनिमय दर में बढ़ोतरी हुई जो इसके लचीलेपन को दर्शाती है। ग्रीस ऋण संकट और उससे जुड़े यूरो आस्ति से डॉलर आस्ति की ओर झुकाव के कारण डालर की तुलना में रुपये के मूल्य में कमी आई और विदेशी मुद्रा बाजार में ज्यादा उतार-चढ़ाव देखने में आया (चार्ट II.44)

II.4.23 यूरो ज़ोन की राजकोषीय व्यवहार्यता चिंताओं से उभरने वाली बढ़ती हुई वैश्विक बाजार अनिश्चितताओं के बावजूद 2010-11 की प्रथम तिमाही में देशी बाजार सामान्य रूप से कार्य करते रहे, यद्यपि कुछ क्षेत्रों में उतार-चढ़ाव अधिक रहा। जुलाई 2010 में कुछ लाभ होने के बावजूद देशी इक्विटी मूल्यों में गिरावट आई। यूरो पर दबाव बढ़ने और संस्थागत विदेशी निवेश के प्रवाहों में उतार-चढ़ाव के कारण एक्सचेंज रेट में गिरावट आई। देशी मुद्रा बाजारों पर चलनिधि का दबाव रहा जिससे मुद्रा बाजार में अल्पावधि दरों में मजबूती आई। इन गतिविधियों की अनुक्रिया स्वरूप रिज़र्व बैंक ने अस्थायी चलनिधि सुविधाएं प्रारंभ की जिसने अंतर-बैंक काल दरों को एल.ए.एफ कारीडोर की सीमा के आसपास नियंत्रित रखने में मदद प्रदान की। तथापि, सरकार के राजकोषीय घाटे में कमी होने की संभावनाओं और सरकारी बांडों के सामान्य रूप से सुरक्षित अहसास के चलते मध्यम से दीर्घावधि ब्याज में गिरावट आई। 2010-11 की प्रथम तिमाही में देशी पूंजी बाजार के प्राथमिक क्षेत्र ने संसाधनों का अधिक मात्रा में संग्रहण दर्शाया।

चार्ट II.44: विनिमय दर और वायदा प्रीमियम

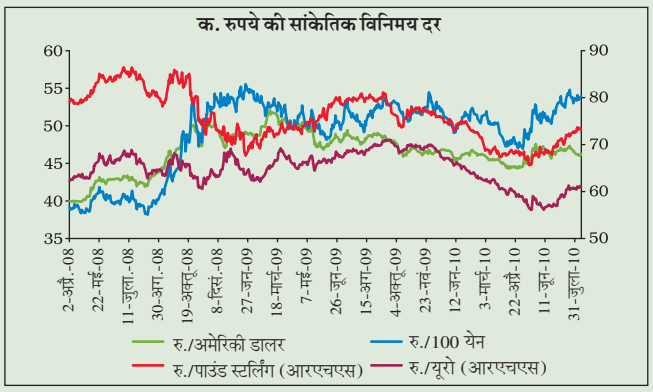

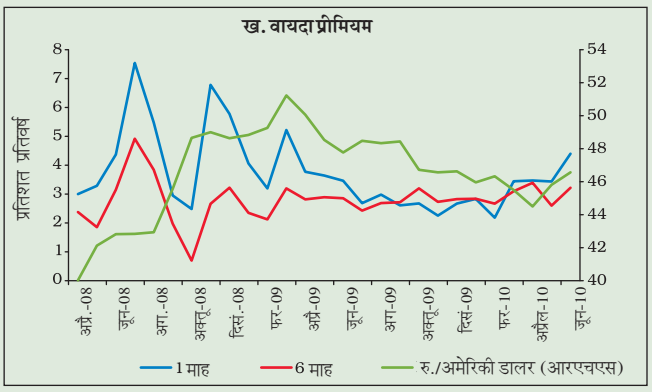

V. सरकारी वित्त

II.5.1 वैश्विक संकट की अनुक्रिया में सरकार द्वारा 2008-09 के दौरान उठाए गए असाधारण राजकोषीय कदम को 2009-10 के दौरान वृद्धि को बहाल रखने के लिए जारी रखा जाना था। परिणामस्वरूप, बजट अनुमानों में जीडीपी के प्रतिशत के तौर पर राजस्व घाटे (आरडी) और सकल राजकोषीय घाटे को 2008-09 के पहले से बढ़े हुए स्तर से भी और बढ़ाकर रखा गया। 2009-10 के संशोधित अनुमानों में राजस्व में कमी और बजट अनुमानों की तुलना में गैर-योजना व्यय में बढ़ोतरी के कारण राजस्व घाटा और राजकोषीय घाटा बजट अनुमानों से भी अधिक रहा। बाद में 2009-10 के उपलब्ध अनंतिम आंकड़े भी इस प्रवृत्ति की पुष्टि करते हैं।

II.5.2 अप्रत्यक्ष कर दरों में कटौती के माध्यम से विवेकपूर्ण उत्प्रेरक उपायों के साथ-साथ राजस्व पर आर्थिक मंदी के ऋणात्मक प्रभाव के परिणामस्वरूप राजस्व प्राप्ति में नाममात्र की वृद्धि हुई। मुद्रास्फीति को रोकने के उद्देश्य से उठाए गए कुछ राजकोषीय उपायों ने भी घाटे को और अधिक बढ़ाया। यद्यपि राजस्व व्यय में कम वृद्धि के कारण कुल व्यय की वृद्धि में महत्वपूर्ण गिरावट आई, पूंजीगत व्यय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। घाटे के स्तर को समेकन के संकट-पूर्व की स्थिति में वापस लौटने और मध्यावधि में उच्च और अनवरत वृद्धि में योगदान देने के लिए, इस वर्ष के अंत तक राजकोषीय निकासी पर एक विश्वसनीय कार्रवाई योजना अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। तदनुसार 2010-11 के केंद्रीय बजट में राजकोषीय निकासी की शुरुआत की दिशा में उठाये जाने वाले कदमों की ओर इंगित किया गया है (चार्ट II.45)।

2009-10 के दौरान राजकोषीय रुख

II.5.3 अर्थव्यवस्था को उत्प्रेरित करने के लिए विस्तारवादी कदम को जारी रखते हुए, 2009-10 के दौरान कर कटौती के माध्यम से उत्प्रेरणा में बढ़ोतरी की गई, जबकि व्यय उपायों की प्रमुखता बनी रही। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (नरेगा) जैसी सामाजिक क्षेत्र की विभिन्न परियोजनाओं पर व्यय में उल्लेखनीय वृद्धि और आय पर छठे वेतन आयोग की सिफारिशों को लागू करने के स्थायी प्रभाव ने भी निजी उपभोग मांग में गिरावट की दर को रोकने में मदद की। तदनुसार, पिछले वर्ष की तुलना में 2009-10 के दौरान जीडीपी के प्रतिशत के तौर पर कुल व्यय

चार्ट II.45: केंद्र सरकार के प्रमुख घाटा संकेतक

में 0.5 प्रतिशत अंक की बढ़ोतरी हुई। सरकार ने भी 7 दिसंबर 2008 से 2009-10 के राजकोषीय वर्ष में उत्पाद शुल्क की दरों में की गई 4 प्रतिशत अंक की कटौती की, इसके अलावा केन्द्रीय उत्पाद शुल्क की सामान्य दर को 10 प्रतिशत से घटाकर 8 प्रतिशत और सेवा कर दर को 12 प्रतिशत से घटाकर 10 प्रतिशत कर दिया गया। इन कदमों को राजस्व घाटे और सकल राजकोषीय घाटे में और अधिक बढ़ोतरी के बावजूद उठाया गया, ताकि वैश्विक मूल्यवृद्धि के मुद्रास्फीतिकारी प्रभावों को कम करने के साथ-साथ सकल मांग को भी बढ़ावा दिया जा सके। इन उपायों से निवल कर राजस्व में जीडीपी के प्रतिशत के तौर पर 0.5 प्रतिशत अंकों की गिरावट आई (चार्ट II.46)

II.5.4 जीडीपी के प्रतिशत के तौर पर राजकोषीय उत्प्रेरक उपाय 2008-09 के 2.4 प्रतिशत से गिरकर 2009-10 के दौरान 1.8 प्रतिशत रह गये। इसके अलावा, 2009-10 के दौरान राजकोषीय उत्प्रेरणा के घटकों में गुणात्मक सुधार भी देखा गया। सकल मांग में तेजी लाने तथा सामाजिक और भौतिक बुनियादी ढांचे पर और अधिक ध्यान देकर क्षमता निर्माण के लिए व्यय को बेहतर रूप में लक्ष्यित किया गया। अतः, 2009-10 के दौरान राजस्व व्यय में 14 प्रतिशत की बढ़ोतरी की तुलना में पूंजीगत व्यय में लगभग 28 प्रतिशत की वृद्धि हुई। व्यय पर विस्तारवादी रवैया को अपनाते समय, राजस्व और पूंजीगत व्यय के बीच आबंटन के चुनाव को इस दृष्टि से देखना होगा कि किस तरह के व्यय से सीमित पश्चता के

चार्ट II.46: जीडीपी के प्रति राजस्व प्राप्ति और व्यय का अनुपात

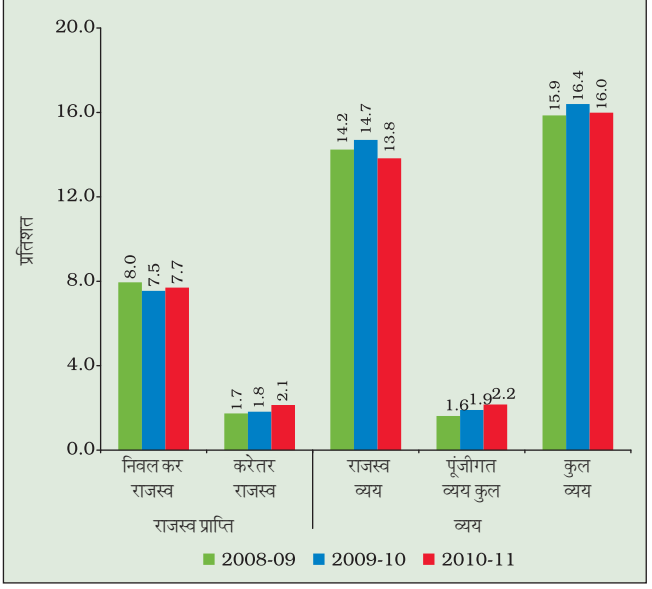

साथ वृद्धि होगी और किस प्रकार के व्यय से देरी से वृद्धि होगी परंतु वह मध्यावधि राजकोषीय धारणीयता पर कम दबाव पड़ेगा। राजस्व व्यय के विपरीत पूंजीगत व्यय से भविष्य में नकदी प्रवाह के निर्माण की आशा की जाती है, जिससे इसके बदले उन ऋणों की चुकौती की जाएगी जिनसे पूंजीगत व्यय का वित्तीयन होता है।

II.5.5 योजनेतर घटक व्यय के 16.2 प्रतिशत कम होने के कारण 2009-10 के संशोधित आकलन में पूंजीगत व्यय परिकल्पित स्तर से 6.8 प्रतिशत कम रहा। तदनुरूप राजस्व व्यय 1.0 प्रतिशत बढ़ गया क्योंकि वेतन, पेन्शन और सब्सिडी में तय सीमा से अधिक व्यय होने के कारण राजस्व व्यय बजट अनुमानों से 3.7 प्रतिशत अधिक रहा (चार्ट II.47)।

II.5.6 वेतन व्यय में वृद्धि छठे वेतन आयोग के पंचाट पर की गई बकाया राशियों के भुगतान से अधिक था, जो बजट अनुमानों का हिस्सा था। हालांकि ये अतिरिक्त व्यय वृद्धि में रिकवरी को बढ़ाने के लिए उठाये गए उद्देश्यपरक कदम का हिस्सा नहीं थे, पर इनके घटित होने के समय और मात्रा के कारण इन्होंने 2009-10 के दौरान अर्थव्यवस्था में उत्प्रेरक के तौर पर प्रभावी तरीके से कार्य किया। योजनेतर व्यय में, उच्चतर ब्याज भुगतान मुख्यतः पिछले वर्ष के उच्च उधार को दर्शाते हैं और निश्चित रूप से वे उत्प्रेरक उपायों का हिस्सा नहीं थे। ऐसे व्यय को स्वयं में उत्प्रेरणा की बजाय पिछली उत्प्रेरणा की लागत के तौर पर देखा जाना चाहिए ।

राजकोषीय सुधार और समेकन

II.5.7 वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान अपनाए गए असाधारण राजकोषीय रुख काफ़ी हद तक आर्थिक मंदी को रोकने के अल्पावधि उद्देश्य और उसके बाद अर्थव्यवस्था को उत्प्रेरित करने में सफल रहे। 2009-10 के दौरान जैसे-जैसे आर्थिक रिकवरी में दृढ़ता की संभावना अधिकाधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगी, केंद्र सरकार ने 2010-11 के केंद्रीय बजट में क्रमिक रूप से राजकोषीय निकासी संबंधी योजना की घोषणा की। इसका लक्ष्य राजस्व व्यय की वृद्धि में कटौती कर उसे 5.8 प्रतिशत पर रखते हुए राजस्व प्राप्ति में 18.1 प्रतिशत और ऋणेतर पूंजीगत प्राप्ति में 54.0 प्रतिशत की महत्वपूर्ण वृद्धि कर 2010-11 के दौरान राजस्व घाटे और सकल राजकोषीय घाटे को कम करना था (चार्ट II.48)। राजस्व प्राप्ति में मजबूत वृद्धि का आधार अप्रत्यक्ष कर में आंशिक कमी, मजबूत वृद्धि से राजस्व में प्रत्याशित उछाल और 3-जी/ब्राडबैंड वायरलेस ऐक्सेस (बीडब्ल्यूए) स्पेक्ट्रम बोली की आगम राशि है। योजनेतर

चार्ट II.47: 2009-10 में केंद्र सरकार का बजटीकृत और संशोधित व्यय

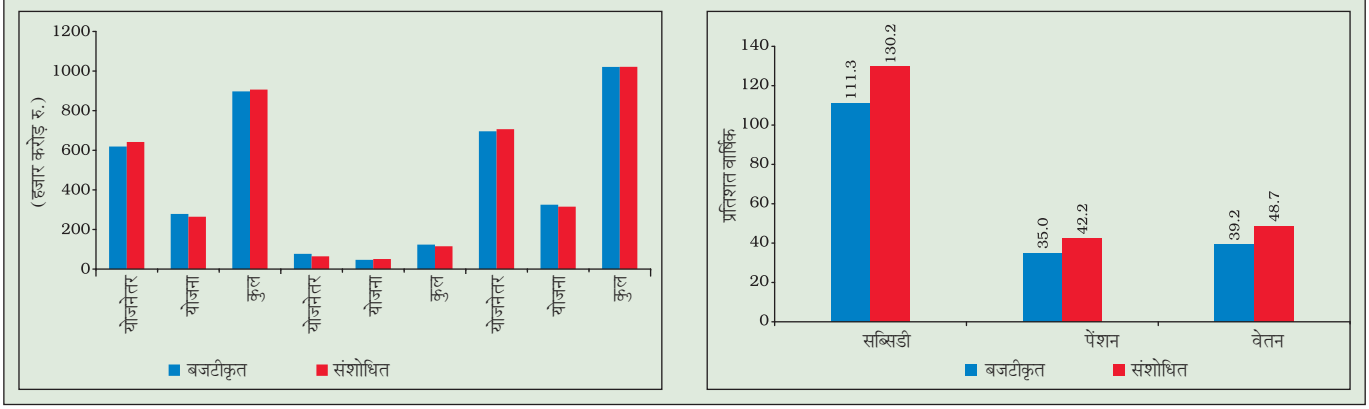

घटकों को लगभग पिछले वर्ष के स्तर तक ले आने से राजस्व व्यय में कमी आने की आशा है, जबकि वर्ष 2010-11 के दौरान बजट में पूंजीगत व्यय का 30.2 प्रतिशत की दर से बढ़ना निर्धारित किया गया है। 2010-11 के लिए नियत ये उपाय राजकोषीय निकासी की शुरुआत के साथ-साथ राजकोषीय समायोजन की गुणवत्ता पर बल देने, दोनों की ओर संकेत करते हैं। इनके साथ, मध्यावधि राजकोषीय नीतिगत वक्तव्य (एमटीएफपीएस) भी राजकोषीय समेकन के प्रमुख मानदंडों के लिए रोलिंग लक्ष्यों के रूप में मध्यावधि राजकोषीय समेकन का रास्ता दिखाता है। राजस्व घाटे और सकल राजकोषीय घाटे को कम करके 2012-13 तक जीडीपी के क्रमशः 2.7 प्रतिशत और 4.1 प्रतिशत तक लाने की योजना है।

II.5.8 मध्यावधि समष्टि-आर्थिक संभावना की राजकोषीय जोखिम को कम करने के लिए अल्पावधि से मध्यावधि में परिकल्पित योजना के अनुसार राजकोषीय समायोजन की गुणवत्ता और समेकन को एक सीमा तक प्राप्त करने की संभावना अत्यधिक महत्वपूर्ण होगी। ऐसा प्रतीत होता है कि वर्ष 2010-11 के दौरान परिकल्पित राजकोषीय सुधार व्यय और प्राप्ति की एकबारगी मदों पर उल्लेखनीय रूप से निर्भर रहेंगे। व्यय पक्ष से बकाया भुगतान एवं कृषि ऋण माफी और प्राप्ति पक्ष से विनिवेश एवं 3-जी/बीडब्ल्यूए स्पेक्ट्रम बोली से प्राप्त राशियों जैसी एकबारगी मदों को छोड़कर, पिछले वर्ष की तुलना में राजस्व घाटे और सकल राजकोषीय घाटे में क्रमशः जीडीपी के 0.5 और 0.3 प्रतिशत अंकों की कमी होगी, जबकि बजट में इसमें क्रमशः 1.3 और 1.2 प्रतिशत अंकों की कमी का अनुमान लगाया गया था (चार्ट II.49)। 3जी/बीडब्ल्यूए नीलामियों के तहत की गई उच्चतर वसूलियों के एक बड़े भाग का पूर्वक्रय हाल में संसद में रखी गई 2010-11 की अनुपूरक अनुदान मांगों के पहले बैच के लिए निर्धारित लगभग 54,589 करोड़ रुपए के निवल नकदी बर्हिगम द्वारा कर लिया जाएगा। तथापि, स्थायी राजकोषीय समेकन के लिए व्यय और प्राप्ति के आवर्ती घटकों में सुधार और एकबारगी मदों पर कम निर्भरता की आवश्यकता है क्योंकि ये विकल्प प्रत्येक वर्ष उपलब्ध नहीं होंगे।

II.5.9 एमटीएफपीएस में दिए गए संकेत के अनुसार आरडी में समायोजन भी वर्ष 2013-14 तक राजस्व घाटे को समाप्त करने की तेरहवें वित्त आयोग की उन सिफ़ारिशों को पूरा नहीं कर सकता, जिसे सरकार ने सैद्धांतिक रूप से स्वीकार कर लिया है। आगे भी, यह काफी स्पष्ट है कि प्रत्यक्ष कर कोड (डीटीसी) और माल और सेवा कर (जीएसटी) के अधीन परिकल्पित कर सुधारों के माध्यम से अगले तीन से चार वर्षों तक राजस्व/राजकोषीय घाटे में सभी आवश्यक समायोजन को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। एमटीएफपीएस में, इन कर सुधार उपायों के फलस्वरूप जीडीपी के प्रति वृद्धिशील सकल कर राजस्व अनुपात 2011-12 के दौरान जीडीपी का 0.7 प्रतिशत अंक और 2012-13 के दौरान जीडीपी का

चार्ट II.48: मध्यावधि राजकोषीय नीति संबंधी वक्तव्य के अंतर्गत रोलिंग लक्ष्य

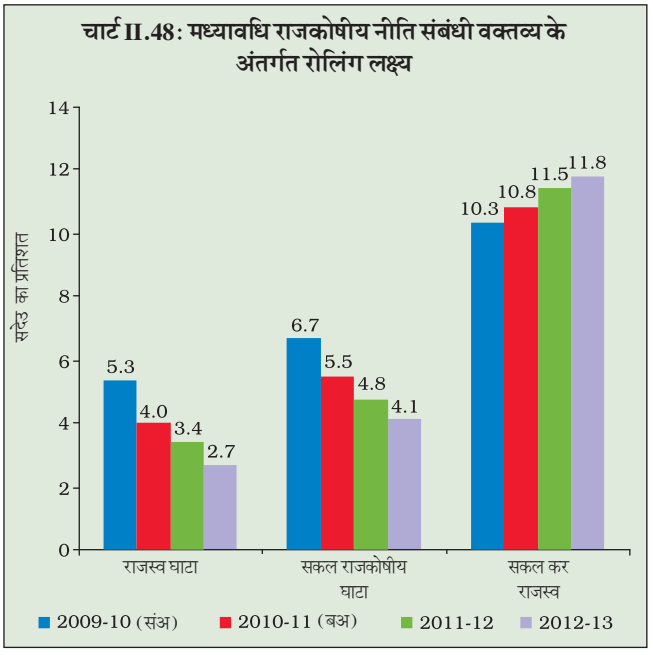

चार्ट II.49: वर्ष 2010-11 के दौरान एकबारगी मदों के समायोजन के बाद घाटे के मानकों में कमी की सीमा

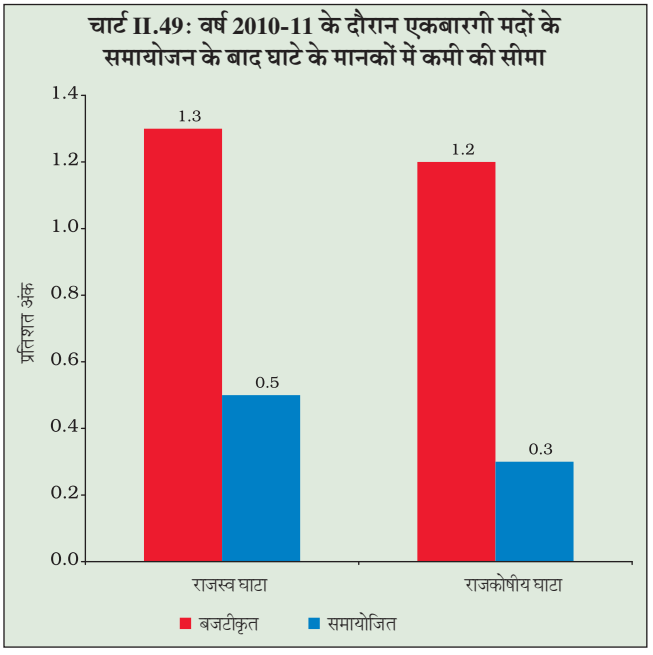

0.3 प्रतिशत अंक रहने का अनुमान है। राजस्व घाटे को शून्य तक लाने के लिए आवश्यक न्यूनतम सुधार से यह बहुत कम है। इस प्रकार से, कर सुधारों के अलावा प्राथमिकता और युक्तिसंगतता की दृष्टि से व्यय सुधार बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण होंगे।

II.5.10 व्यय सुधारों के अंतर्गत, वर्ष 2010-11 के बजट में योजनेतर व्यय में वृद्धि को व्यक्त सब्सिडी, विशेषकर पेट्रोलियम और खाद पर सब्सिडी, में कमी करके कम करने का प्रयास किया गया है, जबकि इस अवधि में इन सब्सिडियों के बदले किसी भी प्रकार की देयता (बांड जारी करने के माध्यम से) का निर्माण नहीं होगा। हालांकि, इन दो सब्सिडियों की मात्रा इन दोनों वस्तुओं की अंतरराष्ट्रीय कीमतों में उतार-चढ़ाव पर निर्भर करेगी। 'पेट्रोलियम उत्पादों के मूल्य निर्धारण के लिए अर्थक्षम और धारणीय प्रणाली पर विशेषज्ञ दल' (अध्यक्ष:प्रो. किरीट पारिख) की संस्तुतियों को मिली आंशिक स्वीकृति को दर्शाते हुए जून 2010 में पेट्रोल की कीमतों को विनियंत्रित किया गया और अन्य उत्पादों के मूल्यों में बढ़ोतरी की गई, जो सार्वजनिक क्षेत्र की तेल कंपनियों द्वारा हुई न्यून वसूली (अंडर रिकवरी) के कारण पड़ रहे राजकोषीय दबाव को नियंत्रित करेगा। यद्यपि निकट भविष्य में, मुद्रास्फीतिकारक दबाव में बढ़ोतरी हो सकती है, पर बेहतर राजकोषीय स्थिति मुद्रास्फीति के प्रबंधन में सामान्यत: सहायक होगी। हालांकि, जून 2010 से प्रभावी संशोधनों से वर्ष 2010-11 के दौरान न्यून वसूली के प्रत्याशित आकार में एक तिहाई की कमी होगी।

II.5.11 राजस्व पक्ष में, वर्ष 2010-11 के दौरान बजट में अनुमानित सकल कर राजस्व में 17.9 प्रतिशत और सांकेतिक जीडीपी में 12.5 प्रतिशत की वृद्धि होने से अंतर्निहित कर में 1.43 प्रतिशत का उछाल आने की संभावना है। यह 2003-08 की उच्च वृद्धि अवधि के दौरान हुए 1.60 प्रतिशत के औसत उछाल से कम है। सामान्यत: वृद्धि की गति में तेजी आने से प्रचक्रीय पैटर्न को दर्शाने वाले प्रत्यक्ष कर के संग्रहण में सुधार आएगा। इसके अलावा, नए प्रत्यक्ष कर कोड के कार्यान्वयन से प्रत्यक्ष कर संग्रहण में उछाल आने की आशा है। जहां तक अप्रत्यक्ष कर का सवाल है, यह अनुमान है कि माल और सेवा करों को लागू किए जाने से कर की दरों में कटौती का प्रभाव कम हो जाएगा। यह तेजी से विकसित हो रहे सेवा क्षेत्र के उस हिस्से को भी कर के दायरे में लाएगा जो अभी तक कर के दायरे में नहीं आए हैं। परिणामस्वरूप, एमटीएफपीएस 2010-11 में यह अनुमान लगाया गया है कि कर-जीडीपी अनुपात में वर्ष 2011-12 और वर्ष 2012-13 में क्रमश: 11.5 प्रतिशत और 11.8 प्रतिशत की वृद्धि होगी।

राज्य वित्त

II.5.12 वित्तीय संकट से पहले राज्य सरकारों की समेकित राजकोषीय स्थिति में काफी सुधार आया था जो प्रमुख घाटा संकेतकों अर्थात जीडीपी के प्रतिशत के तौर पर राजस्व घाटा (आरडी), सकल राजकोषीय घाटा (जीएफडी) और प्राथमिक घाटा (पीडी) में दिखाई दे रहा था (चार्ट II.50)। उच्च वृद्धि के दौरान बेहतर राजस्व प्राप्तियों और सशर्त ऋण पुनर्संरचना के रूप में राज्यों के अपने राजकोषीय उत्तरदायित्व कानूनों (एफआरएल) के कार्यान्वयन में बारहवें वित्त आयोग द्वारा दिए जा रहे प्रोत्साहनों के प्रति राज्यों की अनुक्रिया और ब्याज दर राहत ने इस प्रगति में बड़ी मात्रा में योगदान दिया था। वर्ष 2008-09 से, वृद्धि में समग्र समष्टि-आर्थिक मंदी का प्रभाव पड़ने से राजकोषीय समेकन की प्रगति में बाधा आई है एवं छठे केंद्र/राज्य वेतन आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन का असर राज्य वित्त पर पड़ना शुरू हुआ। सभी प्रमुख घाटा संकेतकों ने 2008-09 और 2009-10 के दौरान कुछ वृद्धि दर्शाई है जो राजस्व की कम उगाही और व्यय की उच्च प्रतिबद्धता के मिले-जुले प्रभाव को दर्शाता है।

चार्ट II.50: राज्य सरकारों के प्रमुख घाटा संकेतक

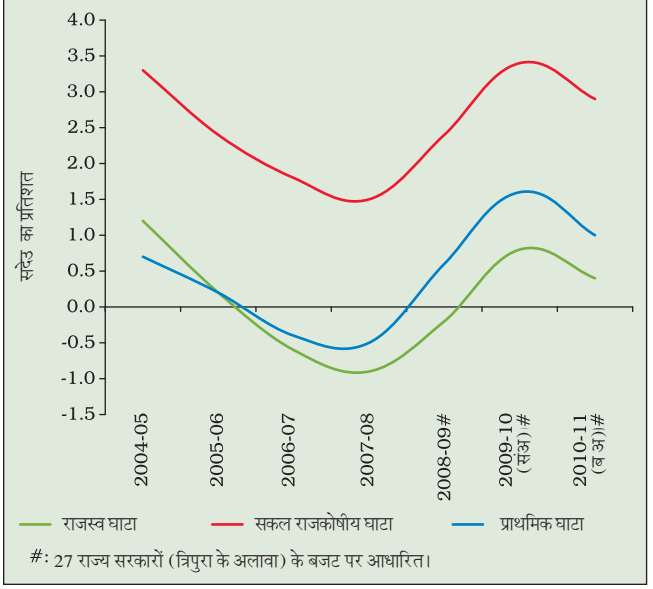

#: 27 राज्य सरकारों (त्रिपुरा के अलावा) के बजट पर आधारित।

II.5.13 राजस्व की प्राप्ति में कम वृद्धि के कारण राज्य वित्त की वृद्धि पर मंदी का असर 2009-10 (बअ) की तुलना में 2009-10 (संअ) में ज्यादा दिखा। अपनी कर प्राप्ति के साथ-साथ केंद्रीय करों में राज्यों का हिस्सा दोनों 2009-10 के बजट अनुमानों से कम था। तथापि, राजस्व व्यय में 2009-10 के बजट अनुमानों की तुलना में थोड़ी वृद्धि दर्ज की गई। राजस्व खाते में कमी के अतिरिक्त, राज्य सरकारों द्वारा पूंजीगत परिव्यय में कमी के बावजूद ऋणेतर पूंजी प्राप्ति में कमी ने भी 2009-10 (बअ) की तुलना में 2009-10 (संअ) में जीएफडी-जीडीपी अनुपात को बढ़ाने में अपना योगदान दिया।

II.5.14 राज्यों की समग्र राजकोषीय स्थितियों को इस प्रकार बजटीकृत किया गया है कि उनमें वर्ष 2010-11 के दौरान सुधार हो सके। 27 राज्यों के लिए जीडीपी के प्रति समेकित राजस्व घाटे के अनुपात के संबंध में यह बजट अनुमान लगाया गया है कि वह वर्ष 2009-10 (संअ) के 0.8 प्रतिशत से कम होकर वर्ष 2010-11 में 0.4 प्रतिशत रह जाएगा, जबकि जीएफडी-जीडीपी अनुपात वर्ष 2009-10 (संअ) के 3.4 प्रतिशत की तुलना में वर्ष 2010-11 में 2.9 प्रतिशत पर न्यूनतर रहने का बजट-अनुमान लगाया गया है। राजस्व खाते में सुधार के अलावा, 2010-11 (बअ) में मुख्यतः पूंजीगत परिव्यय में न्यूनतर वृद्धि के कारण जीएफडी-जीडीपी अनुपात न्यूनतर रहने की आशा है। यह भी प्रत्याशा की जा रही है कि तेरहवें वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुसार राज्यों को बड़ा हिस्सा अंतरित करने की वजह से राज्यों को अपनी वित्तीय स्थिति को अपेक्षाकृत और समेकित करने तथा आयोग द्वारा परिकल्पित राजकोषीय सुधार के पथ पर आगे बढ़ने में सहायता मिलेगी (बाक्स II-9)।

बाक्स II -9
तेरहवें वित्त आयोग की सिफारिशें

तेरहवें वित्त आयोग की सिफारिशों का कार्यान्वयन मध्यावधि में राज्यों की वित्तीय स्थिति को सुव्यवस्थित बनाने का प्रमुख कारक बनेगा। उक्त आयोग की प्रमुख सिफारिशें निम्नानुसार हैं :

अंतरण

- यह सिफारिश की गई है कि बांटे जाने वाले केंद्रीय करों में निवल प्राप्य-राशियों में राज्यों के हिस्से को 30.5 प्रतिशत के मौजूदा स्तर की तुलना में 2010-11 से 2014-15 तक की अवधि के लिए 32.0 प्रतिशत रखा जाए।
- कुल अंतरण में अनुदानों का अंश, जो बारहवें वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुसार 18.9 प्रतिशत था, कम करके तेरहवें वित्त आयोग ने 15.1 प्रतिशत (राज्य-विशेष अनुदानों को छोड़कर) पर लाने की सिफारिश की है।
- बारहवें वित्त आयोग ने केंद्र की सकल राजस्व प्राप्तियों में से राज्यों के राजस्व खातों में समग्र अंतरणों पर 38 प्रतिशत की सांकेतिक उच्चतम सीमा निर्धारित की थी, जिसे अब 39.5 प्रतिशत किया गया है।
- माल और सेवा-कर के कार्यान्वयन के संबंध में तेरहवें वित्त आयोग ने यह सिफारिश की है कि केंद्र और राज्य सरकारों को आदर्श माल और सेवा कर को लागू करने के लिए 50,000 करोड़ रुपये के 'बृहत् सौदे' को अंतिम रूप दे देना चाहिए।
- आयोग ने यह सिफारिश की है कि विचाराधीन अवधि में स्थानीय निकायों को कुल 87,519 करोड़ रुपये की अनुदान-राशि प्रदान की जाए। आयोग ने शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में अनुदान राशि के वितरण तथा राज्यों के बीच परस्पर वितरण की भी सिफारिश की है।

राजकोषीय रूपरेखा

- वर्ष 2007-08 में राजस्व अधिशेष हासिल करने वाले राज्यों के लिए वर्ष 2011-12 तक राजस्व घाटे को समाप्त कर दिया जाए। अन्य राज्यों को 2014-15 तक राजस्व घाटा समाप्त करना चाहिए। अन्य राज्यों को तदनुसार अपने-अपने राजकोषीय दायित्व संबंधी कानूनों को आशोधित/अधिनियमित करना चाहिए।
- 2007-08 में शून्य राजस्व घाटा अथवा राजस्व अधिशेष प्राप्त करने वाले सामान्य श्रेणी के राज्यों को 2011-12 तक जीएसडीपी के 3 प्रतिशत राजकोषीय घाटे का लक्ष्य प्राप्त करना चाहिए तथा उसके बाद उसे बनाए रखना चाहिए। सामान्य श्रेणी के अन्य राज्यों को 2013-14 तक 3 प्रतिशत सकल राजकोषीय घाटे का लक्ष्य प्राप्त करना चाहिए।
- 2007-08 में जीएसडीपी के 3 प्रतिशत से कम आधारभूत राजकोषीय घाटा वाले विशेष श्रेणी के सभी राज्य 2011-12 में 3 प्रतिशत राजकोषीय घाटा उठा सकते हैं तथा उसके बाद इसे बनाए रख सकते हैं। किंतु जम्मू और कश्मीर एवं मिज़ोरम के लिए अंतिम वर्ष 2014-15 होगा तथा विशेष श्रेणी के अन्य राज्यों के लिए अंतिम वर्ष 2013-14 होगा।
- वर्ष 2009-10 में केंद्र और राज्य सरकारों के संयुक्त ऋण 82 प्रतिशत थे, जो वर्ष 2014-15 तक कम होंगे और ये जीडीपी के 68 प्रतिशत तक आ जाएंगे, (जिसमें केंद्र का 45 प्रतिशत और राज्य सरकारों का 25 प्रतिशत से कम अंश रहेगा)।
- वित्त मंत्रालय, भारत सरकार को निर्धारित राजकोषीय सुधार पथ के लिए उधार सीमाएं तय करनी चाहिए।
- राजकोषीय जवाबदेही तथा बजट प्रबंध अधिनियम (एफआरबीएम अधिनियम) में ऐसे झटकों का स्वरूप विनिर्दिष्ट किया जाए जिनके लिए एफआरबीएम लक्ष्यों में छूट ज़रूरी हो।
- केंद्र सरकार अपनी राजकोषीय सुधार संबंधी रूपरेखा का मूल्यांकन करने हेतु एक ऐसे स्वतंत्र समीक्षा तंत्र का गठन करे जो कि समय के साथ कानूनी समर्थन के द्वारा एक राजकोषीय परिषद् का रूप धारण कर ले।
- उपर्युक्त के अलावा, तेरहवें वित्त आयोग ने अपनी परिधि के अंतर्गत एनएसएसएफ के साथ-साथ राज्यों के लिए एक ऋण राहत योजना की भी सिफारिश की है।

संयुक्त वित्त

II.5.15 केंद्र व राज्य सरकारों के विस्तारशील राजकोषीय रुख के कारण 2009-10 के दौरान जीडीपी के प्रतिशत के रूप में संयुक्त राजस्व घाटे व सकल राजकोषीय घाटे में और बढ़ोतरी हुई (चार्ट II.51)। राजस्व व्यय में संयम बरतने की वजह से कुल व्यय की वृद्धि में तेजी से कमी आई। जीडीपी के प्रति कुल संयुक्त व्यय के अनुपात में पिछले वर्ष की तुलना में बढ़ोतरी हुई, जबकि जीडीपी की तुलना में राजस्व प्राप्तियां कमोबेश अपरिवर्तित बनी रहीं, फलस्वरूप घाटे के सभी प्रमुख संकेतक और बढ़ गए।

II.5.16 वर्ष 2010-11 के दौरान केंद्र व राज्य सरकारों द्वारा परिकल्पित राजकोषीय समेकन के साथ संयुक्त वित्तीय स्थिति में काफी सुधार हो सकेगा। ऐसा बजट अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2010-11 के दौरान सकल देशी उत्पाद के प्रतिशत के रूप में संयुक्त राजस्व घाटे व सकल राजकोषीय घाटे में कमी होगी (चार्ट II.52)। उक्त परिकल्पित राजकोषीय समेकन की योजना राजस्व प्राप्तियों में उल्लेखनीय वृद्धि के साथ-साथ बढ़ते हुए व्यय में कटौती द्वारा चालित है ।

राजकोषीय प्रभुत्व एवं समष्टि-आर्थिक स्थितियां

II.5.17 लगातार बड़े पैमाने पर राजकोषीय घाटा होने की वजह से उच्चतर मुद्रास्फीति से लेकर बचतों में कमी, निजी निवेश पर क्राउडिंग-आउट दबाव, संभाव्य उत्पादन में कमी और बाह्य असंतुलन

चार्ट II.51: सदेउ के अनुपात के रूप में संयुक्त घाटा संकेतक

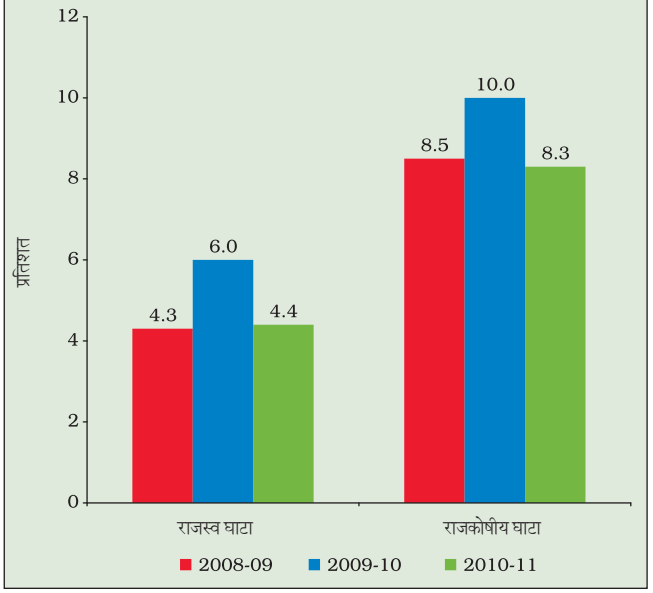

चार्ट II.52: संयुक्त व्यय और राजस्व प्राप्तियों में बढ़ोतरी

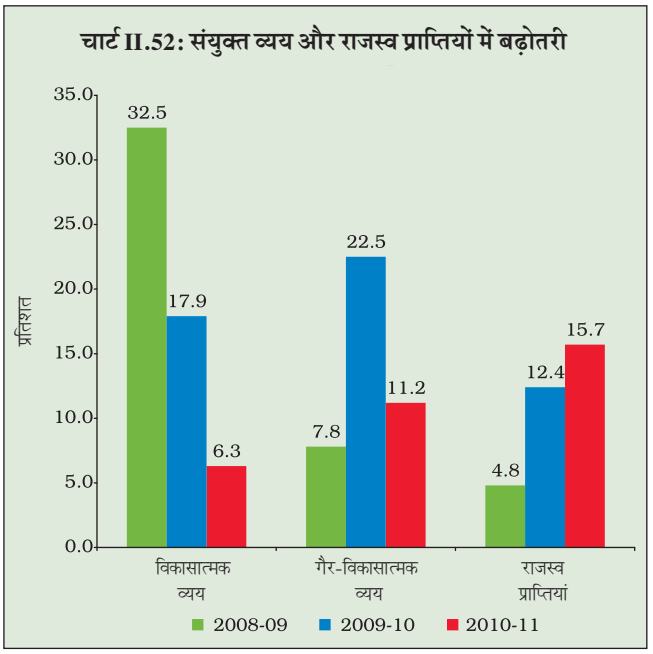

की खराब स्थिति जैसी कई प्रतिकूल समष्टि-आर्थिक जोखिमें पैदा होती हैं। जबकि ऐसे आर्थिक मंदी के दौर, जिसके लिए राजकोषीय उत्प्रेरणा का प्रयोग अपेक्षित हो, में अल्प समय में ये चिंताएं नहीं होतीं, किंतु एक विश्वसनीय राजकोषीय समेकन कार्य-नीति के अंतर्गत राजकोषीय घाटे में उल्लेखनीय रूप से कमी न किए जाने की स्थिति में मध्यावधि में ऐसी जोखिमें पैदा हो सकती हैं।

II.5.18 वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान किए गए राजकोषीय उत्प्रेरणापरक उपायों के परिणामस्वरूप भारत में बड़े पैमाने पर राजकोषीय घाटे की मुद्रास्फीति पर पड़ने वाली जोखिमें 2009-10 की पहली छमाही तक नियंत्रण में बनी रहीं। इसके कारण निम्नानुसार हैं : (i) राजकोषीय उत्प्रेरणा ने अतिरिक्त मांग पैदा करने की बजाय निजी उपभोग और निवेश की मांग में मंदी को आंशिक रूप में प्रतितुलित किया, (ii) राजकोषीय रुख और उसके परिणामस्वरूप बड़े उधार कार्यक्रमों के लिए किए गए वित्तपोषण की वजह से धन वृद्धि की प्रचुरता की स्थिति पैदा नहीं हुई क्योंकि ऋण के लिए निजी क्षेत्र की मांग मंद बनी रही, तथा (iii) परोक्ष कर दर में कटौती से संबंधित कतिपय उपायों के कारण माल और सेवाओं के मूल्यों में कुछ हद तक कमी आई, हालांकि, इन उपायों की वजह से घाटा बढ़ने लगा। 2009-10 की दूसरी छमाही में मांग पक्ष के बढ़ते दबावों के साथ बढ़ती हुई तथा सामान्यीकृत मुद्रास्फीति ने मुद्रास्फीति के प्रति किसी तरह

की राजकोषीय जोखिम पर नियंत्रण के लिए समय पर राजकोषीय निकासी की आवश्यकता सुझायी।

II.5.19 तथापि राजकोषीय परिस्थितियों की वजह से मुद्रास्फीति के प्रति निकट समय में जोखिम पैदा न होने के बावजूद, समयोचितता व गति के रूप में एक सुव्यवस्थित राजकोषीय निकासी के अभाव में मध्यकालिक मुद्रास्फीतिकारी प्रभाव उत्पन्न हो सकता है। आनुभविक प्रमाण से यह पता चलता है कि वर्ष 1997 में सरकारी घाटे के स्वतःमुद्रीकरण को पूरी तरह बंद कर देने के बावजूद, मध्यम से दीर्घ अवधि के लिए भारत में मुद्रास्फीति के पथ पर अब भी राजकोषीय घाटा जोखिम की स्थिति पैदा कर ही रहा है। मुद्रास्फीति के समक्ष बड़े राजकोषीय घाटे से होने वाली जोखिमें या तो कुल मांग पर प्रत्यक्ष प्रभाव के माध्यम से या मौद्रिक विस्तारण या दोनों के संयोग के माध्यम से उत्पन्न होती हैं (बाक्स II.10)।

बाक्स-II.10
भारत में राजकोषीय प्रभुत्व एवं मुद्रास्फीति संबंधी जोखिम

विकासशील देशों के परिप्रेक्ष्य में कभी-कभार मुद्रास्फीति एक प्रभावशाली राजकोषीय घटना बन सकती है, क्योंकि राजकोषीय रुख राजकोषीय प्रभुत्व की वजह से समस्त मौद्रिक परिस्थितियों को काफी प्रभावित कर सकता है। सार्जेंट और वालेस (1981) ने यह पाया कि लगातार घाटा उठाने वाली राजकोष की दृष्टि से प्रबल सरकारें अपने घाटे की भरपाई करने के लिए कभी न कभी मुद्रा का निर्माण करेंगी, जिसके कारण मुद्रास्फीतिकारी प्रभाव उत्पन्न हो जाएंगे। फिश्चर और ईस्टर्ली (1990) ने यह तर्क पेश किया कि तेज गति से मौद्रिक वृद्धि में अक्सर अंतर्निहित राजकोषीय असंतुलनों का योगदान रहता है, इससे स्पष्ट है कि तेज मुद्रास्फीति हमेशा एक राजकोषीय घटना बनी रहती है।

भारत के संदर्भ में भी कई अध्ययनों से यह पता चला है कि राजकोषीय प्रभुत्व की वजह से सरकारी घाटे, मुद्रा आपूर्ति और मुद्रास्फीति, के बीच संबंध स्थापित होता है, जिसके परिणामस्वरूप घाटा-प्रेरित मुद्रास्फीति और मुद्रास्फीति-प्रेरित घाटे की स्वतःजन्य प्रक्रिया शुरू हो जाती है (सर्मा, 1982, जाधव, 1994 एवं रंगराजन और मोहन्ती, 1998)। वर्ष 1997 में घाटे से संबंधित स्वतः मुद्रीकरण को पूरी तरह बंद किए जाने के बावजूद, सरकारी घाटा स्रोत पक्ष में आरक्षित मुद्रा की वृद्धिपरक बढ़ोतरी तथा मुद्रा आपूर्ति व मुद्रास्फीति में समग्र विस्तारण करने वाला एक प्रमुख कारक बना रहा (खुंद्रकपम और गोयल, 2009)।

राजकोषीय घाटे की दीर्घ-कालीन मुद्रास्फीतिकारी संभाव्यता का निम्नलिखित परिकल्पना के माध्यम से विश्लेषण किया जा सकता है : (i) कुल मांग में बढ़ोतरी की वजह से; या (ii) मुद्रा निर्माण या सिक्का ढलाई करके अप्रत्यक्ष रूप से; या (iii) दोनों के सम्मिलन के माध्यम से मुद्रास्फीति पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ सकता है। वर्ष 1952 से 2009 तक की अवधि में एआरडीएल दृष्टिकोण के जरिए अनुमानित सह-समेकनकारी दीर्घावधिक संबंधों के मूल्यांकन से यह पता चला है कि : (i) सरकार दीर्घावधि में अपने घाटे के वित्तपोषण हेतु सिक्का ढलाई का सहारा लेती है; (ii) सरकार द्वारा सिक्का ढलाई किए जाने से मूल्य के स्तर पर प्रभाव पड़ता है; (iii) सरकारी घाटे का मूल्य के स्तर पर प्रत्यक्ष हेतुक प्रभाव भी पड़ता है। दूसरे शब्दों में कहें, तो अन्य स्थितियां यथावत् रहने पर, भारत की अर्थव्यवस्था में दीर्घावधि के लिए मूल्य का स्तर या तो प्रत्यक्ष रूप से घाटे या घाटे के वित्तपोषण हेतु मुद्रा निर्माण से या दोनों के समन्वय की वजह से प्रभावित होता है।

यह अनुमान लगाया जाता है कि राजकोषीय घाटे में एक प्रतिशत का अंतर मुद्रा निर्माण 'S' में आधे प्रतिशत का अंतर उत्पन्न कर देता है जो कि वास्तविक आरक्षित मुद्रा में अंतर कहलाता है :

Log S = -3.19 + 0.51 Log GFD - Dummy1975-76
-(10.7) (16.6) (-2.8)

यह अनुमान लगाया जाता है कि मुद्रा निर्माण में एक प्रतिशत का अंतर मूल्य के स्तर में लगभग एक प्रतिशत के एक-तिहाई का अंतर पैदा कर देता है :

Log WPI = 4.53 + 0.32 Log S + 0.05 Trend
(17.6) (1.7) (4.0)

यह अनुमान लगाया जाता है कि राजकोषीय घाटे में एक प्रतिशत का अंतर मूल्य के स्तर में लगभग एक प्रतिशत के एक चतुर्थांश का अंतर उत्पन्न कर देता है :

Log WPI =3.0 + 0.25 Log GFD + 0.044 Trend + Dummy 1974-75
(5.1) (2.1) (2.9) (2.6)

यह पाया गया है कि अल्पावधि में मुद्रा निर्माण का मुद्रास्फीतिकारी प्रभाव नगण्य है, तथापि, राजकोषीय घाटे में एक प्रतिशत की बढ़ोतरी से अभी भी मूल्य के स्तर पर लगभग 0.04 प्रतिशत अंक का सकारात्मक प्रभाव दिखाई देता है। यथाशीघ्र वित्तीय निकासी के लिए मुद्रास्फीति पथ से संबद्ध जोखिम एक महत्वपूर्ण प्रेरक तत्व बनना चाहिए।

संदर्भ :

1. फिशर, एस. और डब्ल्यू. ईस्टर्ली (1990), ''द इकोनॉमिक्स ऑफ द गवर्नमेंट बजट कान्स्ट्रेंट'', विश्व बैंक रिसर्च आब्ज़र्वर 5, सं. 3, 127-42।
2. जाधव, एन. (1994), मॉनिटरी इकोनॉमिक्स फॉर इंडिया, दिल्ली : मैकमिलन इंडिया लिमिटेड।
3. खुन्द्रकपम जे और आर. गोयल (2009), ''इज गवर्नमेंट डेफिसिट इन इंडिया स्टिल रेलीवेंट फॉर स्टेबिलाइज़ेशन'' भारतीय रिज़र्व बैंक ऑकेजनल पेपर्स खंड-29, सं.3, मुंबई, भारत।
4. रंगराजन, सी., और मोहन्ती एम.एस. (1998), ''फिस्कल डेफिसिट, एक्सटर्नल बैलेंस एंड मॉनिटरी ग्रोथ'', भारतीय रिज़र्व बैंक ऑकेजनल पेपर्स, खंड 18, सं. 3।
5. शर्मा, वाइ.एस.आर. (1982), ''गवर्नमेंट डेफिसिट्स, मनी सप्लाई एंड इन्फ्लेशन इन इंडिया'', भारतीय रिज़र्व बैंक ऑकेजनल पेपर्स, खंड 3, सं. 1।
6. सर्जेंट, थॉमस जे. और नील वालेस (1981), ''सम अनप्लीजैंट मॉनिटरिस्ट अरिथमेटिक'', फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ मिन्नापोलिस क्वार्टर्ली रिव्यू खंड 5, सं. 3।

II.5.20 राजस्व असंतुलनजन्य राजकोषीय घाटे की वजह से अर्थव्यवस्था में प्रत्यक्ष रूप से बचत दर में गिरावट आ जाती है, क्योंकि राजस्व असंतुलन का मतलब है सरकार की ऋणात्मक बचतें। ऐसा कोई स्वचालित तंत्र नहीं है जो कि सरकार की ऋणात्मक बचतें बढ़ने की स्थिति में घरेलू व कारपोरेट बचत में वृद्धि कर सके। फलतः अर्थव्यवस्था की समग्र बचत दर में गिरावट आ सकती है, जो कि 2008-09 के बचत संबंधी आंकड़ों से पता चलता है। वर्ष 2003-04 से 2007-08 तक एफआरबीएम/एफआरएल के अंतर्गत संयुक्त राजस्व और राजकोषीय घाटे में कमी आने की वजह से सार्वजनिक क्षेत्र की बचत की स्थिति में सुधार हुआ, जो कि समग्र बचत व निवेश दर की बढ़ोतरी में महत्वपूर्ण अंशदायी कारक रहा, जिसके कारण उस अवधि में उच्च जीडीपी वृद्धि संभव हो सकी। उच्चतर जीडीपी की वजह से राजस्व में उछाल लाकर सरकार के राजस्व घाटे में कमी हुई, जिससे एक अनुकूल चक्र का निर्माण हुआ। किंतु वर्ष 2008-09 और 2009-10 के दौरान सरकार के राजस्व घाटे में भारी वृद्धि होने से समग्र बचत व परिणामी निवेश दरों में भी तदनुरूप कमी हुई (चार्ट II.53)

चार्ट II.53: संयुक्त राजस्व घाटा, बचत और निवेश दर

II.5.21 निम्नतर बचत दर न केवल निवेश दर पर दबाव डालते हुए, अपितु सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र के बीच संसाधनों को जुटाने की होड़ के कारण वैकल्पिक संसाधन के आबंटन के माध्यम से संभाव्य उत्पादन के पथ में रोड़ा डाल सकती हैं। सरकार द्वारा घाटे के वित्तपोषण के लिए अर्थव्यवस्था में ऋणयोग्य निधियों का प्रत्यक्ष रूप से पूर्वक्रय किए जाने की वजह से या वास्तविक ब्याज दरों में बढ़ोतरी के माध्यम से या दोनों के मेल के कारण क्राउडिंग-आउट की संभावना बढ़ सकती है। तथापि, भारत में क्राउडिंग-आउट संबंधी अनुभवजन्य प्रमाण सुस्पष्ट नहीं हैं (बाक्स II.11)। परस्पर विरोधी प्रमाणों के बावजूद, क्राउडिंग-आउट प्रभाव सामान्यतः उस समय कम रहता है जब राजकोषीय नीति परि-चक्रीयता पर सवार होती हो। वर्ष 1991-2009 के दौरान कुछ ऐसे प्रमाण रहे हैं कि

बाक्स II.11
क्राउडिंग-आउट संबंधी चिंताएं : अनुभवजन्य प्रमाण क्या सुझाते हैं?

इस वर्ष के अंत तक रिकवरी के सुदृढ़ संकेत दिखाई देने और निजी क्षेत्र की ऋण-मांग धीरे-धीरे जोर पकड़ने के साथ मौद्रिक नीति को खोलने के प्रति सुविचारित दृष्टिकोण अपनाते समय सुदृढ़ बड़े राजकोषीय घाटों से संबद्ध सामान्य क्राउडिंग-आउट की चिंताओं की पहचान की जानी थी। एक ओर मुद्रास्फीतिजन्य परिस्थितियों में मौद्रिक सख्ती अवश्यंभावी थी, वहीं दूसरी ओर एक बृहत् उधार कार्यक्रम की मांगों के साथ-साथ निजी क्षेत्र की ऋण संबंधी मांगों की पूर्ति करने हेतु उपयुक्त चलनिधि की स्थिति को सुनिश्चित करना आवश्यक था।

भारत में उपलब्ध कुछ अध्ययन सामग्रियों की समीक्षा करने से यह पता चला है कि सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा निजी क्षेत्र को क्राउडिंग-आउट किए जाने से संबंधित अनुभवजन्य प्रमाण स्पष्ट नहीं है। चक्रवर्ती (2007) को 1971 से 2003 तक की अवधि में भारत में सार्वजनिक निवेश द्वारा निजी पूंजी निर्माण की क्राउडिंग-आउट किए जाने के संबंध में कोई प्रमाण नहीं मिला । वस्तुतः सार्वजनिक बुनियादी ढांचा के निवेश द्वारा निजी कारपोरेट निवेश की अनुपूर्ति की गई है। इसके अलावा, उसी अवधि में वास्तविक ब्याज दर में बढ़ोतरी होने के कारण राजकोषीय घाटे द्वारा निजी पूंजी निर्माण की क्राउडिंग-आउट किए जाने के संबंध में कोई प्रमाण नहीं मिला। क्राउडिंग न होने के पीछे तीन संभावित कारण हैं: (i) घरेलू बचत का पैटर्न वित्तीय आस्तियों का रूप धारण कर रहा है, जिससे अर्थव्यवस्था में उपलब्ध ऋण-योग्य निधियों में बढ़ोतरी हो रही है, (ii) निजी कंपनियां बैंक से ऋण लेने के अलावा पूंजी बाजारों के माध्यम से अधिकाधिक संसाधनों को जुटा रही हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि निजी क्षेत्र को ऋण के क्राउडिंग-आउट के दबदबे में आने से किसी रुकावट का सामना नहीं करना पड़ा, तथा (iii) प्रणाली में समग्र चलनिधि में बढ़ोतरी हो पाई, जिसने बढ़ती ब्याज दरों पर काबू पा लिया है और उसे निवारित किया है।

मित्रा (2006) ने 1969 से 2005 तक की अवधि में सरकारी निवेश, निजी निवेश और सकल देशी उत्पाद के बीच के संबंध का विश्लेषण कर यह पाया है कि सरकारी निवेश निजी निवेश को क्राउड-आउट कर देता है। सरकार द्वारा उपयोग किए गए संसाधन निजी क्षेत्र के हाथों में अपेक्षाकृत अधिक कारगर साबित हो सकते थे। इस प्रकार अत्यधिक सरकारी निवेश ने भारत की आर्थिक वृद्धि के मार्ग को कुंठित कर दिया।

(जारी)

(समाप्त)

क्राउडिंग-आउट प्रभाव सार्वजनिक क्षेत्र के व्यय के स्वरूप पर काफी निर्भर करता है (आरबीआइ, 2002)। अर्थव्यवस्था में सकल मांग को बढ़ावा देने हेतु किया जाने वाला सार्वजनिक क्षेत्र का उपभोग निजी उपभोग को क्राउड-आउट करता है। यहाँ तक कि सार्वजनिक क्षेत्र के निवेश में बुनियादी ढांचे से संबद्ध निवेश ही निजी निवेश को क्राउड-इन करता है। अत्यधिक राजकोषीय घाटा निजी निवेश को क्राउड-आउट करता है, अतः बड़े पैमाने पर राजकोषीय घाटे द्वारा वित्तपोषित किए जाने पर सार्वजनिक बुनियादी ढांचा संबंधी निवेश का क्राउडिंग-इन प्रभाव कम हो जाएगा। अतः सरकार को बुनियादी ढांचे पर किए जाने वाले व्यय की पुनर्संरचना करनी चाहिए, साथ ही, वृद्धि पर सर्वाधिक प्रभाव के लिए राजकोषीय घाटे को नियंत्रित रखना चाहिए।

वर्ष 1990 के दशक और 2000 के दशक के दौरान हॉड्रिक-प्रेसकॉट फिल्टर का प्रयोग करते हुए वास्तविक स्थिति से प्रवृत्तिमूलक वृद्धि को घटाकर अभिकलित उत्पादन के अंतर और राजकोषीय घाटे (सकल देशी उत्पाद के प्रतिशत के रूप में) में निहित प्रवृत्तियों का प्रयोग कर किए गए विश्लेषण से निम्नलिखित बातें सामने आईं। जब 1997-2002 की अवधि में उत्पादन का अंतराल ऋणात्मक था (अर्थात् उस दौरान अतिरिक्त क्षमता थी) तब राजकोषीय घाटा बढ़ने लगा, जबकि 1993-97 और 2004-08 की अवधियों में जब उत्पादन का अंतर धनात्मक था (अर्थात् क्षमता का अत्यधिक दोहन हुआ था) तब उसमें कमी आई। उत्पादन अंतर और राजकोषीय घाटे के बीच पूर्व में देखा गया यह व्युत्क्रमी पैटर्न या तो प्रतिचक्रीय राजकोषीय नीतिगत अनुक्रिया अथवा स्वचालित स्थिरताकारकों के प्रभाव या दोनों के समन्वय की ओर संकेत कर सकते हैं। 1990-91 से 2008-09 के दौरान उत्पाद के अंतराल और राजकोषीय घाटे के बीच की गई वीएआर ग्रैंजर हेतुकता जांच से उन दोनों के बीच द्विदिशामूलक हेतुकता की बात सामने आई है (सारणी-क)।

सारणी-क: क्षमता का उपयोग एवं सकल राजकोषीय घाटा : वीएआर ग्रैन्जर हेतुकता

अमान्य परिकल्पना	सीएचआइ-वर्ग	संभाव्यता
उत्पादन-अंतराल Δ जीएफडी का कोई ग्रैंगेर कारण नहीं होता है	3.43	0.06
Δ जीएफडी उत्पादन-अंतराल का कोई ग्रैंगेर कारण नहीं होता है	5.99	0.01

इस प्रकार, क्राउडिंग-आउट संबंधी चिंताओं को व्यावसायिक चक्रों के विभिन्न चरणों के संबंध में देखा जाना चाहिए। वृद्धि में मंदी अथवा धीमेपन के दौरान प्रतिचक्रीय राजकोषीय नीति और राजकोषीय घाटे में परिणामी वृद्धि रिकवरी में योगदान दे सकती है। बदले में, उच्च वृद्धि के दौरान राजस्व में उछाल के जरिए राजकोषीय घाटे में कमी आ सकती है। तथापि, यदि उच्च वृद्धि के दौर में राजकोषीय घाटे अधिक बना रहा, तो यह क्राउडिंग आउट जोखिमों को उत्पन्न कर सकता है।

संदर्भ :

1. चक्रवर्ती, लेखा एस. (2007), ठफिस्कल डेफिसिट, कैपिटल फार्मेशन, एंड क्रॉउडिंग आउट इन इंडिया : एविडेंस फ्राम ऐन एसिमेट्रिक वीएआर मॉडलड कार्य-पत्रक सं.518, द लेवी इकोनॉमिक्स इंस्टीट्यूट।
2. भारतीय रिज़र्व बैंक (2002), मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट 2000-01.
3. मित्रा, पी. (2006) हैज़ गवर्नमेंट इन्वेस्टमेंट क्रॉउडेड-आउट प्राइवेट इन्वेस्टमेंट इन इंडिया? http://www.aeaweb.org/annual_mtg_papers/2006/0108_1015_0102

राजकोषीय नीति का रुख इस रूप में परिचक्रीय रहा कि इस अवधि के दौरान जीडीपी के अनुपात के रूप में राजकोषीय घाटे में कमी रही, जबकि उत्पाद प्रवृत्ति से अधिक या इसके विलोमतः स्थिति रही। दूसरे शब्दों में कहें तो उत्पाद-अंतराल और राजकोषीय घाटे में नकारात्मक सहसंबंध रहे। तथापि, द्विदिशासूचक हेतुकता के परिणामों से यह पता चलता है कि राजकोषीय नीति न केवल एक प्रति-चक्रीय चाल का अनुसरण करती है, अपितु वह ऐसी कारोबार चक्र पद्धति से भी प्रभावित होती है जिसे उस दृष्टि से देखा जाता हो जैसे कि स्वतः स्थिरताकारकों की क्रियाशीलता को देखा जाता हो।

II.5.22 क्राउडिंग-आउट दबावों और मुद्रास्फीति से संबंधित चिंताओं के अतिरिक्त, राजकोषीय असंतुलनों में चालू खाते संबंधी घाटे को बढ़ाने की जोखिम भी निहित रहती है। चालू खाता संबंधी असंतुलनों की मात्रा को कम करने में विप्रेषण की प्रबल भूमिका की वजह से भारत में राजकोषीय घाटे से संबद्ध युग्म घाटा चिंताएं नहीं पैदा हुईं। तथापि, सकल देशी उत्पाद के प्रतिशत के रूप में (माल व सेवाओं के) निर्यातों व आयातों के बीच के असंतुलन से राजकोषीय स्थिति द्वारा देश की बाह्य संतुलन स्थिति पर डाला जाने वाला दबाव ठीक प्रतीत होता है (चार्ट-II.54)।

चार्ट II.54: व्यापार घाटा और संयुक्त राजकोषीय घाटा

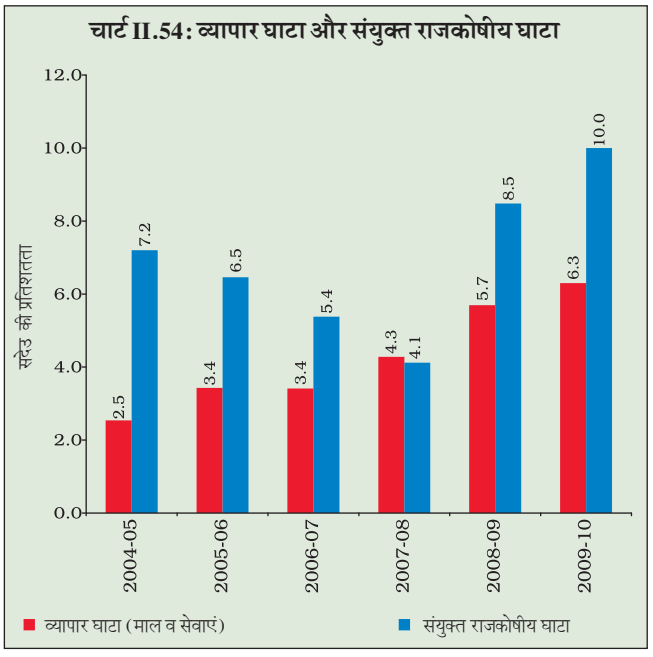

VI. बाह्य क्षेत्र

II.6.1 एक वैश्वीकृत संसार में स्थिर वृद्धि के नीतिगत ध्येय को हासिल करने की दृष्टि से अनुकूल वैश्विक आर्थिक परिवेश और धारणीय भुगतान संतुलन महत्वपूर्ण होते हैं। वर्ष 2009 में वैश्विक मंदी ने तीव्र रिकवरी की संभावनाओं पर कुठाराघात कर दिया। देशी वास्तविक अर्थव्यवस्था पर बाहरी झटकों का संचारण करने वाले व्यापार व पूंजी प्रवाहों के परंपरागत चैनलों के अलावा, वैश्विक रिकवरी के संबंध में व्याप्त अनिश्चितता ने कारोबारी विश्वास और बाज़ार की संवेदनशीलता को प्रभावित करना जारी रखा, जिसके फलस्वरूप देशी निजी उपभोग और निवेश की मांग अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हुई। तीव्र बाहरी झटके के प्रति आघात-सहनीयता और उसका प्रबंध करने की भारत की उच्चकोटि की क्षमता, 2009-10 के दौरान सकल देशी उत्पाद की वद्धि में सुदृढ रूप से और तेज गति से हुई रिकवरी से जाहिर होती है।

II.6.2 वर्ष 2009 में वैश्विक अर्थव्यवस्था ने न केवल 'विराट संकुचन' का अनुभव किया, बल्कि वास्तविक अर्थव्यवस्था पर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में व्याप्त वित्तीय संकट के प्रभावों की काफी अनिश्चितता भी मंडराती रही। वर्ष 2009 के संबंध में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की वृद्धि की संभावना में उत्तरोत्तर और व्यापक संशोधनों से सब-प्राइम वित्तीय संकटजन्य अनिश्चितता की व्यापकता स्पष्ट दिखाई पड़ती है (चार्ट II.55 क)। वर्ष 2010 की पहली तिमाही में वैश्विक अर्थव्यवस्था में रिकवरी के सुदृढ़ प्रमाण दिखाई देने लगे, हालांकि रिकवरी की गति में अधिकाधिक भिन्नता थी, क्योंकि रिकवरी की गति और सुदृढ़ता दोनों ही की दृष्टि से देखें तो विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं काफी आगे रहीं (चार्ट II.55ख)।

II.6.3 वर्ष 2009 में भारत और चीन में उच्च वृद्धि बने रहने की स्थिति ने वैश्विक मंदी की गहराई को काफी हद तक कम कर दिया, हालांकि, इन देशों ने भी वैश्विक संकट की शुरुआत से पहले वाली स्थिति में हासिल उच्च वृद्धि के परिप्रेक्ष्य में मंदी को महसूस किया (चार्ट II.55 ग)। वर्ष 2009 में विश्व व्यापार का संकुचन जीडीपी संकुचन से काफी अधिक था और यह अनुमान लगाया जा रहा है कि 2010 में स्थिति में काफी अधिक सुधार होगा (चार्ट II.55 घ)। कमज़ोर वैश्विक मांग की परिस्थितियों के प्रभावों को परिलक्षित करते हुए और साथ ही कई देशों द्वारा किए गए संरक्षणात्मक उपायों के परिणामस्वरूप, वर्ष 2009 में विश्व वाणिज्य-वस्तु व्यापार की मात्रा में 11.8 प्रतिशत जितनी अधिक गिरावट दर्ज हुई, जो कि दूसरे विश्व युद्ध के बाद की सर्वाधिक गिरावट है। वाणिज्य-वस्तुओं के निर्यातों की तरह, 2009 में 1983 के बाद पहली बार वाणिज्य सेवाओं के वैश्विक निर्यातों में भी 13.0 प्रतिशत की गिरावट आई। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी का असर खास तौर पर रोज़गार की स्थिति पर अधिक पड़ा (चार्ट II.55 ङ)।

II.6.4 इस संकट के प्रति वैश्विक निदेशकों की अनुक्रिया सुरक्षा की ओर पलायन करने वाली रही, परिणाम यह रहा कि ईएमई की तरफ निवल पूंजी प्रवाह में कमी आई, और फिर से उछाल आने से पहले इसमें अचानक रुकावटों और पुनरुत्थान के कई दौर भी रहे (चार्ट II.55च)। विश्व भर के देशों द्वारा नीतिगत उत्प्रेरकों का अभूतपूर्व प्रयोग एक और 'बड़ी मंदी' को टालने में मददगार साबित हुआ, लेकिन उस प्रक्रिया में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की राजकोषीय स्थिति काफी कमज़ोर हो गई (चार्ट II.55 छ और ज)। वित्तीय संकट को संभालने में निजी क्षेत्र में वित्तीय असंयम की कीमत सरकारी क्षेत्र को उठानी पड़ी और बदले में सरकारी ऋण का संभावित खतरा उत्पन्न होने लगा।

II.6.5 2009 में वैश्विक मंदी और विश्व व्यापार में संकुचन के कारण भारत के माल व सेवाओं दोनों के निर्यात पर असर पड़ा जो बढ़ते हुए खुलेपन को प्रकट करता है। तथापि, वैश्विक रिकवरी के साथ-साथ अक्तूबर 2009 से भारत के निर्यात की स्थिति में सुधार होने लगा। उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के प्रति पूंजी अंतर्वाह के पुनः शुरू होने और वैश्विक अर्थव्यवस्था से पहले भारत की आर्थिक स्थिति में सुधार की वजह से भारत में भी 2009-10 में पूंजी प्रवाह शुरू हुआ। समग्र कारोबारी विश्वास के साथ-साथ निर्यात की संभावनाओं में सुधार करने के लिए वैश्विक अर्थव्यवस्था में सुदृढ़ और सतत उन्नति ज़रूरी है।

भुगतान संतुलन

II.6.6 वर्ष की दूसरी छमाही में निर्यातों में टर्न-अराउंड और पूंजी प्रवाह फिर से शुरू होने के साथ 2009-10 के दौरान भारत के भुगतान संतुलन की स्थिति में सुधार हुआ, बावजूद इसके कि चालू खाते में उच्चतर घाटा था जो कि विदेशी पूंजी के सुदृढ़ अवशोषण को प्रकट करता है। चालू खाता घाटे, बाह्य देनदारी और विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों के रूप में बाह्य क्षेत्र की सुदृढ़ता के प्रमुख मापदंड सुखद बने रहे और इन्होंने वृद्धि में तीवतर रिकवरी को बल प्रदान करने के लिए समग्र नीतिगत परिवेश को समर्थन दिया। आर्थिक वृद्धि में सुधार के प्रयोजन से वर्ष 2009-10 की भुगतान संतुलन

चार्ट II.55 : प्रमुख वैश्विक संकेतक

क: अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा 2009 के लिए विश्व जीडीपी अनुमान में क्रमिक संशोधन

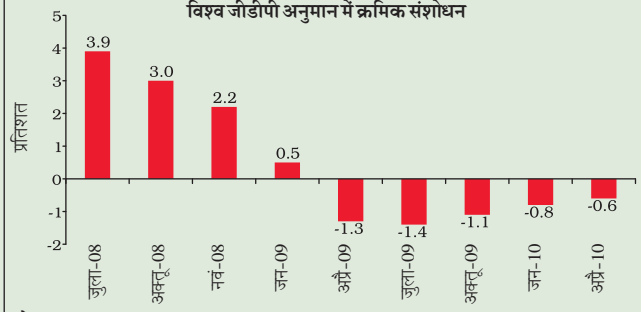

स्रोत: अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

ख :वास्तविक सदेउ संवृद्धि

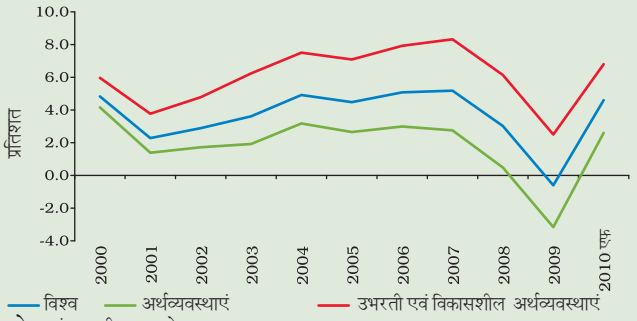

स्रोत: अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

ग: वर्ष 2009 के दौरान वास्तविक जीडीपी वृद्धि

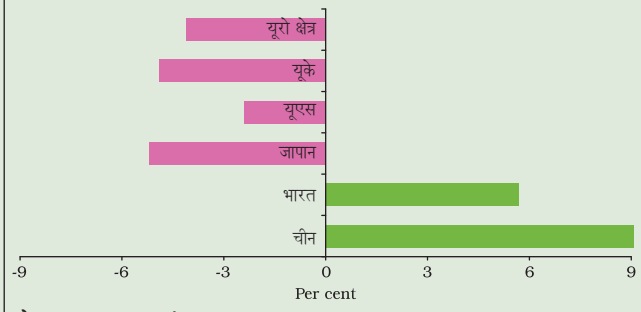

स्रोत: अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

घ: विश्व वाणिज्य व्यापार वृद्धि (मात्रा)

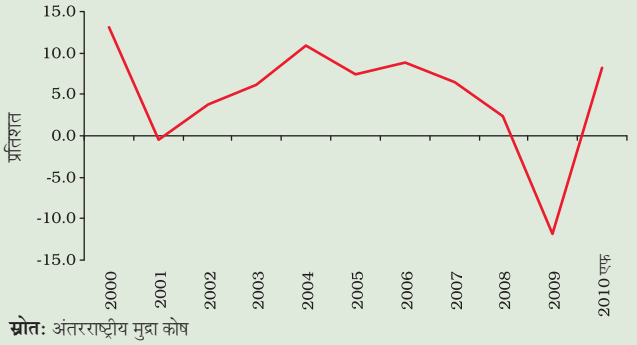

स्रोत: अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

ङ : बेरोज़गारी दर

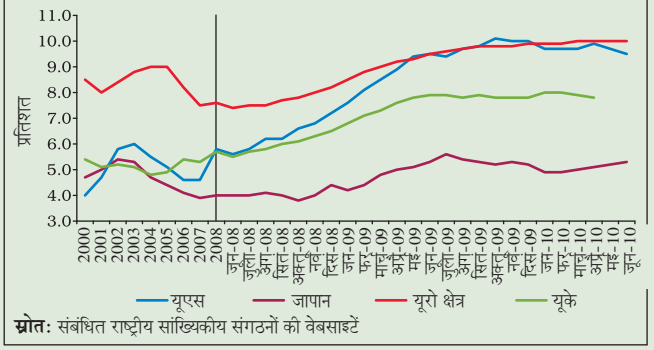

स्रोत: संबंधित राष्ट्रीय सांख्यिकीय संगठनों की वेबसाइटें

च: उभरती एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में निवल निजी पूंजीगत प्रवाह

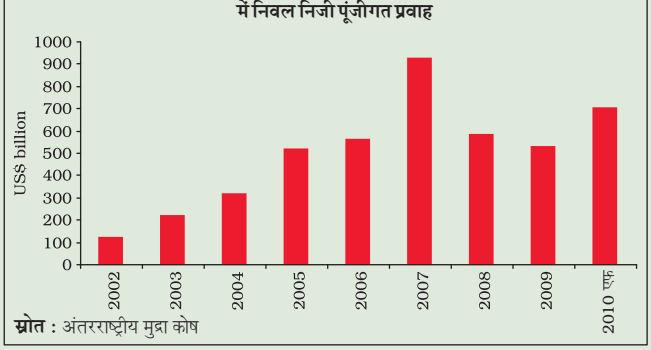

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

छ: लोक ऋण

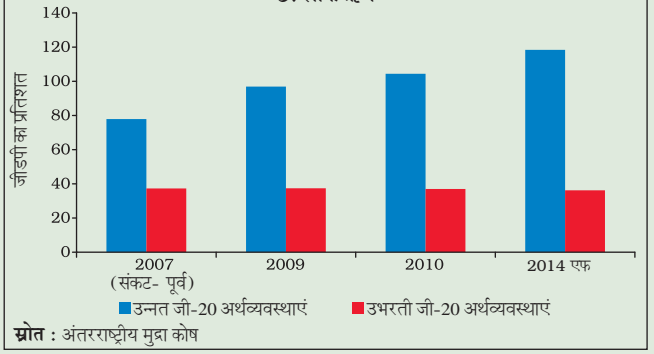

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

ज: राजकोषीय संतुलन

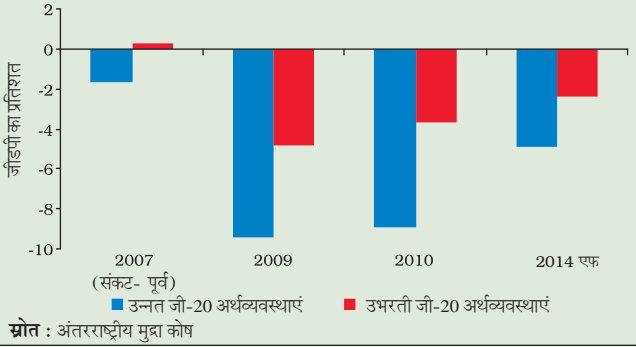

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

चार्ट II.56: भारत का वाणिज्य-वस्तु व्यापार

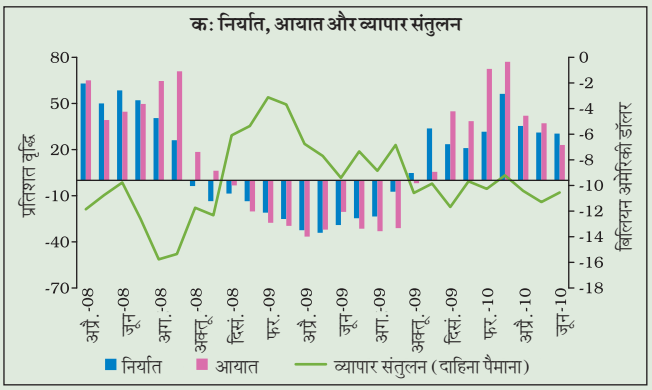

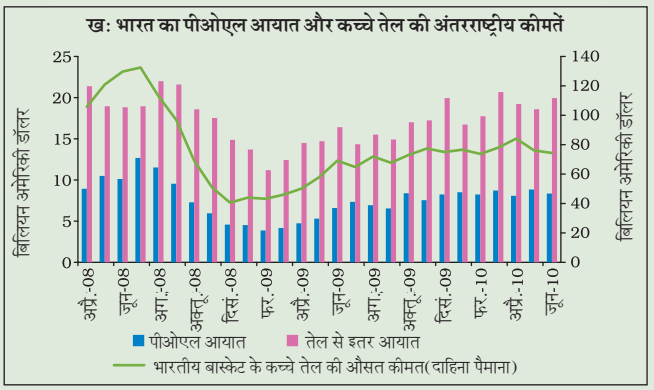

संबंधी गतिविधियों के परस्पर विरोधी प्रभाव पड़े। कमजोर वैश्विक मांग की अनुक्रियास्वरूप माल और सेवाओं के निर्यात में गिरावट का समग्र सकल देशी उत्पाद पर निरुत्साहक प्रभाव पड़ा। हालांकि, उच्चतर चालू खाता घाटे के कारण विदेशी पूंजी अधिक मज़बूती के साथ अवशोषित हुई। परिणामस्वरूप इसमें उच्चतर निवेश क्रियाकलाप निहित थे जिनका वित्तपोषण विदेशी पूंजी से हुआ, जिसने वृद्धि में सुदृढ़तर रिकवरी में आंशिक योगदान किया। इस वर्ष के दौरान भुगतान संतुलन लेन-देन के प्रमुख निर्धारक जैसे बाह्य मांग,तेल और पण्यों की अंतरराष्ट्रीय कीमतें, पूंजीगत प्रवाह के पैटर्न और विनिमय दर में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। निर्यात में सकारात्मक सुधार और पूंजीगत प्रवाह फिर शुरू होने के साथ ही, बाह्य क्षेत्र की चिंताएं धीरे-धीरे कम हुईं।

वाणिज्य-वस्तु व्यापार

II.6.7 वैश्विक व्यापार की मात्रा में कमी 2009 में सकल देशी उत्पाद में हुई कमी से कहीं अधिक तीव्र थी और अक्तूबर 2008 से सितंबर 2009 के दौरान 12 क्रमिक महीनों तक ऋणात्मक वृद्धि के रूप में भारत के वाणिज्य-वस्तु निर्यात पर इसका प्रभाव दिखा। भारत के वाणिज्य-वस्तु निर्यात में अक्तूबर 2009 में टर्न-अराउंड देखा गया। नवंबर 2009 से जून 2010, जब औसत मासिक वृद्धि 32.9 प्रतिशत थी, के दौरान निर्यात में हुई मजबूत धनात्मक वृद्धि को बनाए रखने के लिए वैश्विक मांग में सुधार महत्वपूर्ण रहेगा। ग्यारह क्रमिक महीनों तक वाणिज्य-वस्तु आयात में भी कमी रही; देशी आर्थिक प्रत्युत्थान और तेल कीमतों में बढ़ोतरी से नवंबर 2009 से भारत के आयात में फिर तेजी आई। परिणामस्वरूप, दिसंबर 2009 से जून 2010 के दौरान आयात में मासिक आधार पर औसतन 47.9 प्रतिशत की दर से मजबूत वृद्धि हुई (चार्ट II.56 क एवं ख)। वर्ष 2009 में विभिन्न देशों के निर्यात प्रदर्शन पर वैश्विक संकट का प्रभाव अलग-अलग था। इंडोनेशिया, भारत, चीन, स्विटजरलैंड, कोरिया और अमरीका जैसे देशों में निर्यात में विश्व औसत के मुकाबले अपेक्षाकृत कम गिरावट हुई (चार्ट II.57)।

II.6.8 प्रतिकूल वैश्विक गतिविधियों की वजह से निर्यात के प्रदर्शन पर दबाव को समझते हुए भारत सरकार ने निर्यात में तेजी को बढ़ाने के प्रयोजन से केंद्रीय बजट 2009-10 और विदेश व्यापार नीति (2009-14) में बड़ी संख्या में प्रोत्साहन उपायों की घोषणा की। केंद्रीय बजट 2009-10 में बुरी तरह प्रभावित निर्यात क्षेत्रों के लिए ठसमायोजन सहायता योजनाड की अवधि बढ़ाने, पोत लदान-

चार्ट II.57: वर्ष 2009 में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में भारत के वाणिज्य-वस्तु निर्यात में वृद्धि

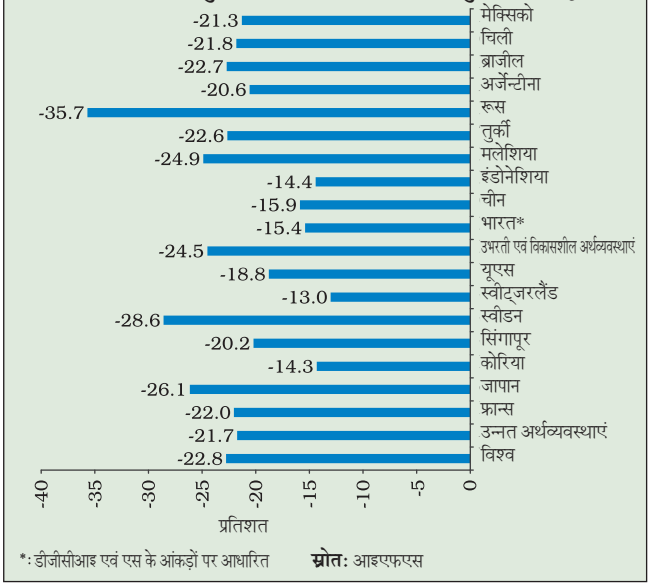

पूर्व निर्यात ऋण पर 2 प्रतिशत सरकारी ब्याज सहायता की अवधि बढ़ाने और निर्यात क्षेत्र में आयकर लाभ की अवधि बढ़ाने, आदि जैसे उपायों की घोषणा हुई। विदेश व्यापार नीति (2009-14) में फोकस बाजार योजना (एफएमएस) और फोकस उत्पाद योजना (एफपीएस) में नए उत्पाद और नए बाजार शामिल किए गए। बाजार संबद्ध फोकस उत्पाद योजना (एमएलएफपीएस) में कई उत्पादों को शामिल करते हुए इसमें विस्तार किया गया। निर्यात क्षेत्र को प्रौद्योगिकीय दृष्टि से उन्नत बनाने और इसके द्वारा निर्यात की प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाने के प्रयोजन से विभिन्न निर्यात क्षेत्रों के लिए शून्य शुल्क पर निर्यात संवर्धन पूंजीगत माल (ईपीसीजी) योजना शुरू की गई। वैश्विक संकट के मद्देनजर निर्यात की विशेष मदों में भारत का तुलनात्मक लाभ प्रभावित हुआ (बॉक्स II.12)।

बॉक्स II.12
भारत का निर्यात बास्केट: तुलनात्मक लाभ का मूल्यांकन

भारत के वाणिज्य निर्यात में, वैश्विक संकट के पहले, और उत्पाद एवं बाजार की विविधता दोनों में संरचनात्मक बदलाव सहित निरंतर वृद्धि देखी गई। निर्यात में वृद्धि 2002-03 से 2007-08 की अवधि के दौरान लगभग 25 प्रतिशत के औसत से गिरकर 2009-10 में (-)3.6 प्रतिशत रह गई। निर्यात क्षेत्र में वैसा ही प्रदर्शन फिर से बहाल करने के लिए जैसा वैश्विक संकट के पहले था, प्रतिकूल बाह्य वातावरण के बीच आर्थिक सुधार के दौर में यह आवश्यक है कि बाजार भर के विभिन्न पण्यों में भारत के तुलनात्मक लाभ की जांच की जाए।

उपलब्ध आनुभविक साक्ष्य यह सुझाते हैं कि किसी देश के विकास के स्तर और इसके निर्यात बास्केट की विविधता में सहसंबंध हो सकता है। कैडोट और अन्य (2007) ने निर्यात विविधता में कूबड़ आकार का पैटर्न पाया, अर्थात् कम और मध्यम आय वाले देश अधिकांशतः व्यापक मार्जिन (नई उत्पाद लाइने-जोड़ना) के साथ विशाखीकरण करते है जबकि उच्च आमदनी वाले देश सघन मार्जिन (सक्रिय उत्पाद लाइनों के बीच निर्यात कीमतों में विशाखीकरण) के साथ विशाखीकरण करते हैं और अंततः वे कुछ उत्पादों में अपना निर्यात पुनः केंद्रित करते हैं।

घोषित तुलनात्मक लाभ (आरसीए) के संदर्भ में भारत के निर्यात बास्केट के विश्लेषण से भारत के निर्यात की प्रतिस्पर्धात्मकता को समझने में कुछ मदद मिलती है। आरसीए की अवधारणा (बलासा 1965 और 1977) किसी एक देश की विशेष वस्तुओं में सापेक्षिक व्यापार प्रदर्शन से संबंधित है। किसी अर्थव्यवस्था का तुलनात्मक लाभ कई कारणों से प्रभावित होता है जैसे विश्व के साथ अर्थव्यवस्था का जुड़ना, देश द्वारा अपने बाह्य क्षेत्र के लिए उदारीकरण की नीति अपनाना, फैक्टर संचयन में परिवर्तन दर, अर्थव्यवस्था की वृद्धि तथा विकास के स्तर और उत्पादकता। बलासा ने निम्नलिखित तरीके से आरसीए इंडेक्स को मापा:

$$RCA_{ij} = (X_{ij}/X_{wj})/(X_i/X_w)$$

जहां X_{ij} = i देश के निर्यात का पण्य j, X_{wj} = j वस्तु का विश्व निर्यात, X_i = i देश का कुल निर्यात और X_w = कुल विश्व निर्यात है। यदि इस सूचकांक में कोई मूल्य यूनिटी से अधिक लिया जाता है, तो उस पण्य विशेष के लिए संबंधित देश के लिए तुलनात्मक लाभ की स्थित रहेगी।

भारत के निर्यात बास्केट के पण्यों की संरचना के विश्लेषण से मालूम होता है कि भारत को रसायन, विनिर्माण, कृषि उत्पाद, ईंधन एवं खनन उत्पाद, लोहा एवं इस्पात, वस्त्र और कपड़े में घोषित तुलनात्मक लाभ हैं (चार्ट क)। भारत के अधिकांश प्रमुख निर्यात में इसके आरसीए को इस तथ्य से भी समर्थन मिलता है कि इनमें से अधिकांश उत्पाद समूह के विश्व निर्यात में 2000 के दशक के दौरान भारत की औसत भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई। इसके अलावा, आयात कीमतों की तुलना में निर्यात की अपेक्षाकृत ऊँची वसूली गई कीमतों से हुए कारोबार शर्त के प्रभाव ने भी मूल्य के रूप में हाल में निर्यात में ऊंची वृद्धि हासिल करने में मदद पहुंचाई। कुछ वर्षों में, भारत के निर्यात में भौगोलिक आधार पर भी विविधता देखी गई। उच्चतर मूल्यवर्द्धित उत्पादों और प्रौद्योगिकी रूप से अधिक गहन उत्पादों के पक्ष में भारत के व्यापार बास्केट में विविधता लाने की जरूरत है ताकि अर्थव्यवस्था को व्यापार से अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके और और उन्नत प्रतिस्पर्धा के लाभ से निर्यात चलित वृद्धि जारी रह सके।

चार्ट क: भारत का तुलनात्मक लाभ सूचकांक

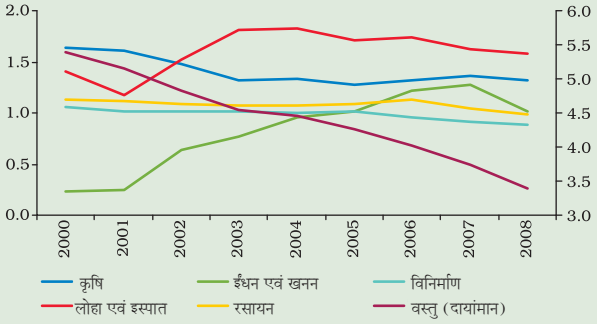

संदर्भ:

1. बलासा, बी. (1965),ट्रेड लिबरलाइजेशन एंड "रिवील्डट कंपरेटिव एडवांटेज", दि *मैनचेस्टर स्कूल*, 33, पृ. 99-123.
2. बलासा, बी. (1977), "रीवील्ड कम्परेटिव एडवांटेज रीविजिटेड", दि *मैनचेस्टर स्कूल*, 45, पृ.327-44.
3. कैडोट, ओ.,कैरीर, सी. एंड स्ट्रॉस-कन, वी. (2007), "एक्सपोर्ट डाइवर्सिफिकेशन: व्हाट्ज बिहाइंड दि हंप?", सेंटर फॉर इकॉनॉमिक पॉलिसी रिसर्च, डिस्कशन पेपर सं. 6590.

II.6.9 वैश्विक मंदी के परिणामस्वरूप निर्यात वृद्धि में मांग प्रेरित कमी के बावजूद,भारत का निर्यात में अपेक्षाकृत बेहतर प्रदर्शन रहा और अग्रणी निर्यातकों की सूची में वह 2008 के 27 वें स्थान से सुधारकर 2009 में वह 22वें स्थान पर आ गया। इसके साथ ही विश्व निर्यात में उसकी भागीदारी 1.2 प्रतिशत रही। अग्रणी आयातकों की सूची में भी 1.9 प्रतिशत भागीदारी के साथ 2009 में भारत का स्थान 15 वां था, तथा यह भी 2008 के 16 वें स्थान की तुलना में सुधार दर्शाता है। चूंकि भारत के जीडीपी में वृद्धि अधिकांश देशों से अधिक रही, तदनुसार इसकी आयात वृद्धि भी अपेक्षाकृत अधिक रही होती, जिससे आयातकों की सूची में इसे और ऊंचा स्थान मिलता।

II.6.10 अलग-अलग पण्य और व्यापार आंकड़ों की दिशा से पता चलता है कि 2009-10 के दौरान सभी प्रमुख पण्यों के समूह में तथा प्रमुख व्यापार भागीदारों के साथ भारत के व्यापार में गिरावट आई (चार्ट II.58 क से घ तक)। हालांकि प्राथमिक उत्पादों और पेट्रोलियम उत्पादों ने 2009-10 में सकारात्मक वृद्धि दर्ज की। 2009-10 की तीसरी तिमाही से रत्न एवं आभूषणों के निर्यात में टर्न-अराउंड आया। इसी प्रकार, तेल की कीमतों में वृद्धि के साथ ही कच्चे तेल के आयात में बढ़ोतरी शुरू हो गयी।

II.6.11 कुल मिलाकर, वर्ष 2009-10 के दौरान भारत के निर्यात और आयात में क्रमशः 3.6 प्रतिशत और 5.6 प्रतिशत की कमी रही, जबकि पिछले वर्ष निर्यात में 13.7 प्रतिशत और आयात में 20.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। चूंकि आयात में गिरावट निर्यात के मुकाबले तेज थी, इसलिए वर्ष के दौरान समग्र व्यापार घाटा कम था। भुगतान संतुलन आधार पर जीडीपी के प्रतिशत के रूप में व्यापार घाटा 2008-09 के 9.8 प्रतिशत से कम होकर 2009-10 में 8.9 प्रतिशत रहा।

अदृश्य मदें

II.6.12 संकट पूर्व अवधि में वृद्धि में हुए अच्छे प्रदर्शन के मद्देनजर 2008-09 में अदृश्य प्राप्तियों और भुगतान की वृद्धि में गिरावट देखी गई। वर्ष 2009-10 के दौरान अदृश्य प्राप्ति में मुख्यतया व्यापार, वित्तीय और संचार सेवा तथा निवेश आय प्राप्तियों में गिरावट की वजह से 1.4 प्रतिशत की और गिरावट देखी गई। इसके विपरीत, निवेश आय,वित्तीय और कारोबारी सेवाओं के तहत भुगतान बढ़ने की वजह से अदृश्य भुगतान में उल्लेखनीय रूप से 11.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप, अदृश्य अधिशेष में 12.2 प्रतिशत की

चार्ट II.58: भारत का व्यापार निष्पादन - देश-वार और पण्य-वार

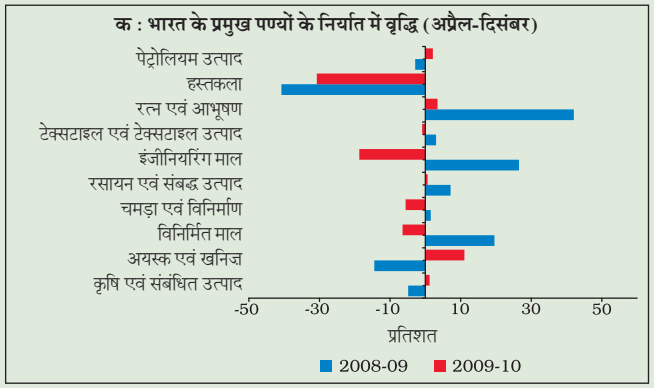

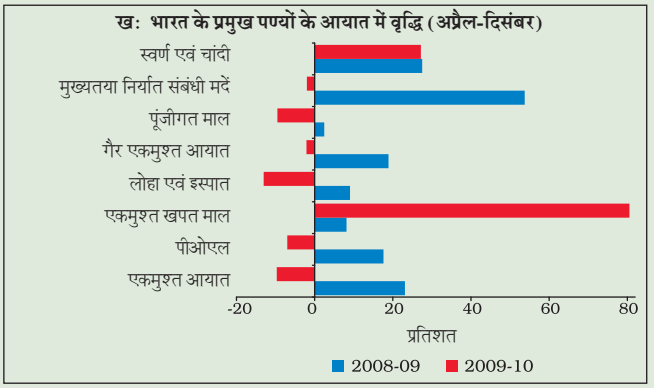

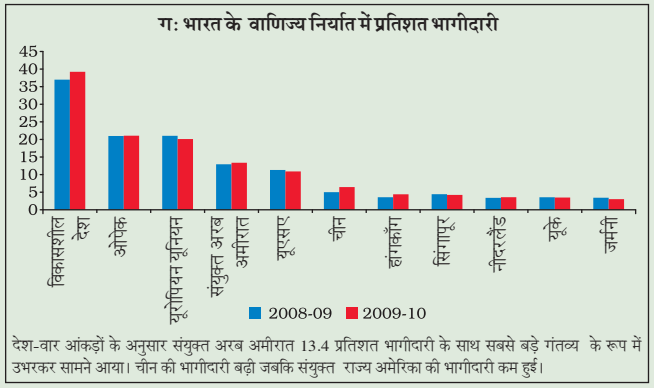

देश-वार आंकड़ों के अनुसार संयुक्त अरब अमीरात 13.4 प्रतिशत भागीदारी के साथ सबसे बड़े गंतव्य के रूप में उभरकर सामने आया। चीन की भागीदारी बढ़ी जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका की भागीदारी कम हुई।

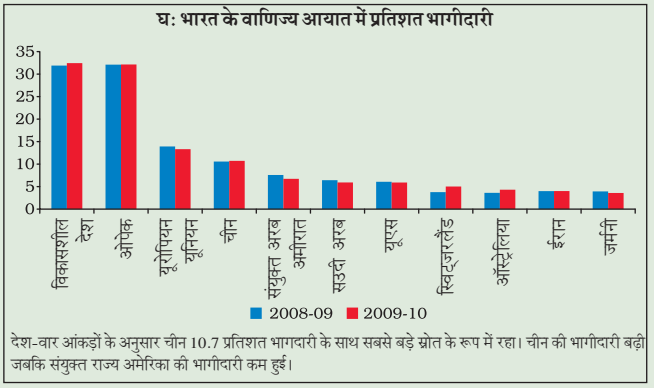

देश-वार आंकड़ों के अनुसार चीन 10.7 प्रतिशत भागदारी के साथ सबसे बड़े स्रोत के रूप में रहा। चीन की भागीदारी बढ़ी जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका की भागीदारी कम हुई।

चार्ट II.59: भारत की अदृश्य मदों का निष्पादन

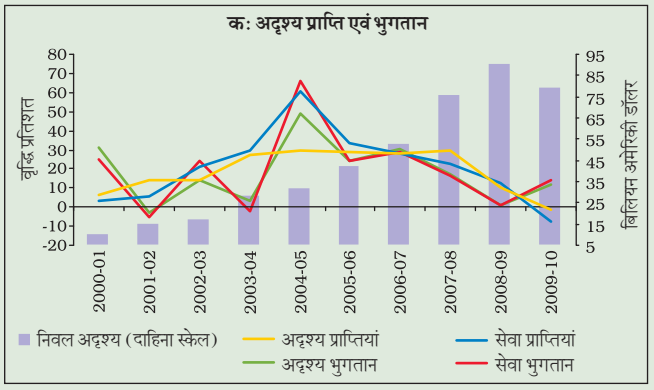

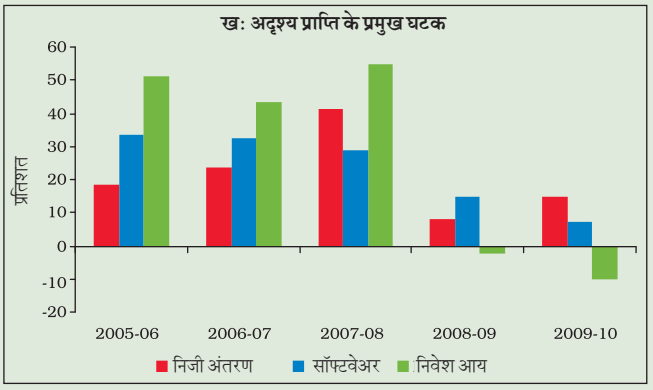

गिरावट हुई और यह पिछले वर्ष के 89.9 बिलियन अमरीकी डॉलर से गिरकर 2009-10 के दौरान 78.9 बिलियन अमरीकी डॉलर रह गया (चार्ट II.59 क)।

II.6.13 भारत के निवल सेवा निर्यात में पिछले वर्ष हुई 27.7 प्रतिशत की वृद्धि के मुकाबले 2009-10 के दौरान 31.1 प्रतिशत की गिरावट हुई और मुख्यतया सेवा भुगतान में बढ़ोतरी तथा सेवा प्राप्ति में उल्लेखनीय गिरावट की वजह से ऐसा हुआ। 1992-93 के बाद पहली बार सेवा प्राप्तियों में वृद्धि ऋणात्मक हुई जो वैश्विक निजी मांग में कमी और वाणिज्य-वस्तु व्यापार में गिरावट दर्शाता है। निवल सेवाओं में गिरावट परिवहन और विभिन्न सेवाओं जैसे व्यावसायिक, वित्तीय और संचार सेवाओं तक फैल गई। सॉफ्टवेअर निर्यात, जिसमें पहली छमाही के दौरान गिरावट हुई थी, में दूसरी छमाही में सुधार हुआ जिसके फलस्वरूप 2009-10 के दौरान वृद्धि 7.4 प्रतिशत रही। सॉफ्टवेअर से इतर विभिन्न सेवाओं से प्राप्तियां 2008-09 में 31.4 बिलियन अमरीकी डॉलर थीं जो 2009-10 में तेजी से घटकर 19.0 बिलियन अमरीकी डॉलर रह गईं और यह मुख्यतया संचार, वित्तीय और व्यावसायिक सेवाओं में उल्लेखनीय गिरावट के कारण हुआ। अंतरराष्ट्रीय बाजार में निम्न ब्याज दर वातावरण की वजह से निवेश आय प्राप्ति भी 2008-09 के 13.5 बिलियन अमरीकी डॉलर से घटकर 2009-10 में 12.1 बिलियन अमरीकी डॉलर रह गई।

II.6.14 निजी अंतरण प्राप्ति, जो अदृश्य मदों का महत्वपूर्ण और आघात-सह घटक है, में 14.9 प्रतिशत की वृद्धि हुई और पिछले वर्ष के 46.9 बिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़कर 2009-10 में यह 53.9 बिलियन अमरीकी डॉलर हो गया (चार्ट II.59 ख)। भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा नवंबर 2009 में किये गये सर्वेक्षण ने सुझाया कि वैश्विक संकट का भारत में धन प्रेषण के अंतर्वाह पर मामूली प्रभाव पड़ा। यद्यपि विभिन्न शहरों की अनुक्रियाएं अलग-अलग रहीं, जिसमें उल्लेखनीय प्रभाव (जैसे कोच्चि) से लेकर कोई कमी नहीं (जैसे अहमदाबाद) शामिल था।

चालू खाता संतुलन

II.6.15 भुगतान संतुलन के आधार पर व्यापार घाटा 2008-09 के 118.7 बिलियन अमरीकी डॉलर (जीडीपी के 9.8 प्रतिशत) से मामूली रूप से कम होकर 2009-10 के दौरान 117.3 बिलियन अमरकी डॉलर (जीडीपी का 8.9 प्रतिशत)रह गया, हालांकि आयात के मुकाबले निर्यात में अधिक गिरावट हुई (चार्ट II.60)। वर्ष 2009-10 के दौरान निम्न निवल अदृश्य मदों ने व्यापार घाटे के लगभग 67.3 प्रतिशत का वित्तपोषण किया, जबकि पिछले वर्ष इसने

चार्ट II.60: भुगतान संतुलन के प्रमुख घटकों की प्रवृत्तियां

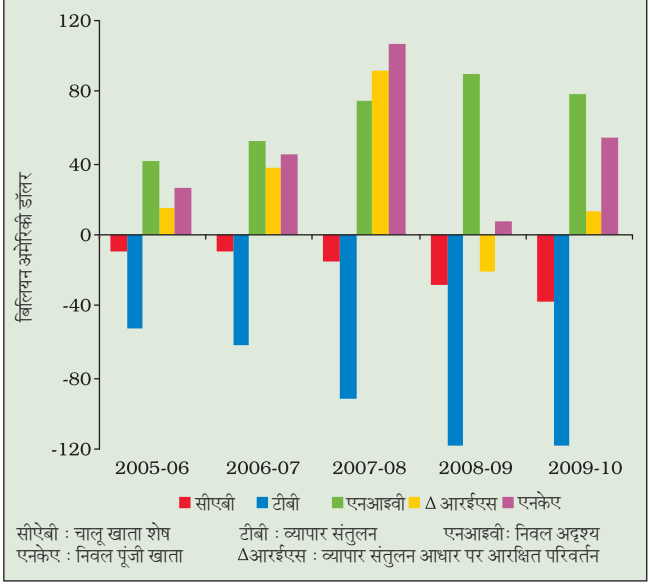

व्यापार घाटे के 75.8 प्रतिशत का वित्तपोषण किया था। निम्न व्यापार घाटे के बावजूद अदृश्य मदों के अधिशेष में गिरावट से 2009-10 के दौरान जीडीपी के 2.9 प्रतिशत पर उच्च चालू खाता घाटा हुआ, जबकि एक वर्ष पहले यह जीडीपी का 2.4 प्रतिशत था।

पूंजी खाता

II.6.16 वैश्विक अर्थव्यवस्था में सुधार से पहले भारत की अर्थव्यवस्था में हुए मजबूत सुधार से भारत की वृद्धि संभावनाओं के बारे में वैश्विक निवेशकों का दृष्टिकोण सकारात्मक रहा जिससे 2009-10 के दौरान पूंजी का फिर से अंतर्वाह शुरू हुआ। पूंजीगत अंतर्वाह में टर्न-अराउंड मुख्यतः विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफआइआइ) और अल्पावधि व्यापार क्रेडिट के जरिए पूंजी के अधिक अंतर्वाह की वजह से हुआ। विदेशी संस्थागत निवेशकों का निवल पूंजी अंतर्वाह 29.0 बिलियन अमरीकी डालर रहा जो पिछले वर्ष की 15.0 बिलियन अमरीकी डॉलर के पूंजी बहिर्वाह से काफी अलग था। वर्ष 2008-09 के दौरान प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के जरिए प्राप्त 17.5 बिलियन अमरीकी डॉलर के निवल अंतर्वाह के मुकाबले 2009-10 के दौरान यह 19.7 बिलियन अमरीकी डॉलर के उच्चतर स्तर पर था, जो पूंजी के स्थिर अंतर्वाह के साथ इसका निम्न सकल बहिर्वाह दर्शाता है (चार्ट II.61)

II.6.17 देश-वार देखा जाए तो प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के जरिए भारत को कुल अंतर्वाह में 2009-10 में सबसे बड़ा घटक मॉरिशस

चार्ट II.61: पूंजीगत प्रवाह (निवल) के प्रमुख घटकों की प्रवृत्तियां

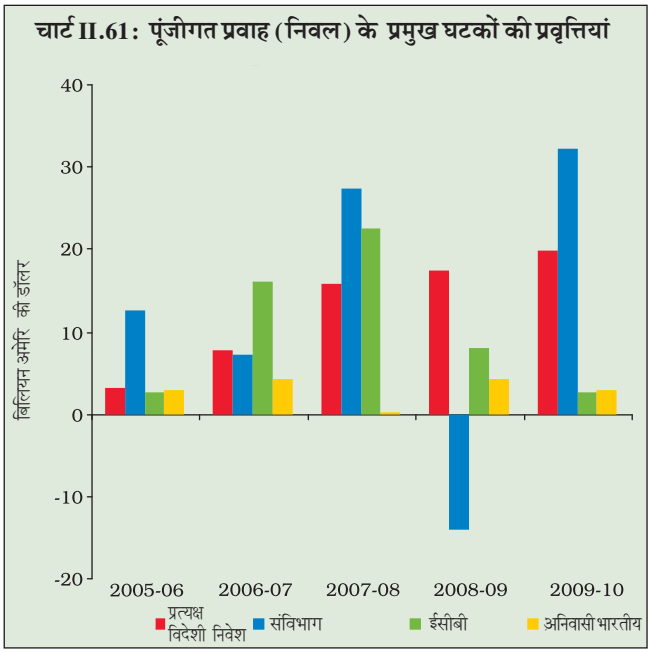

चार्ट II.62: देश-वार एफडीआइ प्रवाह

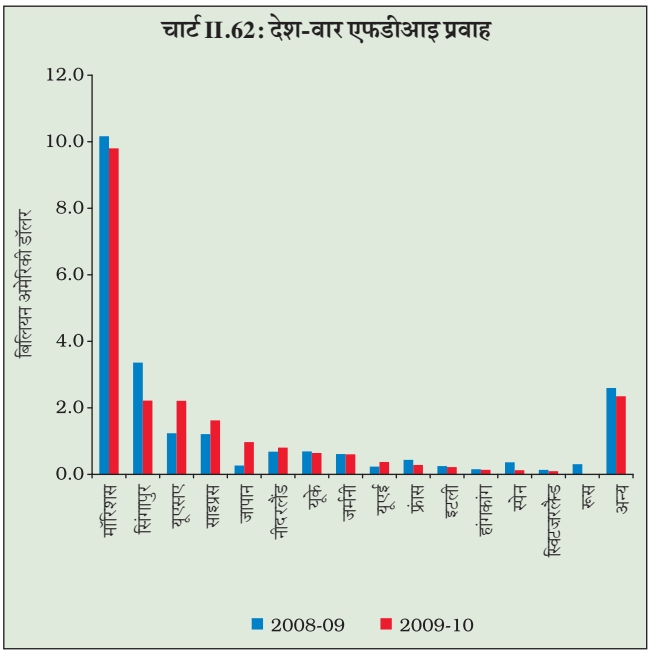

के मार्ग से हुआ निवेश था और इसके बाद सिंगापुर और संयुक्त राज्य अमरीका का स्थान था (चार्ट II.62)। 2009-10 के दौरान, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश मुख्यतया विनिर्माण क्षेत्र (22.9 प्रतिशत) और इसके बाद निर्माण क्षेत्र (15.7 प्रतिशत), वित्तीय सेवा और स्थावर संपदा क्षेत्र (9.8 प्रतिशत) में अंतरित हुए (चार्ट II.63)।

II.6.18 पहली तीन तिमाहियों के दौरान अनिवासी जमा खाते में निवल अंतर्वाह दर्ज करने के बाद 2009-10 की अंतिम तिमाही के

चार्ट II.63: उद्योग-वार एफडीआइ प्रवाह

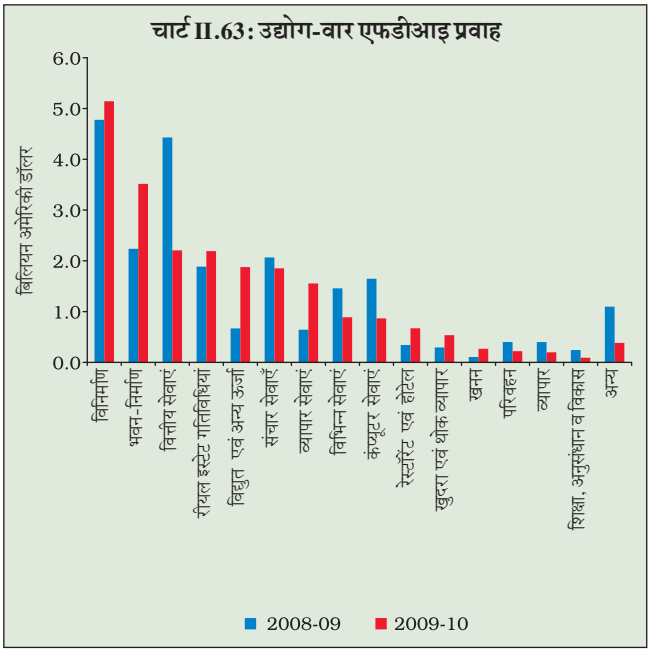

दौरान पूंजी का कुछ बहिर्वाह भी हुआ जो ऐसी जमाराशियों पर देय ब्याज दर में कमी और साथ ही अमरीकी डॉलर के मुकाबले रुपए का मजबूत होना दर्शाता है। 2009-10 के दौरान भारत को 2.4 बिलियन अमरीकी डॉलर की कुछ न्यूनतर निवल बाह्य सहायता प्राप्त हुई। 2009-10 के दौरान विशेषकर पहली तिमाही में कम संवितरण और ऊंची चुकौती की वजह से निवल बाह्य वाणिज्यिक उधार उल्लेखनीय रूप से कम रहा। 2009-10 की दूसरी तिमाही से अल्पावधि व्यापार ऋण में में भी टर्न-अराउंड देखा गया और पूरे वर्ष इसमें 7.7 बिलियन अमरीकी डॉलर का निवल अंतर्वाह हुआ। निवल पूंजी अंतर्वाह 2008-09 के 7.2 बिलियन अमरीकी डॉलर के मुकाबले 2009-10 में 53.6 बिलियन अमरीकी डॉलर पर काफी अधिक था और यह मुख्यतया प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, संविभाग निवेश और अल्पावधि व्यापार ऋण की वजह से हुआ।

II.6.19 2010-11 के दौरान अब तक, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के अंतर्वाह स्थिर बने रहे, जबकि विदेशी संस्थागत निवेशकों के अंतर्वाहों में कुछ सुधार देखा गया। 2010 (अप्रैल-जुलाई) के दौरान बड़ी मात्रा में बाह्य वाणिज्यिक उधार के अनुमोदन लिये गये, जो निवेश के लिए सुदृढ़ देशी मांग दर्शाते हैं।

II.6.20 भारत में हाल के वर्षों में पूंजी प्रवाह में बड़ी अस्थिरता देखी गई। अमरीकी डॉलर के मुकाबले रुपए की विनिमय दर में अस्थिरता लाने में पूंजी प्रवाह प्रभावी कारक रहा है। विनिमय दर बढ़ गई, जब पूंजी का अंतर्वाह अधिक था और यह कम हो गई जब पूंजी का अंतर्वाह घट गया या इसका बाहर जाना शुरू हो गया। किसी विशेष लक्ष्य या बैंड के बिना विनिमय दर की अस्थिरता को नियंत्रित करने की रिज़र्व बैंक की निर्दिष्ट नीति को देखते हुए, इसके निवल हस्तक्षेप परिचालन से विनिमय दर की अस्थिरता पर पूंजी

चार्ट II.64: भारत में विनिमय दर की लचीली स्थिति

प्रवाह का दबाव उल्लेखनीय रूप से कम करने में सहायता मिली। तथापि, हाल के वर्षों में, विशेषकर रिज़र्व बैंक के निवल हस्तक्षेप परिचालन के आकार के संदर्भ में विनिमय दर अपेक्षाकृत अधिक लचीली रही है। उदाहरण के लिए, 2009-10 में निवल हस्तक्षेप नगण्य था, जबकि विनिमय दर में 12.9 प्रतिशत की वृद्धि हुई (चार्ट II.64)। हालांकि, वैश्विक संकट के आलोक में 2008-09 में हुए उल्लेखनीय मूल्यह्रास के मुकाबले इसमें आंशिक रूप से सुधार देखा गया, नाममात्र की मूल्यवृद्धि का अर्थव्यवस्था पर दोहरा प्रभाव पड़ा (बॉक्स II.13)। 2010-11 में अब तक (16 अगस्त 2010 तक), अमरीकी डालर के मुकाबले भारतीय रुपए में सामान्यतः 3.5 प्रतिशत का मूल्यह्रास हुआ है, जबकि यूरो के मुकाबले इसका मूल्य बढ़ा है।

बॉक्स II.13
विनिमय दर की गतिविधियों का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

लचीली विनिमय दर के दौर में विनमय दरों की गतिविधियां समग्र समष्टि-आर्थिक स्थितियों को दोहरे रूप में प्रभावित कर सकती हैं। जहाँ विनिमय दर में वृद्धि देशी मुद्रा में प्रदर्शित आयातों की न्यूनतर लागत के जरिए देशी मुद्रास्फीति को कम करने में मदद कर सकती है, वहीं यह निर्यातों के प्रतिस्पर्द्धी लाभ को कमजोर भी कर सकती है जिनका वृद्धि पर विपरीत असर होता है। यदि न्यूनतम बढ़ोतरी के साथ ही उच्चतर मुद्रास्फीति डिफरेंशियल मौजूद होते हैं तो वास्तविक प्रभावी विनमय दर (आरईईआर) की परिणामी बढ़त प्रतिस्पर्धा पर पड़नेवाले दबाव को और बढ़ा सकती है। वर्ष 2009-10 में, 6 मुद्राओं के व्यापार पर आधारित भारतीय रुपये की आरईईआर में 20.0 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई (चार्ट क)।

स्वदेशी कीमतों पर विनिमय दर परिवर्तनों को अंतरित करने के संबंध में भारत के लिए उपलब्ध अनुभवजन्य निष्कर्षों से परिणामों की एक शृंखला प्राप्त होती है। भारतीय रिज़र्व बैंक ने (2004 में) अनुमान लगाया था कि विनिमय दर में 10 प्रतिशत के मूल्यह्रास से 1970 से 2004 की अवधि के

(जारी)

(समाप्त)

चार्ट क: भारतीय रुपये की मूल्यवृद्धि (+) मूल्यह्रास (-)

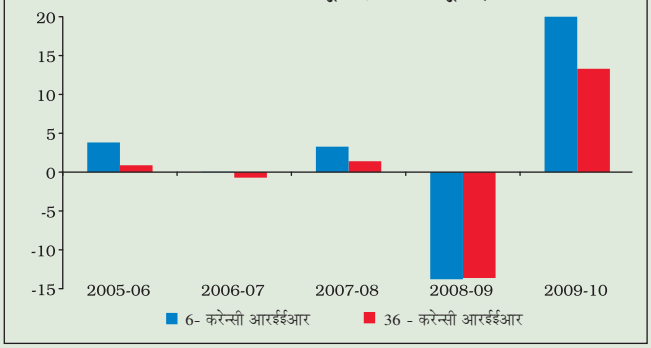

दौरान थोक मूल्यों में 0.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई। एक वर्ष के भीतर लगभग 60 प्रतिशत अंतरण होने का अनुमान था। सुधार के बाद की अवधि (अगस्त 1991 से मार्च 2005) के लिए खुन्द्रकपम द्वारा किये गये अध्ययन (2007) ने अंतरण गुणांक का अनुमान लगाया और यह पाया कि विनिमय दर में 10 प्रतिशत का बदलाव अंतिम मूल्यों में अल्पावधि में 0.6 प्रतिशत और दीर्घावधि में 0.9 प्रतिशत का परिवर्तन करता है। इसी अध्ययन ने सुझाया कि अन्य देशों में पाये गये निष्कर्षों के विपरीत यहाँ समय के व्यतीत होने के साथ अंतरण की मात्रा में कोई गिरावट नहीं आयी। 0.4 प्रतिशत से 0.9 प्रतिशत के दायरे में ये अनुमान यह सुझाते हैं कि वर्ष 2009-10 में महसूस की गयी 12.9 प्रतिशत की वृद्धि से मुद्रास्फीति को 0.5 प्रतिशत से 1.2 प्रतिशत तक कम करने में मदद मिलती। यद्यपि, यह प्रभाव एक समयावधि के दौरान पड़ा होगा; न कि संपूर्ण रूप से उसी वर्ष के दौरान।

व्यापार संतुलन पर विनिमय दर में वृद्धि का प्रभाव निर्यात और आयात मूल्यों पर विनिमय दर के परिवर्तनों के अंतरण की मात्रा पर और साथ ही निर्यातों की आयात-प्रधानता पर निर्भर करता है। अक्सर, निर्यातों और आयातों के अन्य निर्धारकों, जैसे उत्पादकता चालित तुलनात्मक लाभ और मांग-आपूर्ति स्थितियों का प्रभाव विनिमय दर के प्रभाव पर हावी हो सकता है। अनुभवजन्य साक्ष्य सामान्यतः इस धारणा की पुष्टि करते हैं कि व्यापार प्रवाहों के अन्य निर्धारकों में जब काफी परिवर्तन होता है तब भी निर्यात और आयात दोनों ही विनिमय दरों के प्रति संवेदनशील होते हैं (स्मिथ 2004; शर्मा 2000; कंदील और अन्य 2007)।

भारत के लिए, 1996 की दूसरी तिमाही से 2009 की चौथी तिमाही की अवधि के व्यापार संतुलन पर मुद्रा गतिविधि का अनुमानित प्रभाव सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। विनिमय दर (6 मुद्रा व्यापार भारित वास्तविक प्रभावी विनिमय दर अर्थात एलआरईईआर) पर व्यापार संतुलन (आयातों की तुलना में निर्यातों के अनुपात के रूप में प्रयुक्त अर्थात् एलएक्सएम) का सामान्य पश्चगमन मौसम के अनुरूप समायोजित स्वदेशी वास्तविक जीडीपी (एलआइएन जीडीपी) और वैश्विक जीडीपी (मौसम के अनुरूप समायोजित एलओईसीडी जीडीपी द्वारा परीक्षीकृत अर्थात एलओईसीडी जीडीपी) दर्शाती है कि देशी जीडीपी में वृद्धि व्यापार संतुलन को और बिगाड़ देती है (संभवतः आपूर्ति पक्ष से निर्यातों की तुलना में आयात की मांग में वृद्धि के जरिए), जबकि वैश्विक जीडीपी में वृद्धि भारत के व्यापार संतुलन में सुधार (मांग के पक्ष में निर्यातों पर प्रभाव के जरिये) लाती है। मुद्रा में मज़बूती व्यापार संतुलन को प्रभावी रूप से बिगाड़ती है; अनुमानित गुणांक दर्शाता है कि एक प्रतिशत की वास्तविक मूल्यवृद्धि व्यापार संतुलन में लगभग 0.7 प्रतिशत की गिरावट दर्ज कर सकती है।

$$LXM_t = 4.28 - 0.73LREER_t - 0.99LINGDP_t + 2.56LOECDGDP_t$$

t-stat (3.53)* (-2.34)* (-5.88)* (5.15)*

$R^2 = 0.48$ DW = 1.83

*: 5 प्रतिशत के स्तर पर महत्वपूर्ण

सभी परिवर्तक लॉग रूप में हैं।

मुद्रास्फीति पर विनिमय दर वृद्धि के अनुकूल प्रभाव के आधार पर वर्ष 2009-10 के दौरान कुछ तिमाहियों में यह देखा गया कि मौद्रिक नीति का विनिमय दर चैनल मुद्रास्फीति को काबू में रखने के लिए प्रभावी था। तथापि, भारत में अत्यधिक उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करने के अलावा, भारतीय रिज़र्व बैंक विनिमय दर को अनुकूलित नहीं करता है। चूंकि, वर्ष 2009-10 में रिज़र्व बैंक को मजबूत आर्थिक रिकवरी और न्यूनतर मुद्रास्फीति के दोहरे उद्देश्यों के बीच संतुलन स्थापित करना था, अतः मौद्रिक नीति के उपायों के प्रयोग में भी सुविचारित सावधानी बरतना आवश्यक था। रिकवरी के प्रबंधन के चरण में विशेषकर प्रतिकूल बाह्य मांग स्थितियों और संरक्षणवादी चिंताओं को देखते हुए, विनिमय दर में किसी प्रकार की वृद्धि होने से, सामान्य स्थितियों की तुलना में वृद्धि के उद्देश्य के अधिक प्रभावित होने की संभावना थी। घटती हुई निर्यात वृद्धि के अतिरिक्त सस्ते विदेशी आयात भी देशी आयात की एवजी मदों के साथ प्रतिस्पर्द्धा कर तेज रिकवरी में गंभीर बाधा डाल सकते थे। मौद्रिक नीतिगत उपायों के जरिए मुद्रास्फीति-वृद्धि के उद्देश्यों का प्रबंधन करने के विपरीत इसे विनिमय दर के जरिए उस लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास अर्थव्यवस्था को बाह्य क्षेत्र की जोखिमों के लिए खुला छोड़ देता, जिसका प्रबंधन दुष्कर हो सकता था। हमारे पास देशों से संबंधित अवमूल्यन के अनुभव हैं - एक ओर अत्यधिक मुद्रास्फीति का दुष्कर रास्ता था और दूसरी ओर निरंतर बृहत मूल्यवृद्धि से जुड़े डच रोग के परिणाम थे। रिज़र्व बैंक आंतरिक संतुलन के साथ बाह्य संतुलन के उद्देश्यों के प्रबंधन के उपाय के रूप में विनिमय दर के प्रयोग की जोखिमों को पहचानता है और इसी कारण यह बाज़ार द्वारा निर्धारित की जाने वाली विनिमय दर पद्धति को अपनाता है, जहाँ दर स्वयं विभिन्न निर्धारकों द्वारा निर्धारित होती है जिनमें मुद्रास्फीति, व्यापार और पूंजी प्रवाह तथा आर्थिक वृद्धि शामिल है।

संदर्भ:

1. खुन्द्रकपम जे.के.(2007) ''इकॉनामिक रिफॉर्म्स एंड एक्सचेंज रेट पास थ्रू टु डोमेस्टिक प्राइसेज़ इन इंडिया'', बीआइएस वर्किंग पेपर नं.225.
2. भारतीय रिज़र्व बैंक (2004) मुद्रा एवं वित्त की रिपोर्ट 2003-04 पर
3. कंदील एम.,एच.बेरुमेंट और एन.एन.डिन्सर (2007):''दि इफेक्टस ऑफ एक्सचेंज रेट फ्लक्चुएशन्स ऑन इकोनामिक एक्टिविटी इन टर्की,'' जर्नल ऑफ एशियन इकोनामिक्स, 18,466-89.
4. स्मिथ, एम. (2004):''इम्पैक्ट ऑफ दि एक्सचेंज रेट ऑन एक्सपोर्ट वाल्यूम्स,'' रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूज़ीलैंड बुलेटिन, 67 (1), 1-13
5. शर्मा, के.(2000),''एक्सपोर्ट ग्रोथ इन इंडिया: हैज़ एफडीआइ प्लेड ए रोल?'' सेंटर डिस्कशन पेपर नं.816, येल यूनिवर्सिटी, जुलाई।

विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि

II.6.21 वर्ष 2009-10 के दौरान बृहत चालू खाता घाटे का वित्तीयन करने के बाद निवल पूंजी खाता अधिशेष के परिणामस्वरूप विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों में 13.4 बिलियन अमरीकी डालर(मूल्यन प्रभाव को छोड़कर) की निवल वृद्धि हुई। यू.एस.डालर बनाम अन्य गैर यू.एस.डालर मुद्राओं, जिसमें आरक्षित निधियों का कुछ भाग रखा जाता है, के मूल्यह्रास से उत्पन्न मूल्यन लाभों सहित और सोने की कीमत में इज़ाफ़ा होने से वर्ष के दौरान विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों में 27.1 बिलयन यू.एस. डालर की वृद्धि हुई। आइएमएफ से स्वर्ण की खरीद और आइएमएफ द्वारा एसडीआर के आबंटन से संबंधित दो लेनदेन हुए जिन्होंने आरक्षित निधियों के स्तर के साथ ही उनके संघटन को भी प्रभावित किया। आइएमएफ ने भारत को दो शृंखलाओं में अतिरिक्त एसडीआर का आबंटन किया; अर्थातः 28 अगस्त 2009 को 3,082 मिलियन एसडीआर का सामान्य आबंटन (4.82 बिलियन अमरीकी डालर के समतुल्य) और 9 सितंबर 2009 को 214.6 मिलियन एसडीआर का विशेष आबंटन (0.34 बिलियन अमरीकी डालर के समतुल्य)। इसके परिणामस्वरूप, जहां भुगतान संतुलन के पूंजी खाते में सरकार की बाह्य देयताओं में वृद्धि हुई, वहीं एसडीआर आस्तियों के रूप में विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों में समतुल्य वृद्धि दर्ज की गई। एसडीआर आबंटन के विपरीत, आइएमएफ से 200 मैट्रिक टन स्वर्ण खरीद में केवल निधियों के संघटन में परिवर्तन हुआ क्योंकि स्वर्ण के रूप में आरक्षित निधियों में हुई वृद्धि, विदेशी आस्तियों में आई तदनुरूपी गिरावट से प्रतितुलित हो गई। आरक्षित निधियों में 27.1 बिलियन यू.एस.डालर की वृद्धि (मूल्यन सहित) में घटक-वार वृद्धियां इस प्रकार थीं - विदेशी मुद्रा आस्तियों में 13.3 बिलियन यू.एस.डालर, स्वर्ण में 8.4 बिलियन यू.एस.डालर, एसडीआर में 5.0 बिलियन यू.एस.डालर और आरटीपी में 0.4 बिलियन यू.एस.डालर। पिछले वर्ष की तुलना में बृहतर पूंजी अंतर्वाह होने के बावजूद, 2009-10 के दौरान विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों में नाममात्र की ही वृद्धि हुई, जो उच्चतर चालू खाता घाटे के जरिए अवशोषण में हुई वृद्धि परिलक्षित करता है। 6 अगस्त 2010 की स्थिति के अनुसार भारत की विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियां 287.4 बिलियन यू.एस.डालर थीं। 2009-10 के दौरान, भविष्य में प्रतिकूल वैश्विक आघातों का सामना करने के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा तंत्र की अनुपूर्ति हेतु वैश्विक स्तर पर विभिन्न उपाय प्रारंभ किए गए (बाक्स II.14)।

बाक्स II. 14
बाहरी आघातों से निपटने में राष्ट्रीय नीतियों की अनुपूर्ति के लिए वैश्विक पहल

हाल के वित्तीय संकट के अनुभव ने स्पष्ट रूप से यह बता दिया है कि सार्वभौमिक विश्व में, एक सुदृढ़ स्वदेशी समष्टि वित्तीय नीति का वातावरण होने के बावजूद किसी देश को बाहरी आघातों के कारण संकट का सामना करना पड़ सकता है। भारत जैसी बहुत सी उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं ने वैश्विक संकट में न तो सीधे कोई योगदान दिया और न ही उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में संकटग्रस्त आस्तियों और वित्तीय लिखतों में उनका कोई सीधे एक्सपोजर था। फिर भी वे संकट की चपेट में आ गए। अतः बाहरी आघातों, जो अर्थव्यवस्थाओं के लिए विध्वंसकारी परिणामों के साथ संभाव्य रूप से तेजी से फैलते हैं, से निपटने के लिए राष्ट्रीय नीतियों की अनुपूर्ति के लिए एक विश्वस्त और प्रभावी वैश्विक प्रणाली अवश्य होनी चाहिए।

हाल के वित्तीय संकट के वैश्विक आयाम को ध्यान में रखते हुए प्रारंभ में ही यह महसूस किया गया कि संतुलन बहाली के प्रति किये गये प्रयास राष्ट्रीय सीमाओं के पार अपवादात्मक स्वरूप के होने चाहिए। यह प्रमुख केंद्रीय बैंकों द्वारा स्वैप व्यवस्थाओं के जरिए और नीतिगत दरों में कटौती के विभिन्न चरणों द्वारा किए गए सीमा-पार चलनिधि प्रावधान में परिलक्षित हुआ है। नीतिगत समन्वयन के लिए जी-20 जैसी अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं, आइएमएफ जैसी वैश्विक वित्तीय संस्थाएं और बहुत सी विनियामक संस्थाएं क्रियाशील हुईं और वित्तीय स्थिरता बोर्ड जैसी नई संस्थाएं भी स्थापित हुईं। संकट के दौरान जी-20 ने द्रुत राष्ट्रीय नीतिगत उपायों से संकट के संक्रमण के प्रति अनुक्रिया व्यक्त करने में अभूतपूर्व समन्वयन दर्शाया। विनियामक सुधारों के संबंध में पूंजी, लीवरेज और चलनिधि, क्षतिपूर्ति सुधारों, ओटीसी डेरीवेटिवों, एसआइएफआइ के विवेकपूर्ण विनियमन,लेखा मानकों और क्रेडिट रेटिंग एजेन्सियों पर अंतरराष्ट्रीय नियमों के संबंध में जी-20 बैंकिंग पर्यवेक्षण संबंधी बासेल समिति (बीसीबीएस) अंतरराष्ट्रीय प्रतिभूति आयोग संगठन (आइओएससीओ) और अंतरराष्ट्रीय बीमा पर्यवेक्षक संघ (आइएआइएस) जैसी प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के प्रयासों का निकट से समन्वयन कर रहा है।

राष्ट्रीय मौद्रिक और वित्तीय प्रेरक उपायों के अतिरिक्त, आइएमएफ के वित्तीय संसाधनों को बढ़ाने के लिए फेड की स्वैप सुविधाओं से लेकर राष्ट्रीय केंद्रीय बैंकों, की शृंखलाओं तक विस्तारित वित्तीय सुरक्षा तंत्र पर भरोसा रहा। अप्रैल 2009 में लंदन में आयोजित अपने शिखर सम्मेलन में जी-20 सदस्यों ने व्यापार वित्त के लिए समर्थन, बहुपक्षीय विकास बैंकों (एमडीबी) द्वारा अतिरिक्त ऋण देने और आइएमएफ के सोने की बिक्री से होने वाली प्राप्तियों में से गरीब राष्ट्रों का रियायती वित्तीयन करने के अलावा आइएमएफ के संसाधन आधार को तिगुना कर 750 बिलियन अमरीकी डॉलर करने के प्रति अपनी प्रतिबद्धता जाहिर की। तत्पश्चात्, आइएमएफ ने एसडीआर

(जारी)

(समाप्त)

आबंटनों के माध्यम से सदस्य देशों के वित्तीय सुरक्षा कवच को सुधारने का प्रयास किया। उक्त कोष ने अपनी उधार संबंधी प्रचलित लिखतों का भी पुनर्निर्माण किया जिससे वित्तीय दबाव का सामना कर रही अर्थव्यवस्थाओं को समय पर संसाधन उपलब्ध कराये जा सकें। पारंपरिक ऋण व्यवस्था के अलावा, कोष ने मज़बूत समष्टि आधार वाले देशों के लिए लचीली ऋण व्यवस्था (एफसीएल) और एफसीएल हेतु अपात्र देशों के लिए उच्च पहुँच एहतियाती पहुँच (एचएपीए) शुरू की। ग्रीस में सरकारी ऋण संकट की अनुक्रिया में वैश्विक स्तर पर दृष्टिकोण में आये परिवर्तन को दर्शाते हुए आइएमएफ ने यूरोपीय आयोग के साथ समन्वय करते हुए ग्रीस को 40 बिलियन अमरीकी डालर की तीन वर्षीय स्टैंड-बाइ व्यवस्था प्रदान करने का बीड़ा उठाया जो आइएमएफ में इसके कोटे का 32 गुना है।

उभरती हुई वैश्विक पहल कदमी में भारत की भूमिका

जी-20 का एक सक्रिय सदस्य होने के नाते और यह पहचानते हुए कि वैश्विक समस्याओं के लिए वैश्विक समाधान आवश्यक हैं, भारत उभरती हुई वैश्विक पहल के प्रति वचनबद्ध है। ''स्वस्थ नियमन और पारदर्शिता सुदृढ़ीकरण के उन्नयन'' पर गठित जी-20 कार्यदल की सह-अध्यक्षता भारत ने की। भारत सरकार ने जी-20 वाशिंगटन शिखर सम्मेलन घोषणापत्र पर अनुवर्ती कार्रवाई करने के लिए एक उच्च स्तरीय समिति (एचएलसी) गठित की है और चार भारतीय/आंतरिक कार्यदल गठित किये हैं जो जी-20 कार्यदलों को प्रतिबिंबित करते हैं। भारतीय रिज़र्व बैंक ने अलग रूप से जी-20 कार्यदलों पर क्रमशः दो दल अर्थात् 'पारदर्शिता सुदृढ़ीकरण और स्वस्थ विनियमन उन्नयन' तथा 'अंतरराष्ट्रीय सहयोग और बाज़ार अखंडता' नामक क्रमशःदो कक्ष गठित किए हैं।

आइएमएफ के उधारयोग्य संसाधनों को सुदृढ़ बनाने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक ने आइएमएफ के साथ एक नोट खरीद करार (एनपीए) किया है जिसके तहत रिज़र्व बैंक आइएमएफ से 10 बिलियन अमरीकी डालर के समतुल्य राशि के नोटों की खरीद करेगा। भारत ने आइएमएफ से सोने की खरीद की है, जिसकी आगम राशियों से कम आय वाले देशों को रियायती ऋण प्रदान करने की आइएमएफ की क्षमता बढ़ने की आशा है।

विवेकपूर्ण विनियमनों के संबंध में बैंकिंग पर्यवेक्षण संबंधी बासेल समिति द्वारा आयोजित परिमाणात्मक प्रभाव आकलन (क्यूआइएस) के वर्तमान दौर में दस बड़े भारतीय बैंक भाग ले रहे हैं। सही क्षतिपूर्ति के लिए एफएसबी के सिद्धान्तों पर रिज़र्व बैंक कार्यरत है और तदनुसार, सही क्षतिपूर्ति प्रथाओं पर वित्तीय स्थिरता बोर्ड के सिद्धान्तों के आधार पर विस्तृत दिशानिर्देश 1 जुलाई 2010 को जारी किए गए। साथ ही, सभी प्रकार की ओटीसी ब्याज दरों और विदेशी मुद्रा डेरिवेटिव लेनदेनों के लिए एक कारगर, एकल बिन्दु रिपोर्टिंग प्रणाली हेतु तौर-तरीके बनाने के लिए एक कार्यदल के गठन का भी प्रस्ताव किया गया था।

जबकि देशों की उभरती हुई विनियामकीय अनुक्रियाओं और नये अंतरराष्ट्रीय मानकों के विकास को भारत की विशिष्ट आवश्यकताओं और सुसंगतता की दृष्टि से उनके लागू होने के पूर्व जांचने की आवश्यकता है, यह आवश्यक नहीं है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उठाये गये नये कदम पूंजी प्रवाह, विनिमय दर और विदेशी मुद्रा भंडारों पर देश की वर्तमान नीतियों में संशोधन की प्रेरणा दें; जिन्होंने बाहरी आघातों के प्रति देश की असुरक्षितता को करगर ढंग से सीमित करने में मदद की।

विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों का प्रबंधन

II.6.22 भारत में विदेशी मुद्रा आरक्षित निधि प्रबंधन के मार्गदर्शी उद्देश्य इस संबंध में सामान्य अंतरराष्ट्रीय प्रथाओं के अनुरूप सुरक्षा, चलनिधि और प्रतिलाभ हैं। भारत की विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों में आने वाले बदलाव इसकी विनिमय दर नीति की देन है, जिसमें केवल विनिमय दर अस्थिरता को सहज बनाने और समष्टि-आर्थिक स्थिरता में आनेवाली रु कावटों को दूर करने के लिए हस्तक्षेप करना शामिल है। चूंकि निरंतर चालू खाता अधिशेष की नीति के जरिए आरक्षित निधियों को एकत्र करने के लिए कोई सोची-समझी कार्यनीति नहीं अपनायी जाती है; अतः भारत वैश्विक असंतुलनों में कोई योगदान नहीं करता है। इसके अतिरिक्त, आरक्षित निधियां उधार लिये गये संसाधनों के प्रति बनायी जाती हैं और इसलिए अचानक रु कावटें आने और पूंजी प्रवाह विपरीत होने की स्थिति में ही उनका उपयोग किया जाता है। इस प्रकार, अंतरराष्ट्रीय मुद्राओं, जिनमें आरक्षित निधियां रखी जाती हैं, में परिवर्तन से उत्पन्न मूल्यन प्रभावों के अतिरिक्त आरक्षित निधियों में बदलाव मोटे तौर पर पूंजी प्रवाह के रु झानों के परिणामों को दर्शाता है।

II.6.23 रिज़र्व बैंक ने आइएमएफ के सीमित स्वर्ण बिक्री कार्यक्रम के तहत 19-30 अक्तूबर 2009 के दौरान आइएमएफ से 200 मेट्रिक टन स्वर्ण खरीदा। यह रिज़र्व बैंक के विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों के प्रबंधन परिचालनों के एक भाग के रूप में किया गया। तथापि, इस लेनदेन द्वारा विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियां अप्रभावित रहीं क्योंकि यह केवल स्वर्ण द्वारा विदेशी मुद्रा आस्तियों का प्रतिस्थापन दर्शाता है। इसके परिणामस्वरूप कुल आरक्षित निधियों में स्वर्ण का हिस्सा नवंबर 2009 के अंत में बढ़कर 6.3 प्रतिशत तक हो गया, जबकि स्वर्ण की खरीद के पूर्व अक्तूबर 2009 के अंत में यह 3.8 प्रतिशत था।

बाह्य ऋण

II.6.24 भारत का बाह्य ऋण स्टॉक एसडीआर संबंधी देयताओं, वाणिज्यिक उधारों, व्यापार ऋणों और एनआरआइ जमाराशियों में

उल्लेखनीय वृद्धि होने के कारण मार्च 2010 के अंत में 16.5 प्रतिशत बढ़कर 261.5 बिलियन अमरीकी डालर हो गया। मूल परिपक्वता के आधार पर, दीर्घावधि ऋण 27.8 बिलियन अमरीकी डालर बढ़कर 209.0 बिलियन अमरीकी डालर हो गया जबकि अल्पावधि ऋण 9.1 बिलियन अमरीकी डालर बढ़कर 52.5 बिलियन अमरीकी डालर हो गया। अवशिष्ट परिपक्वता के आधार पर अल्पावधि ऋण स्टॉक 107.6 बिलियन अमरीकी डालर था, जो मार्च 2010 के अंत में कुल बाह्य ऋण का 41.2 प्रतिशत है। मुद्रा संरचना के रूप में मार्च 2010 के अंत में कुल बाह्य ऋण में प्रमुख हिस्सा अमरीकी डालर में मूल्यवर्गित ऋण का था । विभिन्न ऋण धारणीयता संकेतक वहनीय स्तर पर बने रहे (चार्ट-II.65)।

II.6.25 अंतरराष्ट्रीय आस्तियाँ मार्च 2009 के अंत के 346.2 बिलियन अमरीकी डालर से बढ़कर मार्च 2010 के अंत में 378.8 बिलियन अमरीकी डालर हो गयीं, इसका मुख्य कारण विदेशों में प्रत्यक्ष निवेश और आरक्षित निधियों की आस्तियों में वृद्धि होना था। अंतरराष्ट्रीय देयताओं के मार्च 2009 के अंत के 409.0 बिलियन अमरीकी डालर से बढ़कर मार्च 2010 के अंत में 536.5 बिलियन अमरीकी डालर होने का मुख्य कारण अंतर्मुखी प्रत्यक्ष और पोर्टफोलियो निवेशों और अन्य निवेशों में वृद्धि होना था। भारत पर अनिवासियों का निवल दावा जो निवल अंतरराष्ट्रीय निवेश स्थिति (अंतरराष्ट्रीय आस्तियों में से अंतरराष्ट्रीय देयताओं को घटाकर) दर्शाता है, मार्च 2009 के अंत के 62.8 बिलियन अमरीकी डालर के स्तर से बढ़कर मार्च 2010 के अंत में 157.6 बिलियन अमरीकी डालर हो गया। हाल के वर्षों में निर्मित विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों ने निवल अंतरराष्ट्रीय देयताओं में हुई बढ़ोतरी को भी नियंत्रित करने में मदद की। जबकि निवल देयताओं में 94.8 बिलियन अमरीकी डालर की वृद्धि हुई, निवल पूंजी अंतर्वाह 53.6 बिलियन अमरीकी डालर था और इन दोनों के बीच का अंतर मोटे तौर पर मूल्यन प्रभावों को दर्शाता है।

चार्ट II.65: बाह्य ऋण संकेतक

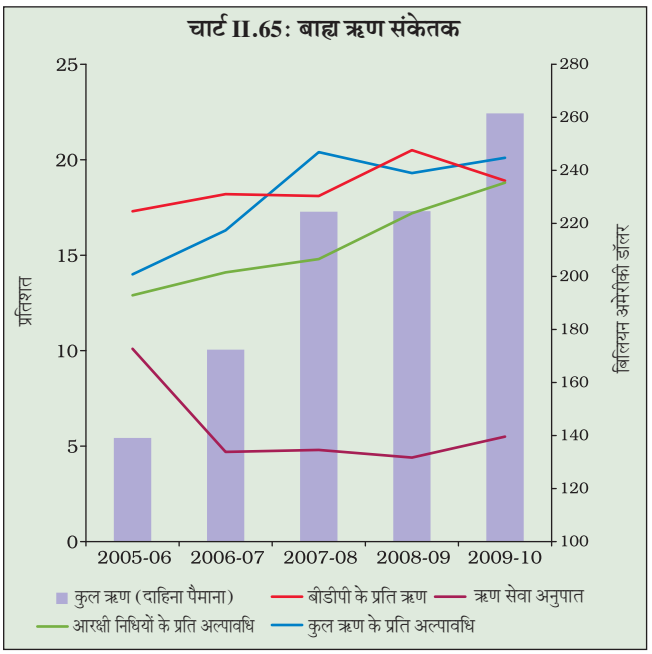

II.6.26 वर्ष 2010-11 के लिए बाह्य क्षेत्र की संभावना यह सुझाती है कि बृहत चालू खाता घाटा बना रहेगा तथापि इसमें कुछ कमी आयेगी। भारत की वृद्धि के मज़बूत होने की संभावना के कारण परिणामी आयात वृद्धि व्यापार घाटे को बढ़ा सकती है। अंतरराष्ट्रीय तेल कीमतों में अनिश्चितताओं से अतिरिक्त दबाव पड़ सकता है। निर्यात बास्केट का विविधीकरण होने और हाल के महीनों में निर्यात वृद्धि में तेजी आने के बावजूद, जबरदस्त निर्यात वृद्धि बनाये रखना एक चुनौती होगी। वर्ष 2009-10 के दौरान सेवा क्षेत्रों, विशेषरूप से व्यावसायिक सेवाओं, में देखी गयी गतिविधियां यूरोप में संकट के वातावरण और अन्य उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अनिश्चित स्थितियों के माहौल में वर्ष 2010-11 में जारी रह सकती हैं। तथापि,जैसा कि नैसकॉम ने अनुमान लगाया है, सॉफ्टवेयर निर्यात 2009-10 में हुई 5.5 प्रतिशत की तुलना में वर्ष 2010-11 में 13-15 प्रतिशत की वृद्धि कर सुधार दर्शा सकता है। यदि यूरोपीय क्षेत्र में संकट गहराता है, तो वह निर्यातों और निजी अंतरण प्राप्तियों दोनों को प्रभावित करेगा। हाल की अवधि में यूरोपीय देशों को भारत से किये गये निर्यात का हिस्सा 20 प्रतिशत रहा है, यूरोप भारत के निजी अंतरणों के प्रति योगदान करने वाले प्रमुख क्षेत्रों में से एक क्षेत्र भी है।

II.6.27 पूंजी प्रवाह में अपेक्षित वृद्धि और विनिमय दर तथा आस्ति कीमतों पर पड़नेवाले संबंधित दबावों का प्रबंधन करना होगा। तथापि, उच्चतर चालू खाता घाटा उच्चतर पूंजी प्रवाह को अधिक उत्पादकता के साथ अवशोषित कर सकता है। वास्तव में, बुनियादी ढांचा क्षेत्र की वित्तीय आवश्यकताओं के साथ प्रत्याशित उच्चतर चालू खाता घाटा आर्थिक वृद्धि के लिए विदेशी पूंजी का महत्व सुझाते है। 2010-11 के आरंभिक महीनों में पूंजी प्रवाहों में कुछ कमी आई है, जो यूरो क्षेत्र की सरकारी जोखिम संबंधी चिंताओं की अनुक्रिया में वैश्विक निवेशकों की जोखिम सहने की शक्ति में कमी दर्शाता है। तथापि, अनुकूल

बाजार मनोभावों के कारण, जून 2010 से भारत को आने वाले पूंजी प्रवाह बढ़े, जैसा कि उच्चतर पोर्टफोलियों प्रवाहों और बड़े बाह्य वाणिज्यिक उधारियों के अनुमति के साथ बाह्य सहायता में परिलक्षित होता है। भारत की सुदृढ़ वृद्धि संभावना तथा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं द्वारा मौद्रिक निकासी की संभाव्यता में देरी को देखते हुए, पूंजीगत अंतर्वाहों में वृद्धि की आशा है, जिसका प्रबंधन पहले की तरह करना होगा। इस प्रकार, वर्ष 2010-11 के लिए भुगतान संतुलन की संभावना यह सुझाती है कि उच्चतर चालू खाता घाटा होने के बावजूद उच्चतर पूंजी प्रवाह, पर्याप्त आरक्षित निधियों और एक लचीली विनिमय दर बाह्य क्षेत्र की चुनौतियों का प्रबंधन करने में सहायता करेगी।

VII. समग्र मूल्यांकन

II.7.1 समग्रतः वर्ष 2009-10 के दौरान समष्टि-आर्थिक गतिविधियों ने बाह्य और आंतरिक दोनों आघातों के प्रति अर्थव्यवस्था की आघात-सहनीयता और साथ ही आर्थिक मंदी की स्थिति से तेजी से उबरने की क्षमता दर्शायी। देशी नीतिगत उत्प्रेरणा, मौद्रिक और राजकोषीय दोनों, ने रिकवरी के संवेगों को तीव्र करने में अपना योगदान दिया। तथापि, वर्ष की दूसरी छमाही में समय रहते उत्प्रेरणा से निकासी की पहल, निकट अवधि में मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के साथ ही साथ मध्यावधि में उच्च धारणीय वृद्धि को समर्थन देने में इसके महत्व को स्वीकार करते हुए, की गई । अंतर-क्षेत्रगत सहबद्धता के आधार पर किया गया मूल्यांकन यह सुझाता है कि वर्षा में कमी के परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में आई किसी प्रकार की कमजोरी का उद्योग और सेवाओं की वृद्धि की संभावनाओं पर पड़ने वाला प्रभाव समय के साथ कम हो गया है। तथापि, कृषि वृद्धि मुद्रास्फीति और ग्रामीण मांग की स्थितियों पर इसके प्रभाव के दृष्टिकोण से उल्लेखनीय बनी हुई है।

II.7.2 रिकवरी का प्रबंधन करने में मौद्रिक नीतिगत उपायों को संचारण संबंधी सामान्य कमजोरियों का सामना करना पड़ा, हालांकि रिज़र्व बैंक द्वारा बनाई गई पर्याप्त चलनिधि की स्थितियों के कारण वित्तीय प्रणाली में चलनिधि संबंधी किसी भी प्रकार की चिंता का निवारण करने में मदद मिली। बैंक और गैर-बैंकिंग दोनों स्रोतों से संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता ने भी रिकवरी के दौरान वास्तविक गतिविधियों का वित्तीयन सुनिश्चित किया। मौद्रिक नीति के संचारण में मौजूद पश्चता के साथ, उधार दरें धीरे-धीरे कम होने लगीं और वर्ष की दूसरी छमाही में निजी क्षेत्र से ऋण की मांग में भी रिकवरी आई।

II.7.3 वैश्विक संकट से उत्पन्न संक्रमण की अनुक्रिया में अपनाया गया विस्तारवादी राजकोषीय रवैया जारी रहने से रिकवरी पर निजी उपभोग की मांग में हुई गिरावट के मंदकारी प्रभाव को आंशिक रूप से प्रतितुलित करने में मदद मिली। तथापि, राजकोषीय असंतुलनों के मौजूद रहने पर वे मुद्रास्फीति की स्थिति, संभाव्य उत्पादन और बाह्य संतुलन की स्थितियों के लिए जोखिम उत्पन्न कर सकते हैं। वर्ष 2010-11 के लिए केन्द्रीय बजट में मध्यावधि राजकोषीय समेकन योजना के साथ राजकोषीय निकासी की शुरुआत की घोषणा की गई। 3जी/बीडब्ल्यूए स्पेक्ट्रम की नीलामी से होने वाली प्राप्तियां, जो प्रत्याशित राशि से लगभग तिगुनी बढ़ गईं, 2010-11 के लिए अनुपूरक मांग अनुदान के पहले बैच में दिखाए गए अतिरिक्त व्यय के कारण तीव्र राजकोषीय सुधारों में अपना योगदान नहीं दे सकेंगी। जून 2010 में किया गया पेट्रोल मूल्यों का अविनियमन और अन्य पेट्रोलियम उत्पादों के मूल्यों में की गई वृद्धि, हेडलाइन मुद्रास्फीति पर निकटवर्ती समय में दबाव होने के बावजूद, आगे चलकर राजकोषीय स्थिति पर पड़ने वाले तनाव को सहज बनाएगी।

II.7.4 वर्ष की दूसरी छमाही में प्रमुख समष्टि-आर्थिक चिंताएं सामान्य मुद्रास्फीति को बढ़ा रही थीं, जिससे मुद्रास्फीति को नियंत्रित रखने पर अधिक ध्यान देने के साथ ही मौद्रिक नीति के जरिए प्रबंध किए जाने वाले विभिन्न उद्देश्यों के भारों में पुनःसंतुलन करने की आश्यकता महसूस हुई। हालांकि, मुद्रास्फीति पर दबाव का प्रारंभिक स्रोत मानसून में कमी के चलते खराब आपूर्ति के कारण उत्पन्न होने वाले आघात थे, तथापि सापेक्ष मूल्य परिवर्तकों में कमी के साथ ही साथ मुद्रास्फीति में दृढ़ता के प्रमाण ने मौद्रिक नीतिगत कार्रवाइयों का उपयोग करना आवश्यक बना दिया। मुद्रास्फीति पर निरंतर और अक्सर दबाव उत्पन्न करने वाली आपूर्ति पक्ष की संरचनागत बाधाओं को दूर करने की आवश्यकता है ताकि निम्न मुद्रास्फीति का दौर सुनिश्चित करने की क्षमता को बढ़ाया जा सके।

II.7.5 वैश्विक गतिविधियों में छिटपुट अनिश्चितताओं को दर्शाते हुए बीच-बीच में मौजूद उतार-चढ़ाव के बावजूद वित्तीय

बाज़ार अपनी बढ़ती हुई गतिविधियों के साथ सामान्य रूप से कार्य करते रहे, जो तीव्रतर रिकवरी सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक था। तथापि, वित्तीय स्थिरता के ढांचे को और अधिक मजबूत बनाने और गहन वित्तीय बाजारों के विकास को संवर्धित करने के लिए आगे चलकर उन पर निरंतर नीतिगत फोकस करना होगा। वैश्विक संकट के कारण निर्यातों में आई कमी और निवल पूंजी बहिर्वाह से बाह्य संतुलन की जो स्थिति दबाव में आ गई थी उसमें वर्ष के दौरान निर्यात में आई सकारात्मक वृद्धि और पूंजी प्रवाहों में आई बहाली से सुधार दृष्टिगत हुआ। उच्चतर चालू खाता घाटा ने भी विदेशी पूंजी के बेहतर अवशोषण से रिकवरी में अपना योगदान दिया। अस्थिरता के संभाव्य स्रोत और उच्चतर वृद्धि तथा उत्पादकता के साधन के रूप में पूंजीगत प्रवाहों के दुहरे प्रभावों को देखते हुए, उनका प्रबंधन करना एक प्रमुख चुनौती बना रहेगा।

II.7.6 इस प्रकार, जहाँ वर्ष के आरंभ में तेज और सुदृढ़ रिकवरी सबसे बड़ी समष्टि-आर्थिक चिंता का विषय था, वहीं वर्ष के अंत तक उस चिंता में उल्लेखनीय गिरावट आई, परंतु उच्च और सामान्यीकृत मुद्रास्फीति के रूप में उसी प्रकार की अशांतकर चिंता उभर आई है। मौद्रिक सख्ती के जरिए मुद्रास्फीति की चुनौती का सामना करने में, ब्याज दर संवेदी अत्यधिक पूंजी अंतर्वाहों को आकर्षित करने के रूप में संबद्ध परिणामों और पूंजी की लागत बढ़ने से रिकवरी को होनेवाले नुकसान को ध्यान में रखना होगा, जो रिकवरी के लिए मौद्रिक नीतिगत उत्प्रेरणा को अनवाइंड करने के प्रति रिज़र्व बैंक के सुविचारित दृष्टिकोण में दिखाई दिया।